

हिन्दुस्तानी एकेडेमी पुस्तकालय
इलाहाबाद

वर्ग संख्या..... ८११.२१०६

पुस्तक संख्या..... भग।क

क्रम संख्या..... १२७२५

11/11

पञ्चमः,

‘द्वितीयशतश्रीमान्’

को

सुमनोदय -

माधव उपाध्याय

७. ७. ६२

कबीर के 'राम' को

कबीर-काव्य का भाषाशास्त्रीय अध्ययन

० ०

प्रयाग विश्वविद्यालय की डी० फिल० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध

० ०



डॉ० भगवत प्रसाद दुबे

० ०

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-६

© १९६६, डॉ० भगवत प्रसाद दुवे

मूल्य : पन्द्रह रुपए

प्रथम संस्करण, १९६६

० ०

आवरण : नारायण

० ०

प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस

२/३५, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६

मुद्रक : शक्तिपुत्र मुद्रणालय, पंजाबी बाग, दिल्ली-२६

दो शब्द

हिन्दी संत साहित्य के कवियों की भाषा के अध्ययन के समय अनेक समस्याएँ सामने आती हैं, क्योंकि संतों की रचनाओं की परम्परा बहुत समय तक मौखिक चलती रही फलस्वरूप उनमें परिवर्तन भी होता रहा तथा मिश्रण भी। सौभाग्य से महात्मा कबीरदास की कृति का रूप अब बहुत कुछ निश्चित हो चुका है, अतः अब समय आ गया था कि उनकी कृतियों का भाषागत अध्ययन किया जाता। प्रस्तुत ग्रंथ में डॉ० भगवत प्रसाद दुवे ने यही प्रयास सफलता के साथ किया है।

डॉ० दुवे ने अपने अध्ययन का मूलधार डॉ० पारसनाथ तिवारी द्वारा सम्पादित 'कबीर-ग्रंथावली' को बनाया है। कबीरदास की रचनाओं का यह संस्करण निःसन्देह सबसे अधिक प्रमाणिक है। मुख्य ग्रंथ में डॉ० दुवे ने कबीर की भाषा की ध्वनि, संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, क्रिया, अव्यय, उपसर्ग, प्रत्यय, सन्धि, समास आदि सभी अंगों का अन्यन्त वैज्ञानिक और विस्तृत विश्लेषण किया है।

अंतिम अध्याय में डॉ० दुवे ने जो निष्कर्ष दिए हैं वे अत्यन्त रोचक हैं। सर्वाधिक प्रयोगों की दृष्टि से कबीरदास की रचनाओं की मूलधार बोली ब्रज है—अवधी, भोजपुरी, खड़ी बोली आदि नहीं। मध्यदेश की बोलियों की ऐतिहासिक परम्परा को देखते हुए यह स्वाभाविक ही है। हिन्दी प्रदेश के बाहर गुजरात, महाराष्ट्र, मिथिला तथा बंगाल तक ब्रजभाषा का प्रभाव फैल चुका था। यद्यपि मूलधार बोली के रूप में उन्होंने ब्रजभाषा को अपनाया किन्तु साथ ही मध्यप्रदेश में विकसित हो रही अन्य प्रधान बोलियों से भी उनकी भाषा प्रभावित हुई। इनमें खड़ीबोली मुख्य थी। खड़ीबोली के अतिरिक्त कुछ मिश्रण राजस्थानी, पंजाबी तथा अवधी का भी मिलता है। भोजपुरी रूपों के प्रयोग बहुत कम पाए जाते हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि "कबीर-ग्रंथावली की भाषा ब्रज है जिसमें पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी की बोलियों के रूपों का सहायक रूप में प्रयोग हुआ है।"

डॉ० दुवे के इस महत्वपूर्ण अध्ययन का स्वागत करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। वे बधाई के पात्र हैं।

“श्री चन्द्रालोक”

इलाहाबाद

३०-११-६८

धीरेन्द्र वर्मा

© १९६९, डॉ० भगवत प्रसाद दुवे

मूल्य : पन्द्रह रुपए

प्रथम संस्करण, १९६९

० ०

आवरण : नारायण

० ०

प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस

२/३५, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६

मुद्रक : शक्तिपुत्र मुद्रणालय, पंजाबी बाग, दिल्ली-२६

दो शब्द

हिन्दी संत साहित्य के कवियों की भाषा के अध्ययन के समय अनेक समस्याएँ सामने आती हैं, क्योंकि संतों की रचनाओं की परम्परा बहुत समय तक मौखिक चलती रही फलस्वरूप उनमें परिवर्तन भी होता रहा तथा मिश्रण भी। सौभाग्य से महात्मा कबीरदास की कृति का रूप अब बहुत कुछ निश्चित हो चुका है, अतः अब समय आ गया था कि उनकी कृतियों का भाषागत अध्ययन किया जाता। प्रस्तुत ग्रंथ में डॉ० भगवत प्रसाद दुवे ने यही प्रयास सफलता के साथ किया है।

डॉ० दुवे ने अपने अध्ययन का मूलाधार डॉ० पारसनाथ तिवारी द्वारा सम्पादित 'कबीर-ग्रंथावली' को बनाया है। कबीरदास की रचनाओं का यह संस्करण निःसन्देह सबसे अधिक प्रमाणिक है। मुख्य ग्रंथ में डॉ० दुवे ने कबीर की भाषा की ध्वनि, संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, क्रिया, अव्यय, उपसर्ग, प्रत्यय, सन्धि, समास आदि सभी अंगों का अन्यन्त वैज्ञानिक और विस्तृत विश्लेषण किया है।

अंतिम अध्याय में डॉ० दुवे ने जो निष्कर्ष दिए हैं वे अत्यन्त रोचक हैं। सर्वाधिक प्रयोगों की दृष्टि से कबीरदास की रचनाओं की मूलाधार बोली ब्रज है—अवधी, भोजपुरी, खड़ी बोली आदि नहीं। मध्यदेश की बोलियों की ऐतिहासिक परम्परा को देखते हुए यह स्वाभाविक ही है। हिन्दी प्रदेश के बाहर गुजरात, महाराष्ट्र, मिथिला तथा बंगाल तक ब्रजभाषा का प्रभाव फैल चुका था। यद्यपि मूलाधार बोली के रूप में उन्होंने ब्रजभाषा को अपनाया किन्तु साथ ही मध्यप्रदेश में विकसित हो रही अन्य प्रधान बोलियों से भी उनकी भाषा प्रभावित हुई। इनमें खड़ीबोली मुख्य थी। खड़ीबोली के अतिरिक्त कुछ मिश्रण राजस्थानी, पंजाबी तथा अवधी का भी मिलता है। भोजपुरी रूपों के प्रयोग बहुत कम पाए जाते हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि “कबीर-ग्रंथावली की भाषा ब्रज है जिसमें पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी की बोलियों के रूपों का सहायक रूप में प्रयोग हुआ है।”

डॉ० दुवे के इस महत्वपूर्ण अध्ययन का स्वागत करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। वे बधाई के पात्र हैं।

“श्री चन्द्रालोक”

इलाहाबाद

३०-११-६८

धोरेन्द्र वर्मा

प्राक्कथन

रांम के दास और हिन्दी साहित्य में एक स्वतंत्र एवं महत्वपूर्ण व्यक्तित्व लेकर अवतरित होने वाले संत तथा महात्मा कबीरदास की जीवनी, उनके व्यक्तित्व, उनके साहित्य एवं विभिन्न वर्ण्य विषयों के सम्बन्ध में आलोचकों द्वारा अनेक बार और अनेक प्रकार से विवेचन किया गया । कुछ बातों को लेकर 'ऊहापोह' भी की गई । कबीर-काव्य की भाषा को काव्य-कला के कृत्रिम उपकरणों से सुसज्जित न देखकर उसे काव्योचित भाषा तथा (भाषा के ही आधार पर) उनके कवि-व्यक्तित्व को, स्वीकार करने में संकोच प्रकट किया गया । मध्यकालीन कविरत्नों में कबीर की गणना विवादास्पद हो गई । किन्तु, बाद के अध्ययनों में भिन्न दृष्टिकोण से मूल्यांकन होने पर तुलसी और सूर के बाद कबीर का भी नाम लिया जाने लगा; साथ ही स्वानुभूति की सच्ची अभिव्यक्ति करने वाले कबीर को हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठ कवि भी स्वीकार किया गया ।

परन्तु, इतना होने पर भी, भाषाशास्त्रीय दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध और अकृत्रिम कबीर की काव्य-भाषा के प्रति पूर्वाग्रह नहीं छोड़ा गया, फलस्वरूप उसे सधुक्कड़ी, खिचड़ी, पंचमेल, अपरिष्कृत आदि नामों से सम्बोधित किया गया । कुछ लोगों द्वारा भिन्न दृष्टिकोण से भी परखने का प्रयत्न किया गया, परिणामतः उस भाषा के सम्बन्ध में पूरबी, भोजपुरी, बिहारी से प्रभावित, पूर्वी-मिश्रित ब्रज आदि निर्णय किए गए । उक्त प्रकार के निर्णयों में या तो कोई पूर्वाग्रह था अथवा भाषाशास्त्रीय पद्धति से किसी इतिहाससम्मत, न्यायपूर्ण, वैज्ञानिक और अपेक्षित विस्तृत अध्ययन का अभाव । कबीर की रचनाओं के प्राप्त अप्रामाणिक पाठों के आधार पर व्याकरणिक रूपांशों के केवल आंशिक उदाहरणों अथवा प्रयोगों को देखकर ही उपर्युक्त निर्णय किए गए थे । अतएव, कबीर की कृतियों की अकृत्रिम, समृद्ध किन्तु विवादपूर्ण भाषा का बिना किसी पूर्वाग्रह के वस्तुपरक तथा भाषाशास्त्रीय विश्लेषण एवं विवेचन करते हुए इतिहाससम्मत, वैज्ञानिक और न्यायपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त करने के उद्देश्य से, मैंने अपने शोध-प्रबंध (डी०फिल०) के लिए कबीर-काव्य का भाषाशास्त्रीय अध्ययन (लिग्विस्टिक स्टडी आव् कबीर्स वर्क्स) विषय पर कार्य करना आवश्यक समझा ।

वस्तुतः, उक्त विषय पर कार्य करने के लिए अधिक उत्साह इसलिए भी उत्पन्न हुआ कि कबीर की कृतियों का, प्राप्त समस्त प्रतियों के आधार पर तथा पाठा-लोचन के आधुनिक सिद्धान्तों के आधार पर, डॉ० पारसनाथ तिवारी द्वारा सम्पादित कबीर-ग्रंथावली नाम से एक अपेक्षित पाठ सुलभ था। यह पाठ शोध-कार्य प्रारम्भ करने के लिए प्राप्त सभी पाठों की अपेक्षा (वैज्ञानिक पद्धति से सम्पादित होने के कारण) अधिक प्रामाणिक था; दूसरे, यह हमारे ही विश्वविद्यालय (प्रयाग) में (डी० फिल्० उपाधि के लिए स्वीकृत) सम्पादित पाठ था, अतएव प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के लिए इसी पाठ को अध्ययन का आधार बनाना स्वाभाविक था। इस संदर्भ में इतना और उल्लेखनीय है कि कबीर-ग्रंथावली के उक्त पाठ को ही आधार बनाकर कबीर-काव्य का भाषाशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करने का सुभाव मेरे गुरुजनों—प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के निर्देशक डॉ० उदयनारायण तिवारी (सम्प्रति, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, जबलपुर विश्वविद्यालय), डॉ० बाबूराम सक्सेना (भूतपूर्व उपकुलपति, रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर) तथा डॉ० धीरेन्द्र वर्मा (भूतपूर्व उप-कुलपति, जबलपुर विश्वविद्यालय)—ने दिया था।

इस प्रकार सम्पादन की वैज्ञानिकता, पाठ की सुलभता, गुरुजनों के सुभाव आदि को दृष्टि में रखते हुए क० ग्रं० के पाठ को ही प्रस्तुत अध्ययन के लिए (पूर्णतः) आधार बनाया गया। शोध-प्रबन्ध के समस्त विवेचनों में उक्त पाठ का उपयोग ज्यों का त्यों किया गया है, जैसे—डू और डू को (नीचे की) बिन्दी से युक्त रूप में ही स्वीकार किया गया है यद्यपि कुछ लोगों के अनुसार बिन्दी का प्रयोग—कबीर-काल के बहुत बाद होने लगा होगा।

यह कहना कि उक्त पाठ के निर्धारण में पूर्वी प्रतियों का उपयोग न करके केवल 'पश्चिमी और राजस्थान' की प्रतियों के आधार पर सम्पादन किया गया है, जिससे क० ग्रं० की भाषा के रूप पर प्रभाव पड़ा होगा, उचित नहीं प्रतीत होता। इस सम्बन्ध में क०ग्रं० के सम्पादन में प्रयुक्त प्रतियों की सूची देख लेना पर्याप्त होगा अथवा (इस सम्बन्ध में) सम्पादक से उत्तर की अपेक्षा करना समीचीन होगा। जहाँ तक मुझे ज्ञात है, इसके सम्पादन में तब तक प्राप्त सभी प्रतियों का उपयोग किया गया है।

क० ग्रं० का भाषाशास्त्रीय अध्ययन करने के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि लेखन-शैली, ध्वनि-प्रक्रिया, रूप-रचना तथा अपभ्रंशकालीन प्रभाव (संयुक्त पद—जैसे—संज्ञापद—हृत्थ, हट्ट, आदि, विशेष—अघट्ट, समरत्थ आदि, क्रिया—अत्थि, खट्ट, गरत्थ आदि) आदि की जो विशेषताएँ उसमें मिलती हैं वे १५वीं से १६वीं शती (जिसे हम कबीर-ग्रंथावली का रचना-काल मान सकते हैं) के व्याकरणिक रूपों के

अनुरूप हैं। इस प्रकार भाषा की दृष्टि से भी उक्त पाठ प्रामाणिक प्रतीत होता है।

यद्यपि सम्पूर्ण अध्ययन पूर्वोक्त पाठ पर ही आधारित है फिर भी स्वर्गीय डॉ० विश्वनाथ प्रसाद तथा अन्य विद्वानों के बार-बार के सुझावों एवं प्रसंग, व्याकरण, भाषा-प्रकृति, अर्थ आदि की दृष्टि से अन्य पाठों अथवा पाठान्तरों पर भी विचार करते हुए उनका यथास्थान (पाद-टिप्पणी में) उल्लेख कर दिया गया है।

मुख्य अध्ययन प्रारंभ करने के पहले वर्णनात्मक भाषाशास्त्र के अपेक्षित अध्ययन के अतिरिक्त क० ग्रं० की टीका करनी पड़ी, क्योंकि शब्दार्थ का सम्यक् ज्ञान हुए बिना एक ही समस्वनिक (होमोफोनस) पदग्राम (-ऐ, -अ) हिं आदि) का स्थितिजन्य मूल्य (पोजिशनल वैल्यू) के कारण अथवा भिन्नार्थता के कारण विभिन्न कारकों अथवा काल-रचना (पुरुष आदि) के अर्थ-द्योतन के लिए प्रयुक्त होने का निर्णय कर पाना कठिन होता। इसी प्रकार उ० पु० सर्वनाम में और अधिकरण-कारकीय परसर्ग में, म० पु० सर्वनाम तें और करण-अपादान कारकीय परसर्ग तें, वर्तमानकालिक कृदन्तीय रूप करत और वर्तमान क्रिया-द्योतक रूप करत आदि में भेद कर पाना असंभव होता। क० ग्रं० की टीका, प्राप्त टीकाओं तथा डॉ० माताप्रसाद गुप्त (संप्रति, निदेशक, क० मु० हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा) की सहायता से की गई।

टीका के बाद मुख्य अध्ययन के लिए क० ग्रं० (पद, साखी, रमैनी और चौतीसी रमैनी) के व्याकरणिक रूप-संबंधी २७०६६ (सत्ताइस हजार उनहत्तर) कार्ड बनाए गए। इतने अधिक कार्डों को व्यवस्थित रखते हुए कार्य करना श्रम-साध्य और समय-साध्य हो गया।

शोध-प्रबंध की विवेच्य विषय-सूची के संबंध में डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के सामयिक सुझाव “ जो आवश्यक और विशेष उल्लेखनीय बात हो उसी को अपने शोध-प्रबंध में स्थान दो” के अनुसार एवं अपने लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए प्रस्तुत शोध-प्रबंध को शब्द-समूह, वाक्य, अर्थ तथा व्युत्पत्ति आदि विभिन्न विषयों पर विचार करके भानुमती का पिढारा नहीं बनाया गया है, अपितु, कुछ विशिष्ट तथा आवश्यक विषयों के विवेचन तक ही सीमित रखा गया है।

पहले अध्याय में ध्वनि विचार के अन्तर्गत क० ग्रं० में प्राप्त लिपिचिह्नों के साथ कुछ विशिष्ट लिपिचिह्नों का विवेचन किया गया है जो तत्कालीन (क० ग्रं० के रचना-काल) लेखन-शैली की विशेषताओं को प्रकट करते हैं। जैसे—र लिपिचिह्न का (रेफ) रूप क० ग्रं० के कुछ शब्दों में किसी व्यंजन से संयुक्त पूर्ववर्ती

र (रं+व्यंजन) विपर्यासित होकर पूर्ववर्ती व्यंजन के साथ परवर्ती अंश की तरह संयुक्त हो जाता है—उदाहरणार्थ—कंदर्प(कंदर्प), ग्रभवास (गर्भवास), गंधर्व (गंधर्व) आदि। इसी प्रकार परवर्ती र (व्यंजन+र) परवर्ती व्यंजन के साथ पूर्ववर्ती अंश की तरह प्रयुक्त हुआ है—जैसे—भर्म (भ्रम)। क० ग्रं० में अनुस्वार(—) का अद्भुत प्रयोग मिलता है। उसके प्रयोग की सभी विधियों का नियमबद्ध विवेचन करना आवश्यक समझा गया है। कुछ उदाहरणों में एक ही शब्द में कई प्रकार की वर्तनी का प्रयोग मिलता है, अर्थात् एक ही शब्द की वर्तनी में बहुत भिन्नता मिलती है। अतएव, इसका भी संक्षेप में उल्लेख किया गया है; किन्तु उक्त ग्रन्थ में प्रयुक्त ध्वनियों की प्रकृति के संबंध में (लिखित रूप ही प्राप्त होने के कारण) निश्चयपूर्वक विचार करना संभव नहीं था, इस कारण उस पर विचार नहीं किया गया। केवल स्वर और व्यंजन के वितरण, उनके संयोग तथा आक्षरिक प्रणाली (सिलेबिक पैटर्न) पर ही विचार किया गया है। क० ग्रं० में १०३ प्रकार के स्वर-संयोग प्राप्त होते हैं। इतने अधिक स्वर-संयोगों के प्राप्त होने पर भी उनका उल्लेख न करना एक महत्वपूर्ण तथ्य की उपेक्षा होती। इसी प्रकार आधार ग्रंथ में एक स्वतंत्र शब्द में एक से पाँच अक्षर तक का प्रयोग मिलता है जब कि हिन्दी साहित्य के अन्य ग्रंथों में अधिकतर एक स्वतंत्र शब्द में ४ अक्षर तक के ही प्रयोग मिलते हैं। अतएव, इसका उल्लेख करना भी आवश्यक प्रतीत हुआ।

दूसरे अध्याय में पद-विचार के अन्तर्गत संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, क्रिया, क्रिया विशेषण तथा अव्यय, रचनात्मक उपसर्ग तथा प्रत्यय, संधि, समास और पुनरुक्ति का विस्तृत विवेचन नवीन, किन्तु वैज्ञानिक पद्धति से किया गया है; साथ ही पद-रचना-संबंधी प्रत्येक प्रयोगावृत्ति का उल्लेख यथासंभव सही रूप में किया गया है। यद्यपि रचनात्मक उपसर्ग तथा प्रत्यय, संधि, समास और पुनरुक्ति का विवेचन मेरे उद्देश्य की दृष्टि से अधिक आवश्यक नहीं था फिर भी शब्द-रचना से संबंधित और रूप-रचना में सहायक समझकर तथा डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के सुभाव का अनुसरण करते हुए उन पर भी विचार किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि क्रिया के विवेचन में कीजिए, दिया, पावा आदि रूपों में—-ज-, -य-, -व- आदि श्रुतियों के आगम को विशेष कारण से सन्ध्यक्षर (यूफोनिक ग्लाइड) स्वीकार किया गया है। कुछ विद्वानों के सुभाव के अनुसार -(अ) वा, -इया, -इया, -उवा, -उआ, -इवा आदि प्रत्ययों में केवल -आ प्रत्यय ही उल्लेखनीय है, शेष रूप या तो छद्म-प्रक्रिया अथवा संधि-प्रक्रिया पर आधारित हैं। इस संबंध में इतना निवेदन कर देना पर्याप्त होगा कि उपर्युक्त प्रत्ययों का विभाजन मात्र वर्णनात्मक भाषाशास्त्रीय पद्धति पर ही किया गया है। छन्द तथा संधि-प्रक्रियाओं का उल्लेख भी स्वतंत्र रूप से यथास्थान कर दिया गया है।

अध्ययन-पद्धति की दृष्टि से वर्णनात्मक (डिस्क्रिप्टिव) अथवा अमरीकी पद्धति का अनुसरण किया गया है, किन्तु एक लिखित ग्रंथ की भाषा के अध्ययन के लिए आवश्यकतानुसार ऐतिहासिक भाषाशास्त्र की यूरोपीय पद्धति से भी सहायता ली गई है।

तीसरे अध्याय में कबीर-ग्रंथावली की भाषा का निर्णय किया गया है। उसमें कई बोलियों के रूप प्रयुक्त हुए हैं। उनमें से कौन सी बोली उसकी मूलाधार बोली (बेसिक डाइलेक्ट) है और किसका मिश्रण मात्र हुआ है, इसका निर्णय करने के लिए प्रत्येक व्याकरणिक रूप (जिसका उल्लेख करना निर्णय के लिए आवश्यक समझा गया) की प्रयोगावृत्तियों (फ्रेक्वेंसीज) का उल्लेख संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और क्रियाविशेषण तथा अव्यय के विभिन्न अध्ययनों के साथ ही किया गया है। प्रयोगावृत्ति-संबन्धी किसी भी गलत सूचना से बचने और मूलाधार बोली का सही निर्णय प्राप्त करने के उद्देश्य से ही ऐसा करना उपयुक्त समझा गया।

क० ग्रं० में प्रयुक्त विभिन्न बोलियों के दो प्रकार के रूप प्राप्त होते हैं—(१) मिश्रित रूप—जो दो, तीन, चार, पाँच या कई बोलियों में समान रूप से प्रयुक्त होते हैं (जैसे - उ०पु० सर्वनाम हंम खड़ी, ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि बोलियों में समान रूप से प्रयुक्त होता है)। (२) विशिष्ट या अमिश्रित रूप—जो बोली विशेष में ही प्रयुक्त होता है (जैसे—उ०पु०मू०रू०ए०व० हों केवल ब्रज में और हउं केवल अवधी में प्रयुक्त मिलता है)। इन दोनों प्रकार के बोलीगत रूपों और उनकी प्रयोगावृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन १५ सारणियों (टेबुल्स) में प्रस्तुत किया गया है, किन्तु इस प्रकार के अध्ययन में केवल खड़ी, ब्रज, राजस्थानी, अवधी और भोजपुरी के रूपों पर ही विचार किया गया है, अन्य बोलियों के रूपों पर अत्यंत सीमित प्रयोग मिलने के कारण विचार नहीं किया गया—जैसे—यद्यपि भविष्यकालिक क्रिया की स रूप वाली (-असी, जैसे-जासी) क्रियाएँ पंजाबी में प्रयुक्त होती हैं परन्तु ऐसे रूपों की संख्या कुल १४ है, इतने कम रूप क०ग्रं० की आधार-भाषा के निर्णय के लिए बहुत सहायक नहीं हो सकते, अतएव पंजाबी के लिए सारणियों में अलग शीर्षक बनाना आवश्यक नहीं समझा गया। दूसरे, यह भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि उक्त रूप पंजाबी के ही हैं, इनका प्रयोग राजस्थानी, पुरानी खड़ीबोली, पश्चिमी हिन्दी की वांगरू बोली आदि में भी देखा जा सकता है और यह भी संभव है कि ये रूप कबीर के समय मध्यदेश की बोलियों में प्रयुक्त भी होते रहे हों। इसी प्रकार अन्य विवादास्पद, सीमित और (अपने लक्ष्य के लिए) अनुपयोगी बोली-रूपों पर भी उक्त सारणियों में विचार नहीं किया गया है। इस प्रकार व्याकरणिक रूपों की प्रयोगावृत्तियों के सापेक्षिक आधिव्य के आधार पर क० ग्रं० की मूलाधार बोली का निर्णय किया गया है। इस प्रक्रिया में बोलीगत विशिष्ट रूपों का आधिव्य ही अधिक निर्णयात्मक

समझा गया है। विभिन्न सारणियों द्वारा तुलनात्मक अध्ययन करने में न केवल किसी एक व्याकरणिक रूप का ही प्रयोगाधिक्य देखकर अपितु सभी व्याकरणिक रूपों (संज्ञा, विशेष० आदि) में बोलीगत रूपों का आधिक्य देखकर निर्णय किया गया है।

यह स्पष्ट है कि १५वीं १६वीं शती की काव्य-भाषाओं में प्राप्त मिश्रित और अमिश्रित रूपों का अलग-अलग निर्णय करना अत्यंत कठिन कार्य है; क्योंकि, एक तो मिश्रण अद्भुत ढंग से हुए हैं, दूसरे भाषा में अनेकरूपता है, तीसरे, अभी तक इस सम्बन्ध में वैज्ञानिक अध्ययन भी नहीं हो पाया है। प्रस्तुत अध्ययन में मिश्रित-अमिश्रित रूपों का निर्णय करने के लिए हिन्दी भाषा और उसकी बोलियों से सम्बन्धित विभिन्न व्याकरण-ग्रंथों का सहारा लेना पड़ा है जिनका उल्लेख यथास्थान कर दिया गया है और साथ ही तत्संबंधी अधिकृत विद्वानों के सम्पर्क द्वारा बोलीगत रूपों का निर्धारण किया गया है। इस प्रकार का यह पहला प्रयास है।

व्याकरणिक रूपों के प्रयोगाधिक्य के आधार पर मूलाधार बोली का निर्णय करते हुए बोली विशेष को ही आधार बनाकर क० ग्रं० की रचना करने के औचित्य पर भी प्रकाश डाला गया है।

इस प्रकार क० ग्रं० का बिना किसी पूर्वाग्रह के वस्तुपरक और भाषाशास्त्रीय विश्लेषण एवं विवेचन करते हुए उसकी मूलाधार बोली का मौलिक किन्तु वैज्ञानिक, इतिहाससम्मत और न्यायपूर्ण निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न किया गया है।

अपने शोध-प्रबन्ध से सम्बन्धित कुछ शोध-कार्यों अथवा अन्य कार्यों का उल्लेख भी आवश्यक प्रतीत होता है। आगरा विश्वविद्यालय की डी० लिट० उपाधि के लिए स्वीकृत, डॉ० प्रेमनारायण शुक्ल का शोध-प्रबंध संत-साहित्य (भाषा-परक अध्ययन), के संबंध में मात्र इतना उल्लेख कर देना पर्याप्त होगा कि यह अध्ययन उसी पुरानी परम्परा (जिसका उल्लेख प्रारम्भ में किया जा चुका है) के अनुसार संतों के साहित्य-संबंधी (अप्रामाणिक) पाठों से कुछ उदाहरण प्रस्तुत करके किया गया है। इसमें भाषाशास्त्रीय पद्धति के अनुसरण तथा किसी भी वैज्ञानिक निर्णय का अभाव है। विद्वान लेखक के इस अध्ययन से संतों अथवा कवीर की काव्य-भाषा के संबंध में कुछ भी निर्णय कर पाना असंभव है।

मेरे शोध-प्रबंध के विश्वविद्यालय में प्रस्तुत होने के कुछ ही दिन पूर्व (डॉ० पारसनाथ तिवारी की क० ग्रं० पर आधारित), श्री माताबदल जायसवाल द्वारा लिखित 'कवीर की भाषा' पुस्तक प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक के संबंध में मैंने अपनी टंकित प्रति में विस्तार के साथ लिखा था परन्तु प्रकाशन के समय उसे अनाव-

श्यक समझकर काट दिया है; क्योंकि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरा पूरा शोध-प्रबंध ही उसकी भांतियों की व्याख्या है।

लेखक के अनुसार कबीर-ग्रन्थावली में समस्त छन्दों के समस्त शब्दों या पदों (सहपदों सहित) रूप ७३३० (सात हजार तीन सौ तीस) हैं। (दे० पृ०, १६२) इस संबंध में इतना निवेदन करना चाहता हूँ कि यद्यपि शब्द-समूह पर विचार करना मेरे शोध-प्रबंध का विषय नहीं है; किन्तु समस्त व्याकरणिक रूपों की 'काडों' द्वारा जो अध्ययन-सामग्री मैंने तैयार की उसके अनुसार क० ग्रं० में कुल २७०६६ (सत्ताइस हजार उनहत्तर) व्याकरणिक पद (सहपदों सहित) प्राप्त हुए हैं जिनमें संज्ञा प्रातिपदिकों की सी संख्या २५७४ है और विशेषण (गुणवाचक) प्रातिपदिकों की संख्या ४०१ है, शेष व्याकरणिक पदों और सहपदों का उल्लेख पूरे शोध-प्रबंध में (उनकी सम्पूर्णा संख्या का उल्लेख करते हुए) किया गया है, यहाँ सबका उल्लेख करना व्यर्थ का विस्तार होगा। संज्ञा और विशेषण प्रातिपदिक ही 'कबीर की भाषा' की सूचना को अपूर्ण सिद्ध करने के लिए पर्याप्त कहे जा सकते हैं। तात्पर्य यह कि जहाँ सम्पूर्ण क० ग्रं० के भाषाशास्त्रीय अध्ययन के लिए २७०६६ पदों के आधार पर अध्ययन अपेक्षित था, वहाँ उपर्युक्त पुस्तक में उसके लगभग एक चौथाई पदों के ही आधार पर अध्ययन करते हुए सम्पूर्ण क० ग्रं० के संबंध में निष्कर्ष निकालने का अनपेक्षित प्रयत्न किया गया है। इस संबंध में सामान्य व्यक्ति भी क० ग्रं० के पूर्वोक्त पद (२००), साखी (७४४), रमैनी (२०) और चौतीसी रमैनी (१) के इतने अधिक छन्दों को देखकर यह सरलतापूर्वक कह सकता है कि उसमें ७३३० पदों से कहीं अधिक पद अवश्य प्राप्त हो सकते हैं।

सामग्री की अपूर्णता के कारण 'कबीर की भाषा' के सम्पूर्ण अध्ययन और निष्कर्ष में अनेक प्रकार की असाधारण भूलें हुई हैं—जैसे क० ग्रं० में १०३ प्रकार के स्वर-संयोग मिलते हैं जबकि 'कबीर की भाषा' में केवल ३७ प्रकार के स्वर-संयोगों का ही उल्लेख किया गया है। उसमें दो, तीन और चार स्वरों के संयोगों की संख्या क्रमशः ६०, २२ और १ है जबकि 'कबीर की भाषा' में उनकी संख्या क्रमशः २८, ८ और १ दी गई है (दे० पृ०, २२)।

'कबीर की भाषा' में ११ संज्ञा के रूपात्मक प्रत्ययों, २० परसर्गों, विशेषण-संबंधी अनेक सूचनाओं, ३६ सर्वनामों, ६५ क्रियारूपों तथा ८ मुख्य क्रिया के समान प्रयुक्त सहायक क्रियाओं, ११६ क्रिया विशेषण तथा अव्ययों और अन्य व्याकरणिक रूपों का उल्लेख ही नहीं किया गया है अर्थात् छोड़ दिया गया है (दे० प्रकरण ५, ५ (ख), ६, ७, ८)।

इनके अतिरिक्त अनेक भ्रामक सूचनाओं—प्रयोगावृत्तियों आदि—का उल्लेख

मुद्रणालय
से छपाई

अतएव,
सकें।

को प्रस्तुत

न निश्चयार्थ अन्य पुरुष एक वचन -ऐ प्रत्यय की ६५ आवृत्तियों का गया है जबकि क० अ० में ६८७ आवृत्तियाँ प्राप्त हैं) हुआ है। असावधानी क रूपों को कुछ का कुछ समझ लिया गया है (जैसे—मोरहीं, चेत आदि सर्वनाम पृ०, ६७, ६८; 'तै' परसर्ग को सर्वनाम पृ०, ६८; तोरा, तांनि सर्व० पृ०, १०१, १०५; 'अस' सर्व० को सार्व० विशेष० पृ०, ११५, प्रकार तीन व्यंजनों के संयोग का केवल एक उदाहरण बताया गया है ० में ६ प्राप्त हैं)।

कार अनेक भ्रामक सूचनाओं के आधार पर निकाला गया निष्कर्ष कि, महत्वपूर्ण और न्यायपूर्ण होगा यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है।

में, प्रस्तुत शोध-प्रबंध में जिन गुरुजनों, विद्वानों, संस्थाओं और पुस्तकों। यता मिली है तथा जिनके सहयोग के बिना यह कार्य पूरा नहीं हो नके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना अपना परम कर्तव्य समझता हूँ।

अपने शोध-प्रबंध के निर्देशक डॉ० उदयनारायण तिवारी का कृतज्ञ हूँ कभी हतोत्साहित नहीं होने दिया अन्यथा अपरिहार्य बाधाओं के मध्य र्य पूरा होता।

व में, मेरे शोध-प्रबंध को इस रूपमें प्रस्तुत होने का श्रेय श्रद्धेय र्मा (जो संयोगवश डॉ० उ० ना० तिवारी तथा डॉ० विश्वनाथ प्रसाद परीक्षक भी थे) को है। उन्होंने विवेच्य-विषयों के निर्धारण से लेकर तक सारा निर्देशन करते हुए न केवल अनेक बार अपने बहुमूल्य सुझावों ही किया है अपितु अत्यन्त व्यस्त होने पर भी (मरणासन्न पिता की होने पर भी) उसी समय एक शिष्य का शोध-संबंधी कार्य करके एक तीय गुरु होने का परिचय भी दिया है। उनके सक्रिय सहयोग के कारण श्वास दृढ़ बना रहा। प्रकाशन के समय पुस्तक के लिए दो शब्द का लखकर मुझे बहुत अधिक प्रेरणा और हृदय प्रदान की है। उनके इन के लिए मैं हृदय से अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

बाबूराम सक्सेना और स्वर्गीय डॉ० विश्वनाथ प्रसाद का भी मैं हृदय से उन्होंने 'पाठ' के संबंध में (विशेष रूप से) तथा अन्य सुझाव देकर मेरे खनीय सहायता की।

त संदर्भ में, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्या- का उल्लेख करना अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है। वहाँ के पुस्तकालय। अध्यापकों के अतिरिक्त मुझे विद्यापीठ के निदेशक डॉ० माताप्रसाद गुप्त

तथा डॉ० रमानाथ सहाय (रीडर, भाषाविज्ञान) का अक्थनीय सहयोग मिला। मैं पुस्तकालय के अधिकारियों और विद्यापीठ के प्राध्यापकों का उनकी सहायता के लिए आभारी हूँ। डॉ० गुप्त ने क० ग्रं० के पाठ, उसकी टीका और खड़ीबोली के रूपों के लिए जो सहायता की है और कार्य पूरा करने के लिए जो प्रेरणा दी है उसके लिए मैं उनका ऋणी हूँ। डॉ० रमानाथ सहाय ने निरन्तर दो वर्षों तक अपना अमूल्य किन्तु बहुत समय देकर मेरे कार्य में एक अभिभावक की तरह सहायता की है। उनकी अतिशय सरलता किन्तु कार्य के लिए मीठी 'डाट' द्वारा प्रेरणा सदैव साथ रही है। यह उन्हीं की कृपा का फल है कि रचनात्मक प्रत्यय, संधि, समास और पुनरुक्ति को अति आधुनिक ढंग से प्रस्तुत किया जा सका है। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ।

डॉ० पारसनाथ तिवारी का भी हृदय से कृतज्ञ हूँ जिन्होंने एक वास्तविक अग्रज की भाँति, शोध-कार्य के लिए अनेक बहुमूल्य सुझाव, प्रेरणा और सहयोग देते हुए अनेक प्रकार से सहायता की है।

प्रयाग और काशी विश्वविद्यालयों (जहाँ मुझे सेवा-कार्य करने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ) के उन गुरुजनों और सहयोगियों का आभारी हूँ जिन्होंने मेरे शोध-कार्य में अनेक प्रकार से सहयोग दिया है।

मैं स्वामी बी० एच० बन महाराज (रेक्टर, इंस्टीट्यूट ऑफ़ ओरियण्टल फिलासफी, वृन्दावन) का कृतज्ञ हूँ जिन्होंने शोध-कार्य के अन्तिम दिनों में बहुत अधिक प्रेरणा देकर कार्य पूरा (वहीं पर) करने में सहायता की।

अपने मित्रों डॉ० ब्रजविहारी चौबे, पं० जगतकृष्ण दीक्षित और डॉ० देवीशंकर द्विवेदी का भी आभारी हूँ जिन्होंने अनेक प्रकार से सक्रिय सहयोग देकर कार्य में सहायता की है।

शोध-प्रबन्ध के प्रकाशन के समय मेरे मित्र डॉ० गोविन्द चातक ने अपना अमूल्य समय देकर मुझे बहुत सहयोग दिया है। मैं उनके प्रति विनम्र आभार प्रकट करता हूँ, साथ ही इसी कार्य के निमित्त अपने सहयोगी श्री गणेशशंकर द्विवेदी के सहयोग के लिए धन्यवाद देता हूँ।

शोध-प्रबन्ध १९६६ ई० में प्रयाग विश्वविद्यालय की डी० फिल्ड० उपाधि के लिए प्रस्तुत किया गया था और उसी वर्ष (अन्त में) उपाधि प्राप्त हुई थी। यह अपने मूलरूप (मुख्य भाग) में ही प्रकाशित हो रहा है।

मैं इस शोध-प्रबन्ध के प्रकाशक श्री मलिक (नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली) को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने इसे यथाशीघ्र प्रकाशित किया। 'शक्तिपुत्र

मुद्रणालय' के प्रबन्धकों और कार्य-कर्त्ताओं को भी धन्यवाद देता हूँ जिनकी तत्परता से छपाई का कार्य शीघ्र हो सका।

अत्यन्त सावधानी बरतने के बाद भी 'प्रूफ' की कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं अतएव, साथ में शुद्धि-पत्र भी दिया जा रहा है जिससे पाठक अपनी प्रति सुधार सकें।

यदि भाषाशास्त्र और कबीर-काव्य की भाषा के सम्बन्ध में विद्वान पाठकों को प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ से कोई लाभ हो सका तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

शिवाजी कॉलेज
(दिल्ली विश्वविद्यालय),
कर्मपुरा, नई दिल्ली-१५
मकरसंक्रान्ति, २०२५ वि०
(१४ जनवरी, १९६९ ई०)

भगवत प्रसाद दुबे

विषय-सूची

पृष्ठ

दो शब्द	१
प्राक्कथन	३- १२

पहला अध्याय : ध्वनि-विचार १७-३६

१.१ : स्वर-व्यंजन-लिपिचिह्न	१७- १६
१.३ : लिपिचिह्न-संबंधी विशेष विवरण	१६- २६
१.४ : स्वर	२६- ३२
१.४.१ : स्वर (वितरण)	२६- २७
१.४.३ : स्वर-संयोग (स्वर-गुच्छ)	२७- ३२
१.५ : व्यंजन	३२- ३८
१.५.१ : व्यंजन (वितरण)	३२- ३४
१.५.२ : व्यंजन-संयोग (व्यंजन-गुच्छ)	३४- ३८
१.६ : अक्षर-संरचना (सिलेबिक पैटर्न)	३८- ३९

दूसरा अध्याय : पद-विचार ४०-२३३

२.१ : संज्ञा	४०- ७६
२.१.१ : प्रातिपदिक	४०- ४८
२.१.२ : प्रातिपदिक के दीर्घरूप	४८- ५१
२.१.३ : अवधारण के लिए प्रयुक्त संयोगात्मक रूप	५१
२.१.४ : लिंग-विधान	५१- ५६
२.१.५ : वचन-विधान	५७
२.१.६ : कारक-विधान	५८- ६८
२.१.७ : कारकीय परसर्ग	६८- ७३
२.१.८ : परसर्गवत् प्रयुक्त अन्य परसर्गीय पदावली	७३- ७५
२.१.९ : संयुक्त परसर्ग	७५- ७६

२.२ : विशेषण	७६- ६५
२.२.१ : प्रातिपदिक	७६
२.२.१.१ : गुणवाचक प्रातिपदिक	७६- ७७
२.२.१.२ : सार्वनामिक विशेषण	७८- ८०
२.२.१.३ : संख्यावाचक विशेषण	८०- ८६
२.२.२ : प्रातिपदिकों के दीर्घ और लघुरूप	८६
२.२.३ : अवधारण के लिए प्रयुक्त रूप	८७
२.२.४ : लिंग-विधान	८७- ८९
२.२.५ : वचन	८९- ९१
२.२.६ : कारकीय रूप	९१- ९३
२.२.७ : विशेषण के प्रयोग	९३- ९४
२.२.८ : विशेषण की रचना	९४
२.२.९ : विशेषणों में तुलना	९४- ९५
२.३ : सर्वनाम	९५-१२३
२.३.१ : पुरुषवाचक	९६-१०१
२.३.२ : निश्चयवाचक	१०१
२.३.२.१ : निश्चयवाचक : निकटवर्ती	१०१-१०४
२.३.२.२ : निश्चयवाचक : दूरवर्ती	१०४-१०६
२.३.३ : संबंधवाचक	१०६-१११
२.३.४ : नित्यसंबंधी	११२
२.३.५ : प्रश्नवाचक	११२-११५
२.३.६ : निजवाचक	११५-११७
२.३.७ : आदरवाचक	११७
२.३.८ : अनिश्चयवाचक	११७-११९
२.३.९ : अनिश्चयवाचक सर्वनाम की भाँति प्रयुक्त शब्दावली	११९-१२१
२.३.१० : सार्वनामिक विशेषण	१२१
२.३.११ : संयुक्त सर्वनाम	१२१-१२२
२.३.१२ : संज्ञा के समान प्रयुक्त सर्वनाम...	१२३
२.४ : क्रिया	१२३-१८१
२.४.१ : धातु	१२४-१२५
२.४.२ : वाच्य	१२५-१२६
२.४.३ : कृदंत	१२६-१३०

२.४.४. : काल-रचना	...	१३०
२.४.४.१ : मूलकाल	...	१३०-१५२
२.४.४.२ : संयुक्तकाल	...	१५२
२.४.५ : सहायक क्रिया	...	१५२-१५६
२.४.६ : पूर्वकालिक क्रिया	...	१५६-१५८
२.४.७ : कियार्थक संज्ञा	...	१५८-१६१
२.४.८ : संयुक्त क्रियाएँ	...	१६१-१७८
२.४.९ : नामधातु	...	१७८-१८०
२.४.१० : कर्तृवाचक संज्ञा	...	१८०-१८१
२.५ : क्रियाविशेषण तथा अव्यय	...	१८१-१९७
२.५.१.१ : एक पद वाले (क्रियाविशेषण)	...	१८२-१८६
२.५.१.१.१ : एक पद वाले क्रियाविशेषण : कालवाचक	...	१८२-१८४
२.५.१.१.२ : " स्थानवाचक	...	१८४-१८५
२.५.१.१.३ : " रीतिवाचक	...	१८५-१८६
२.५.१.२ : क्रियाविशेषण के समान प्रयुक्त संयुक्त रूप	...	१८६-१९३
२.५.१.२.१ : क्रियाविशेषण के समान प्रयुक्त संयुक्त रूप :
कालवाचक	...	१८६-१९१
२.५.१.२.२ : " स्थानवाचक	...	१९१-१९२
२.५.१.२.३ : " रीतिवाचक	...	१९२-१९३
२.५.२ : अव्यय	...	१९३-१९७
२.५.२.१ : सामान्य अव्यय	...	१९३-१९६
२.५.२.१.१ : समुच्चयबोधक अव्यय	...	१९३-१९५
२.५.२.१.२ : विस्मयसूचक अव्यय	...	१९५-१९६
२.५.२.२ : परसर्गों के रूप में प्रयुक्त अव्यय पदावली	...	१९६
२.५.२.३ : पादपूरक पदावली	...	१९६
२.५.२.४ : अवधारणबोधक प्रयोग	...	१९६-१९७
२.६ : रचनात्मक उपसर्ग तथा प्रत्यय...	...	१९७-२१७
२.६.१ : उपसर्ग	...	१९८-२०३
२.६.२ : प्रत्यय	...	२०३-२१७
२.६.२.१ : संज्ञा प्रातिपदिक	...	२०३-२११
२.६.२.२ : विशेषण प्रातिपदिक	...	२११-२१५
२.६.२.३ : सर्वनाम प्रातिपदिक	...	२१५

पहला अध्याय ध्वनि-विचार

१. १: कबीर-ग्रंथावली में विभिन्न ध्वनियों को द्योतित करने के लिए लिपिचिह्नों का प्रयोग हुआ है। इन लिपिचिह्नों द्वारा जिन ध्वनियों का द्योतन हुआ है, उनकी ध्वन्यात्मक प्रकृति के संबंध में निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता; अतएव उस पर विचार नहीं किया जाएगा। नीचे स्वरों और व्यंजनों को व्यक्त करने वाले लिपिचिह्नों को उद्धृत किया जा रहा है :—

स्वर लिपिचिह्न :

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ ऐ औ

व्यंजन लिपिचिह्न^१ :

क	ख	ग	घ	
च	छ	ज	झ	
ट	ठ	ड	ढ	ड़ (ण)
त	थ	द	ध	न
प	फ	ब	भ	म
य	र	ल	व	
(ष)	स	ह		

^१ कोष्ठक () वाले लिपिचिह्न बहुत कम प्रयुक्त हुए हैं। क० ग्रं० के सम्पादक से मौखिक रूप से ज्ञात हुआ है कि प्रस्तुत संस्करण में भूल से 'न' के स्थान पर 'ण' छप गया है, इसी प्रकार 'ख' के स्थान पर 'घ' तथा 'स्' के स्थान पर 'ष्' छपे हैं। अगले संस्करण में इन्हें सुधारना सम्पादक को वांछित है। प्रस्तुत अध्ययन में लिखित रूप में जो लिपिचिह्न प्राप्त हुए हैं, उन्हीं को आधार माना गया है। इ और ङ भी इसी आधार पर स्वीकार किए गए हैं।

अन्यचिह्न :

— (अनुस्वार), (हलन्त)

विशेष : न्ह, म्ह, र्ह और ल्ह को व्यंजनगुच्छ माना गया है ।

१. २: लिपिचिह्नों का उल्लेख करते समय यह आवश्यक है कि क० ग्रं० में प्राप्त चौतीसी रमैनी का भी उल्लेख कर दिया जाय । इसमें विभिन्न ध्वनियों को द्योतित करने वाले लिपिचिह्नों अथवा लिपिचिह्नों द्वारा द्योतित वर्णों का ककहरा प्रणाली पर वर्णन मिलता है । शुद्ध साहित्यिक रचनाओं में तो इस प्रकार के उल्लेख कम किन्तु लोक गीतों (विरहा, चनयनी, कजरी) आदि में कुछ विलक्षणता दिखाने के लिए इस प्रकार के ककहरा की योजना आज भी अधिक मात्रा में मिलती है । कुछ स्थानों पर इसके आधार पर ही गीतों की प्रतियोगिता भी चलती है ।

विभिन्न प्रतियों में चौतीसी रमैनी के विभिन्न नाम मिलते हैं । दा० नि० में ग्रंथ बावनी, गु० में बावन अखरी, बी० में ज्ञान चौतीसा और बीभ० में इसका नाम चौतीसी मिलता है । इसका नामकरण चौतीसी रमैनी क्यों रखा गया, इसके संबंध में क० ग्रं० के सम्पादक का दृष्टिकोण इस प्रकार है “दा० नि० गु० में ग्रंथ बावनी या बावन अखरी शीर्षक संस्कृत के बावन वर्णों की परम्परा को ध्यान में रखकर दिए हुए ज्ञात होते हैं, किन्तु प्रस्तुत रचना में हिन्दी वर्णमाला के चौतीस अक्षरों (क से म तक के पच्चीस अक्षर, य से लेकर ह तक के आठ और एक ओंकार=३४ अक्षर) का ही उपयोग किया गया है, बावन का नहीं । अतः बी० तथा बीभ० के शीर्षक ही उपयुक्त ज्ञात होते हैं । बीभ० में इसे चौतीसी कहा गया है और रमैनी के समान छंद मिलने के कारण प्रस्तुत सम्पादन में चौतीसी रमैनी शीर्षक निश्चित किया गया है” ।^१

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि चौतीस वर्णों में स्वरों का उल्लेख नहीं है । ओंकार (ॐ) परम शक्ति (ब्रह्म) का प्रतीक है, इसलिए चौतीस वर्णों में मान लिया गया है । शेष वर्णों में ‘हिन्दी’ के जिन वर्णों की ओर संकेत किया गया है उनमें सभी के लिए वे ही लिपिचिह्न नहीं प्रयुक्त हुए हैं जो आजकल देवनागरी लिपि में प्राप्त हैं । जैसे—

ङ; ञ के लिए न प्रयुक्त हुआ है (नन्ना चौ० १०. १, १५. १), ण के लिए

^१ यद्यपि शीर्षक ‘चौतीसी रमैनी’ स्वीकार किया गया है किन्तु छंद का प्रारम्भ ‘बावन अखिर’ (चौ० १.१) और समापन ‘बावन अखिर’ (चौ० ४१.१) पाठ को स्वीकार करते हुए ही किया गया है ।

ए अक्षर लिखा है किन्तु सम्पादक के अनुसार यह पाठ न ही है। इसका स्पष्ट संकेत चौतीसरी रमणी में ही मिल जाता है। चौ० २०.१ में 'रणि रूती' और चौ० ३२.२ में 'रन रूती' पाठ मिलते हैं। इसी प्रकार अन्यत्र भी ए के स्थान पर न स्वीकार किया जा सकता है।

य के लिए ज, 'जज्जा' चौ० ३२.१ (किन्तु य स्वतंत्र रूप से भी प्रयुक्त है)।

श के लिए स, 'सस्सा' चौ० ३६.१ (सर्वत्र स)

ए की तरह ष भी ख और ष ('खख्खा' चौ० ३७.१ और 'पप्प' चौ० ४०.१) दोनों रूपों में ककहरा में ही प्रयुक्त मिलता है।

ड़ और ङ को ककहरा में सम्मिलित नहीं किया गया है।

१.३ लिपिचिह्न-सम्बन्धी विशेषण विवरण

१.३.१: ऋ :

(क) संस्कृत के 'ऋ' स्वर के लिए उसके मात्रारूप (ॠ) का प्रयोग हुआ है; यद्यपि ध्वनि-स्तर पर इसका अस्तित्व समाप्त हो चुका था। यथा—

कृन्त (कृष्ण) प. १०३.५

घृत (घृत) प. ६२.३

(ख) 'ऋ' स्वर ने जो उच्चारणगत मूल्य प्राप्त कर लिया है और जो मूल्य उस लिपिचिह्न को आज दिया जाता है, उसका ध्वन्यात्मक प्रतिनिधित्व किया गया है। संस्कृत के लेखन की परम्परा छोड़ दी गई है। यथा :—

क्रिसन (कृष्ण) प. १५८.७ (रि)

क्रिपा (कृपा) प. १७३.६ (रि)

• मिग्गा (मृग) प. १२४.७ (रि)

ग्रेह (गृह) प. १३.१ (रे)

रिखि (ऋषि) • प. १६५.६ (रि)

रितु (ऋतु) प. १४६.१ (रि) खेलत रितु बसंत

• रत (ऋतु) प. १४१.३ (रि) फुले रत बसंत

(ग) 'ऋ' स्वर ने परिवर्तित होकर जिन अन्य विविध ध्वनियों अथवा ध्वनि-समूहों का रूप धारण कर लिया है, उसका ध्वन्यात्मक प्रतिनिधित्व किया गया है। यथा—

मिरिगा (मृग) प. १३८.५ (इरि) *

मिरगा (मृग) प. १२१.२ (इर)

१.३.२: ऐ, अँ : क० ग्रं० में ऐ के स्थान पर अँ (शब्द की प्राथमिक स्थिति में) विकल्प रूप से मिलता है। ए के अतिरिक्त किसी भी अन्य स्वर (इ, ई, उ ऊ) की मात्रा अ स्वर पर नहीं मिलती अर्थात् अि, अी, अु, अू प्रयोग नहीं मिलते। शब्द की प्रारम्भिक स्थिति में अँ का अधिक प्रयोग हुआ है किन्तु ऐ भी प्राप्त है। यथा

ऐसा (ऐसा) सा. ५.४.१

अँसा (ऐसा) सा. २४.७.१

शब्द की अंतिम स्थिति में भी अँ विद्यमान है। यथा—

रहिअँ प. ६१.४

सोइअँ सा. ३४.१

१.३.३: त्र : आधुनिक नागरी वर्णमाला में प्रयुक्त होने वाले क्षत्रज्ञ संयुक्त-व्यंजनों में से केवल त्र का प्रयोग क० ग्रं० में मिलता है और वह शब्द की प्राथमिक तथा माध्यमिक स्थितियों में ही मिलता है। शब्दान्त में वह संयुक्त व्यंजन (अ युक्त) रूप में प्रयुक्त होता है—

प्राथमिक स्थिति त्रँता (गुग विशेष) प. १४३.५

माध्यमिक स्थिति चित्रै (चित्र) चौं. ११.१

चित्र (चित्र) चौं ११.१

त्र के दोनों व्यंजन (त+र) स्वतन्त्र रूप से भी त्र की पूर्ति करते हैं। एक ही शब्द में वे संयुक्त रूप में भी मिलते हैं और स्वतंत्र रूप में भी। यथा—

त्रि (तीन) प. १३०.७

तिर (तीन) प. १६३.२

१.३.४: श्री :

सम्पूर्ण क० ग्रं० में श्री (श+र) संयुक्त-व्यंजन का प्रयोग केवल श्री शब्द में हुआ है और श्री शब्द भी सर्वत्र श्री रूप में लिखा हुआ नहीं मिलता बल्कि स्त्री रूप में लिखा हुआ मिलता है। यथा—

श्री प. १०.८

स्त्री प. १३०.६

१.३.५: (हलन्त) :

हलन्त चिह्न व्यंजन-संयोग में प्रथम व्यंजन के नीचे शब्द की माध्यमिक स्थिति में ही प्रयुक्त है। यह चिह्न उन्हीं वर्णों के नीचे व्यवहृत हुआ है जिनका लेखन में आघा वर्ण नहीं बन पाता। यथा—

छछछा चौ. १२.१

टटटा चौ. १६.१

ढढढा चौ. १६.१

१.३.६: (रेफ) :

क० ग्रं० में बहुत से शब्दों में किसी व्यंजन से संयुक्त पूर्ववर्ती र (र+व्यंजन) विपर्यासित होकर पूर्ववर्ती व्यंजन के साथ परवर्ती अंश की तरह संयुक्त हो जाता है। इस प्रकार का अंतर लिपि-शैली के कारण है अथवा तत्कालीन उच्चारण का द्योतक है, यह अस्पष्ट है। उदाहरण इस प्रकार हैं—

कंद्रप (कंदप) प. १५५.१८

ग्रभवास (गर्भवास) प. १७५.८

गंध्रव (गंधर्व) प. १५५.१३

एक स्थान पर इसके विपरीत उदाहरण मिलता है अर्थात् परवर्ती र (व्यंजन+र) परवर्ती व्यंजन के साथ पूर्ववर्ती अंश की तरह प्रयुक्त हुआ है। यथा—

भर्म (भ्रम) प. १६७.२

१.३.७: वर्तनी की भिन्नता :

क० ग्रं० में कुछ शब्दों की वर्तनी में भिन्न-भिन्न लिपिचिह्नों का प्रयोग मिलता है। यहाँ ध्वन्यात्मक-स्वर पर उनका विवेचन नहीं किया जा रहा है क्योंकि सामान्य रूप से कोई निश्चित नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता, अतएव शब्दस्तर पर कुछ शब्दों के उदाहरण-मात्र दिए जा रहे हैं—

अक्खर : अक्खर प. २१.५, आखर सा. ३३.३.२, अक्खर सा. ३३.१.२

अचरज : अचरज प. १३३.३, अचारज प. ६०.४, अचिरज प. १६६.३

कदली : कदली सा. ६.३५.१, कजरी सा. २६.२.१

कुदंब : कुदंब प. १६७.४, कुदुम र. ८.३

जीव : जीव प. १४७.४, जीअ प. १३२.२, जिअ प. ३१.३, जीउ प. १८७.३,

जीय सा. १५.६२.७

जियत : जियत चौ. १३.१, जिअत प. १२४.१, जीवत प. ११८.६

अनुस्वार का चिह्न (

मिलता है; किन्तु उपर्युक्त

जिन स्थानों पर ये के

पूर्ववत स्थिति है किन्तु

इसी प्रकार व के स्थान

संजम प. ६६

कंसा प. ११७

मूलतः जिन श

गया है—

(संहार) : स

१.३.८.३ : स्वरों की

अनुनासिकता

जैसा कहा जा चुका

कहीं कुछ कारण ज्ञात

नासिक्य व्यंजनों के पूर्व

कहीं लिपिकारों की भूल

लग गए हैं (देखिए—

जानियां सा. ३३.५.२

(क) न के प

मिलता

ना

(ख) ए, न

चिह्न

किसी

पूर्ववर्ती

१४.१, तत्त प. १०२.२, तत सा. ३३.५.२

६, नांव प. १८१.६, नांउ प. ५३.८

६, नउ प. १२६.४, नव प. १५५.६

७.२, पाखर सा. २२.२.१

६, परगास प. १३०.३

वारिक प. ६०.५

६, फुनिगा प. १६६.२

७, भुयंगम सा. ४.२.२, भुवंगम सा. २.२.१

७, माइ प. १००.३, माय प. १२३.७

६.१; मानुस र. १५.६, मनिखा पं. ६३.३

२६.१ (अन्यत्र जुग रूप में प्रयुक्त)

३., लछिमी प. ३५.७

७, सभ प. ८.५,

४, साइर सा. ६.१८.१, सायर सा. ३१.२५.१

कर वर्णों का अन्तर है। इनके अतिरिक्त बहुत से भी मिलते हैं। कविता में मात्रा के अन्तर सामान्यतः स्तुत उदाहरण ऊपर नहीं दिए गए हैं।

में अनुस्वार शब्द का प्रयोग लिपिचिह्न के रूप में उस शिरोरेखा के ऊपर लगाया गया है। ध्वन्यात्मक-अनुस्वार (स्वरों के बाद मिलने वाली नासिक्य ध्वनि व्यंजनों से भिन्न है तथा य, र, ल, व, स, ह, ण्ति के नासिक्य व्यंजन (जब वे अपने वर्गों के व्यंजनों के अन्त में आते हैं) के अनुस्वार के उच्चरित रूप के बारे में जा सकता, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि स्वरों की उत्पत्ति उस समय संभवतः अधिक थी। लिखित रूप में त्रार और नासिक्य व्यंजन तीनों के लिए केवल एक ही हुआ है। न और म के यद्यपि स्वतंत्र प्रयोग भी अत्यंत सीमित है। स्वरों के अनुनासिकत्व को चन्द्र-या जा सकता है।

सामान्यतया उनके उच्चरित रूप के आधार पर जिन पर स्वरों को अनुनासिक करके लिखने की परंपरा

मिलती है, क० ग्रं० में उनके अतिरिक्त और अधिक स्थानों पर स्वरों की अनुनासिक करके लिखने (स्वरों पर अनुस्वार का चिह्न लगाकर) की प्रवृत्ति देखी जाती है। डॉक्टर सुनीति कुमार चटर्जी ने उक्ति व्यक्ति प्रकरण की प्राचीन कोसली में संक्रामक अनुनासिकता का उल्लेख^१ किया है। इस प्रकार की अनुनासिकता क० ग्रं० में भी मिलती है जिसका उल्लेख नीचे किया गया है। इस प्रकार की अनुनासिकता पृथ्वीराजरासो में भी प्राप्त है^२।

अनुस्वार का प्रयोग उपर्युक्त तीनों स्थितियों में किस प्रकार किया गया है, नीचे उसके उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं। एक उदाहरण के लिए केवल एक ही छंद-संख्या दी गई है—

१.३.८.१ : वर्गान्त के नासिदय व्यंजन के लिए अनुस्वार-चिह्न का प्रयोग :

- (क) कवर्ग से पूर्व : अंक सा. ४.२०.२, कंगन प. १७.४
 चवर्ग से पूर्व : कंचन प. ५७.५; निरंजनां र. ११.७
 टवर्ग से पूर्व : अखंड, पं. १३० ७, बैकुंठ प. २६.४
 तवर्ग से पूर्व : अंत सा. २३.२.२, अदेस सा. ६.७.२
 पवर्ग से पूर्व : अवर प. १२५.३, संपति प. २०.३

(ख) वर्गीय अनुनासिक के द्वित्व को व्यंजित करने के लिए पूर्ववर्ती ध्वनि के ऊपर अनुस्वार लगाने की प्रवृत्ति देखी जाती है; किन्तु लिपिकारों ने ऐसा करते में बड़ी स्वतंत्रता से काम लिया है। कहीं अनुस्वार का प्रयोग करते हैं, कहीं नहीं करते हैं और कहीं द्वित्व ही लिख देते हैं। एक ही शब्द में अनुस्वार चिह्न लगाया गया है और नहीं भी लगाया गया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

- धनि प. ५.६ : धन्नि प. ११.५
 हंम प. ५.२ (५० बार) : हम्म प. ५३.४ (२२ बार)
 संम्रथ प. ६६.२ : ———
 रतन सा. ३.१५.२ (१ बार) : रतन प. ६०.१ (३ बार)
 भरम सा. २१.२६.२ (१ बार) : भरम प. १२३.८ (१२ बार)

१.३.८.२ : अनुस्वार के लिए अनुस्वार-चिह्न का प्रयोग :

प्रा० भा० आ० भाषाओं में जिस प्रकार अंतस्थ और ऊष्म व्यंजनों के पहले

^१ दे० उ० व्य० प्र०, १६५३ ई०, स्टडी §१

^२ दे० पृ० रा० भा०, पृ० ५७, डॉ० नामवरसिंह

अनुस्वार का चिह्न (पूर्ववर्ती ध्वनि पर) मिलता है उसी प्रकार क० ग्रं० में भी मिलता है; किन्तु उपर्युक्त सभी व्यंजनों के पूर्व अनुस्वार के उदाहरण नहीं मिलते। जिन स्थानों पर य के स्थान पर ज प्रयुक्त हुआ है वहाँ भी ज के पूर्व अनुस्वार की पूर्ववत् स्थिति है किन्तु उसके उच्चरित रूप के संबंध में कुछ नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार व के स्थान पर ब के पूर्व भी अनुस्वार की स्थिति समझनी चाहिए।

संजम प. ६६.५, संजोग सा. १४.२७.१

कंसा प. ११७.५, संसार प. ३४.१, हंस प. ७०.४, सिंहन सा. ४.१८.१

मूलतः जिन शब्दों में अनुस्वार विद्यमान था, क० ग्रं० में उसका लोप भी हो गया है—

(संहार) : संहारं प. ११५.५

१.३.८.३ : स्वरों की अनुनासिकता के लिए अनुस्वार-चिह्न का प्रयोग :

अनुनासिकता को सूचित करने के लिए अनुस्वार का प्रयोग हुआ है; किन्तु जैसा कहा जा चुका है, क० ग्रं० में यह अनुनासिकता प्रबल रूप में मिलती है। कहीं कुछ कारण ज्ञात होते हैं, कहीं अकारण अनुनासिकता विद्यमान है। अधिकतर नासिक्य व्यंजनों के पूर्ववर्ती तथा परवर्ती स्वरों को अनुनासिक किया गया है। कहीं-कहीं लिपिकारों की भूल से अथवा छापे की भूल के कारण भी अनुस्वार के चिह्न लग गए हैं (देखिए— भूतकालिक क्रियाओं का-इयां प्रत्यय-चीह्नियां सा. २८.३.२, जानियां सा. ३३.५.२ आदि)। उदाहरण—

(क) न के परवर्ती आ पर अकेले प्रयुक्त होने पर सर्वत्र अनुस्वार का चिह्न मिलता है। इस प्रकार के कुल ७० उदाहरण प्राप्त हैं :—

नां सा. १५.४४.२ (नां जानों)

(ख) ए, न और म के पूर्व अथवा अपर स्वर पर अधिकतर अनुस्वार का चिह्न मिलता है। अन्य स्वरों पर कम मिलता है, किन्तु कहीं-कहीं किसी भी स्वर पर यह चिह्न नहीं भी मिलता है—

पूर्ववर्ती स्वर पर :

कान प. १६५.५, कौन र. ५.४,

गम र. ४.५

जाण सा. ११.१०.१, जान सा. ३१.४.१

नाम सा. ३२.७.१

राम सा. ३३.६.१

परवर्ती स्वर पर :

करमां प. १५८.१०, कवमें प. १८४.५,

गुनां प. १७१.१

पवनां सा. २६.३.२

सुपिनै प. १०६.२

पूर्ववर्ती और परवर्ती पर साथ-साथ :

कुरांनौ सा. ७.८.२

नांमां प. ४५.५

पांनीं सा. ४.२६.१

बांनां प. १३७.६

स्वांमीं सा. २१.१८.१

(ग) नासिक्य व्यंजनों की अनुपस्थिति में भी स्वरों की अनुनासिकता के लिए अनुस्वार का चिह्न—

कंवल प. ४३.५, किवार प. २५.१

गांउं प. ४१.४,

छांड़उं प. २६.१

भींवर सा. १६.७.१

पंखेरू सा. ३२.५.२

बंधइया प. १४.४, बधिनियां प. १६५.६,

मंछ सा. १६.१७.१, मंछर प. ४०.१, मनुवां सा. २६.१०.१

सरसीं सा. ३४.६.२, सांइयां सा. ६.७.२

इन अनुनासिक रूपों में कुछ ऐतिहासिक विकास पर आधारित हैं और कुछ का आगम-मात्र हुआ है।

१.३.८.४ : शब्दान्त के 'म्' के लिए पूर्ववर्ती 'अ' पर अनुस्वार का चिह्न :

अहं सा. १७.६.१

गरासं प. ११५.७

पियासं प. ११५.७

बिचारं प. ११५.१०

मभारं प. ११५.६

विशेष : क० ग्रं० में प्राप्त लिपिचिह्न-संबंधी विशेष उल्लेखनीय बातों पर ही ऊपर विचार किया गया है। इन विशेषताओं के अतिरिक्त, स्वर-परिवर्तन,

व्यंजन-परिवर्तन उनके आगम, लोप और विपर्यय, स्वरभक्ति, छन्द की सुविधा के लिए होने वाले परिवर्तन आदि के संबंध में आ० भा० आ० भाषाकाल में होने वाले सामान्य परिवर्तन ही देखे जाते हैं, अतएव उनके ऐतिहासिक विकास पर विचार नहीं किया गया है। अरबी-फारसी शब्दों को भी प्रारंभ में लिखे हुए लिपिचिह्नों द्वारा ही लिखा गया है, अतएव उन लिपिचिह्नों पर अलग से विचार नहीं किया गया है। नीचे स्वर और व्यंजन-संबंधी अन्य विवरण प्रस्तुत किए गए हैं।

स्वर

१.४.१: अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ, ऐ, औ स्वर शब्द की प्राथमिक, माध्यमिक और अंतिम स्थितियों में प्राप्त हैं। ऋ का (परिवर्तित रूप का) वितरण सीमित है। उसके उदाहरण ऋ लिपिचिह्न के विवेचन के साथ दिए गए हैं। नीचे अन्य स्वर्गों का वितरण दिया जा रहा है (उदाहरण के पश्चात् कोष्ठक में अर्थ, फिर छद्म और उसकी एक आवृत्ति की संख्या दी गई है)।

स्वर	प्राथमिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अंतिम स्थिति
अ : अमर (न मरने वाला) प.	सुअटा (तोता) प.६.४;	जीअ (जीव) प. १३२.२	
	१५२.१२;		
आ : आखर (अक्षर) सा. २८.	गिआन(ज्ञान) प.१३३.६;	भईआ(भाई) प.१३५.६	
	७.१;		
इ : इह (यह) प. ११३.६;	बंधइया (बंध गया) प.	खाइ (खाता है) सा.	
	१०.४;	५.१२.२	
ई : ईमान(ईमान) प.१७२.४;	भईआ (भाई) प.१३५.६;	खुदाई(ईश्वर)प.१८४.२	
उ : उदर (पेट) र. ५.२;	तरउवा(तारा)प.१२१.३;	सरीरउ (शरीर का भी)	
		सा. ४.२०.२	
ऊ : ऊसर (ऊसर जमीन) सा.	तूमरिया (तुम्बी) सा. २०	जनेऊ (जनेऊ) र. ६.४	
	२२.७.२;	५.१;	
ए : एक (एक) र. ८.४;	कतेब (किताब) प.१८१.	पढ़ाए (पढ़ाया) प.२६.३	
	२;		
ओ : ओट (आड़)सा.१४.२६.१;	गोबरधन (पर्वत विशेष) प.	संजमो (संयम) प. ८२.४	
	१६५.८;		
ऐ : ऐसा (इस प्रकार) सा. ५.	भैरौ (भैरव देवता) प.	सोइऐ (सोइए) सा.	
	४.१;	१४२.६;	३३.१
औ : औमड़ (भटका) सा. १६.	भौजल (भवजल) चौ.	माधौ (कृष्ण जी) प.	
	२७.२;	३७.२;	४३.१

अनुनासिकता

१.४.२: अनुस्वार के विवेचन के साथ स्वरों की अनुनासिकता पर विचार किया गया है। यहाँ सानुनासिक स्वरों की तीनों स्थितियों में वितरण दिया जा रहा है। ऋ के अनुनासिक रूप नहीं मिलते। ई, ए स्वरों के अनुनासिक रूप प्राथमिक स्थिति में नहीं मिलते और अ के अन्तिम स्थिति में।

अनुस्वर	प्राथमिक स्थिति	माध्यमिक स्थिति	अन्तिम स्थिति
अः अधियारी (अँवेरा) सा. ३१	बँधइया (बँध गया) प.	—	
१६.१;	१०.४;		
आँ: आंधी (आँधी) प. ५२.५.;	छाँड़उं (छोड़ दूँ) प. २६.	वेरियां (बेलाएँ) प.	
	१;	१२६.४.	
इँ: —	किवार (किवाड़) प. २५.	जिहिं (जिसको) सा.	
	१;	१४.२८.२	
ईँ: ईँधन (अलाव) सा. ३१.	ढीकुली (ढेंकुल) सा. १२.	मांहीं (में) प. ४०.७	
२८.१;	६.१;		
उँ: उंदरी (जन्तु विशेष) प. ११४.६;	कुंवरी (कुमारी) सा. १५.	गाउं (ग्राम) प. ४१.१	
	७३.१;		
ऊँ: ऊंच (ऊँचा) प. १६६.५;	सूँघत (सूँघते हुए) प. २.	उनहूँ (वे भी) प. ४८.४	
	४;		
एँ: —	दहेँड़िया (ग्वाला) प. १३१.	लिएं (लिए हुए) सा.	
	७.	२१.२०.२	
ओँ: ओंकार (ऊँकार) र. १.१;	ठोंकि (ठोंककर) सा. १५.	बड़ों (बड़े लोगों की)	
	३०.२;	सा. १५.६८.२	
ऐँ: ऐँड़ो (ऐँड़ते हुए) प. ७३.२;	भैस (पशु विशेष) प. ११६.५;	कैसें (कैसे) प. १२०.१	
औँ: औँवा (उल्टा) सा. ६.३८.	कौँनें (किसने) प. १५८.५;	सरसौं (सरसों) सा. २४.	
१;		६.२	

स्वर-संयोग

१.४.३: क० ग्रं० में दो से लेकर चार स्वरों तक का संयोग एक साथ मिलता है। इन स्वर-संयोगों में कहीं एक और कहीं दो सानुनासिक स्वरों के भी प्रयोग हुए हैं। प्रस्तुत अध्ययन में इस प्रकार के उदाहरण भी निरनुनासिक स्वर-संयोगों के साथ ही दिए गए हैं। सम्पूर्ण क० ग्रं० में १०३ प्रकार के स्वर

संयोग मिलते हैं जिनमें चार स्वरों के संयोग का केवल एक उदाहरण मिलता है और वह शब्द की अंतिम स्थिति में ही। तीन स्वरों के (केवल अन्तिम स्थिति में) मिलने वाले स्वर-संयोग १२ हैं। दो स्वरों के संयोग प्राथमिक स्थिति में ३, माध्यमिक में २१ और अन्तिम में ६६ हैं, जिनमें प्राथमिक के तीनों संयोग माध्यमिक और अन्तिम स्थितियों में भी मिलते हैं। माध्यमिक के एक (-उअ-) को छोड़कर शेष २० संयोग अन्तिम स्थिति में भी मिलते हैं। इस प्रकार अन्तिम स्थिति में ४७ संयोग प्रथम दोनों स्थितियों के स्वर-संयोगों से भिन्न हैं। दो स्वरों के संयोग का क्रम प्राथमिक स्थिति में ह्रस्व-दीर्घ, दीर्घ-ह्रस्व और दीर्घ-दीर्घ तथा शेष दोनों स्थितियों में ह्रस्व-दीर्घ, दीर्घ-ह्रस्व, दीर्घ-दीर्घ और ह्रस्व-ह्रस्व क्रम मिलते हैं। इन स्वर-संयोगों के समान ७ संयोग और भी मिलते हैं जिनसे स्वतन्त्र शब्दों की रचना हुई है। स्वतन्त्र शब्द-रचना में दो से अधिक स्वरों का संयोग नहीं मिलता।

१.४.३.१ : दो स्वरों का संयोग

प्राथमिक स्थिति में :

- अऊ- : अऊत (पुत्रहीन) सा. ४.३८.२
 आइ- : आइया (आया) सा. १०.१३.१
 आऊं- : आऊंगा (आऊँगा) प. १६३.१

माध्यमिक स्थिति में :

- अइ- : जइयो (जाए) प. ८८.६
 -अउ- : पउहे (लेटे हैं) प. १३०.४
 -अउं- : बदउंगा (स्वीकार करूँगा) प. १७८.४
 -आइ- : पाइया (पाया) सा. २६.१२.२, नाराइनां (नारायण) प. १०१.१
 -आइं- : गुसाइनि (गुसाईं) प. २४.३ जाइगे (जाएँगे) सा. १६.२१.२
 -आइ- : डाइनि (डाइन) प. २.५
 -आई- : जाईले (जाता है) प. १५६.४
 -आउ- : जुभाउर (जुमाने वाला) प. ५६.३
 -आऊं- : जाऊंगा (जाऊँगा) प. १६३.१
 -आए- : चराएहु (चराए हो) प. १८८.८
 -इअ- : जिअत (जीता है) प. १२४.१
 -इआ- : पखिआरी (भगड़ालू) प. १६२.६
 -इआं- : गिआंन (ज्ञान) प. १३३.६

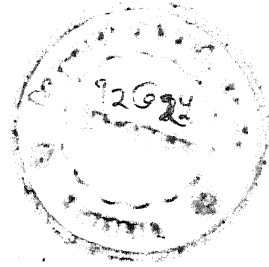
- इउ- : पिउरिया (पिउनी) प. १३६.१
- इउं- : चिउंटी (चींटी) सा. १०.८.१
- इऊं- : जिऊंगा (जीवित रहूंगा) प. १६३.१
- इए- : किएहु (किए हो) प. ८६.४
- उअ- : सुअटा (तोता) प. ११४.६
- उआ- : गुआर (भ्वाल) प. १८८.७
- एइ- : लेइहै (लेगा) सा. २१. १२.२
- ओइ- : कोइला (कोयला) सा. ३०.१७.२, होइ है (होगा) प. ८२.३

अन्तिम स्थिति में :

- अइ : कहइ (कहै) प. १४०.१
- अइं : लहरइं (लहरों को) प. ३६.५
- अई : भावई (अच्छा लगता है) सा. ३०.२१.१
- अईं : गईं (गईं) सा. १६.३४.२
- अईं : इहईं (यहीं) प. १७७.१२
- अउ : भूलउ (भूलो) प. १६०-५
- अउं : डरउं (डरता हूँ) प. १३५.३
- अऊ : तऊ (तो भी) प. १५५.१४
- अऊं : नऊं (नवों) प. ६६.२
- अए : गए (गए) सा. ३०.१२.१
- अएं : पठएं (भेजने से) प. ५३.५
- आइ : ठहराइ (ठहरता है) सा. १०.८.१
- आइं : काइं (क्यों) सा. ३०.६.२
- आइ : कांइ (क्यों) सा. २५.३.१
- आइं : ठांइं (स्थान पर) सा. ४.४.१
- आई : सरनाई (शरण में) प. १०१.१०
- आईं : सांई (स्वामी) सा. ३.२.५
- आउ : जाउ (जाओ) प. ८८.६
- आउं : कराउं (करता हूँ) सा. ८.१२.२
- आउं : गांउं (ग्राम) प. ४१.१
- आऊ : बैटाऊ (राही) सा. १४.३.२
- आऊं : छुवाऊं (छुवाता हूँ) प. १६०.८
- आऊं : पांऊं (पाता हूँ) सा. २.२४.२

- आए : पढ़ाए (पढ़ाया) प. २६.३
 -आएं : गाएं (गाने से) सा. ३३.५.१
 -इअ : जिअ (जीव) प. ३१.३
 -इआ : मिलिआ (मिला) सा. २५.१६.१
 -इआं : पनिआं (पानी) प. १३७.२
 -इउ : पिउ (पति) प. ११.४
 -इउं : सिउं (से) प. १६१.२
 -इऊं : पिऊं (पीता हूँ) सा. २.४४.२
 -इए : पूजिए (पूजा जाता है) सा. ४.६.१
 -इएं : लिएं (लिए हुए) सा. २१.२०.२
 -इअै : कहिअै (कहते हो) प. १५८.५
 -इअौ : मिलिअौ (मिला) सा. ४.२.२
 -ईअ : जीअ (जीव) प. १३२.२
 -ईआ : कीआ (किया) प. १८५.४
 -ईउ : जीउ (जीव) प. १८७.३
 -ईऊं : जीऊं (जीता हूँ) प. १६०.८
 -ईए : कीए (किए) प. २६.७
 -ईएं : पीएं (पीने से) चौ. ३३.२
 -उआ : चुआ (चुआ) प. ५६.५
 -उआं : हुआं (होने से) सा. १४.७.१
 -उइ : दुइ (दो) प. २५.६
 -उइं : भुइं (पृथ्वी) प. १४६.६
 -उई : मुई (मरी) सा. ३१.२७.१
 -उईं : कुईं (कुआँ) प. १३१.५
 -उए : मुए (मरे) सा. ३१.१२.२
 -उएं : मुएं (मरने से) प. ५५.५
 -उओ : मुओ (मरा) प. ६४.२
 -ऊआ : हूआ (हुआ) सा. १५.६८.१
 -ऊई : रूई (रूई) सा. ३१.२.२
 -ऊए : मूए (मरे) प. ८५.७
 -ऊएं : मूएं (मरने से) सा. १५.३५.१
 -एइ : देइ (देता है) प. १४८.६
 -एई : तेई (वे ही) सा. ३१.१२.२

- एउ : नाचेउ (नाचा) प. ६७.७
- एउं : देउं (देता हूँ) प. ५१.१
- एऊ : तेऊ (वे भी) प. २०.६
- ओआ : रोआ (रोया) प. ६०.६
- ओइ : सोइ (सो जाओ) सा. १५.६१.२
- ओई : रोई (रोता है) प. १०४.१
- ओउ : दोउ (दोनों) र. ६.२
- ओऊ : कोऊ (कोई भी) प. २४.५
- ओऊं : रोऊं (रोता हूँ) सा. २१.१४.१
- ओएं : खोएं (खोने से) सा. १५.३७.१



१.४.३.२ : तीन स्वरों के संयोग

- अइए : जइए (जाइए) प. १२३.४
- अइअै : पइअै (पाया जाता है) प. ७७.१
- अईआ : भईआ (भाई) प. १३५.६
- आइए : वजाइए (वजाई जाती है) सा. १.५.२
- आइअै : पाइअै (पाया जाता है) प. १७३.१
- इआइ : पतिआइ (विश्वास करता है) सा. ७.१०.१
- इआउ : निआउ (न्याय) प. १८३.१
- इआएं : पिआएं (पिलाने से) प. १६८.४
- इएउं : किएउं (किया) प. ११.३
- एइए : सेइए (सेवा कीजिए) प. १०१.१
- ओइए : रोइए (रोते हो) सा. १६.३.१
- ओइअै : रोइअै (रोते हो) प. ५५.५

या वा के स्थान पर आ मानने से अन्य कई प्रकार के संयोग बन सकते हैं। यथा—
-अइआ (रमइया प. ८२.१), -आइआ (जहंडाइया र. १३.७), -इआई (पतियाई प. १०८.५), -उआइ (धुंधुवाइ सा. २.८.१) आदि।

१.४.३.३ : चार स्वरों का संयोग

- इअइअै : पतिअइअै (विश्वास करें) प. २६.५

१.४.३.४ : निम्नलिखित ७ स्वर-संयोग स्वतंत्र रूप से स्वतः शब्द रचना करते हैं।

इन्हें शब्द की प्राथमिक और अन्तिम दोनों ही स्थितियों के उदाहरण के

- रूप में रख सकते हैं—

आइ	: आइ (आयु) सा. १५.३६.२, आइ (आया) र. १५.४
आई	: आई (आई) प. ८३. ०
आउ	: आउ (आओ) प. १३.१, आउ (आयु) प. ६८.५
आऊं	: आऊं (आता हूँ) प. ५३.५
आए	: आए (आए) प. ११०.७
एउ	: एउ (यह) प. १८७.१
ओइ	: ओइ (वे ही) प. ८४.६

१.४.३.५ : उपर्युक्त के अतिरिक्त संयुक्त-स्वर (ऐ, औ) लिपिचिह्नों में औ का अउ रूप भी प्राप्त है—

अउ-	: अउर (और) प. २६.२, अउरो (और) प. १६२.३
-अउ-	: बउरा (बीरा) प. ६७.१, बउरांनों (बीराया) प. १६०.१

व्यंजन

१.५.१ : नीचे शब्द में व्यंजनों की प्राथमिक, माध्यमिक और अंतिम स्थितियों में वितरण दिए गए हैं। आ० आ० भाषाओं की प्रवृत्ति को देखते हुए क० ग्रं० में भी व्यंजान्त शब्द स्वीकार किए गए हैं। डॉ० सु० कु० चैटर्जी के अनुसार आ० आ० भाषाओं में शब्दान्त के ह्रस्व-स्वर अ का लोप तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी से होने लगा था^१। प्रस्तुत अध्ययन में इस मत को स्वीकार करते हुए विवेचन किया गया है। संयुक्त-व्यंजनों में अ को उपस्थित मानकर उन्हें स्वरान्त ही माना गया है (व्यंजान्त शब्दों में ह्रस्व का चिह्न नहीं लगाया गया है, जिस रूप में वे लिखे हुए मिलते हैं वैसे ही लिखा गया है)

ड़, ढ प्राथमिक स्थिति में नहीं मिलते। ए प्राथमिक स्थिति में ए वरणात्वं सूचित करने के लिए चौतीसरी रमैनी में ककहरा के अन्तर्गत प्रयुक्त हुआ है। अन्यथा प्राथमिक स्थिति में इसका सर्वत्र अभाव है। ड माध्यमिक और अंतिम स्थितियों में अधिकतर संयुक्त-व्यंजन के द्वितीय सदस्य के रूप में मिलता है; फिर भी उसके तीनों स्थितियों में स्वतंत्र रूप से उदाहरण प्राप्त हैं। ड सर्वत्र प्राथमिक स्थिति में प्राप्त है; किन्तु एक स्थान पर ढ वरणात्वं सूचित करने के निमित्त संयुक्त-व्यंजन के द्वितीय सदस्य के रूप में माध्यमिक स्थिति में भी प्रयुक्त हुआ है। फ अंतिम स्थिति में नहीं मिलता।

^१ दे० ओ० डे० वे० लैं० : § १४८

व्यंजन

प्राथमिक

माध्यमिक

अन्तिम

क	कबीर सा. १.११.२;
ख	खसम सा. ७.५.१;
ग	गढ़ चौं. १६.२;
घ	घर प. १७३.४;
च	चरित र. ११.३;
छ	छार प. १३१.८;
ज	जल सा. ३३.६.२;
झ	झल प. १३४.८;
ट	टकसार सा. ६.४१.२;
ठ	ठग प. १३६.१;
ड	डर र. १८.१;
ढ	ढाक सा. ४.१.१
ण	णांणां चौं. २०.१;
त	तन सा. १५.५०.२;
थ	थोथरे सा. ३२.३.२;
द	दिढ़ प. १०.१०;
ध	धीर प. ४३.८;
न	निनार र. ११.७;
प	परम चौं. १०.२;
फ	फल सा. ३२.१०.२;
ब	बालक प. ३७.५;
भ	भोजन सा. २४.६.२;
म	मन सा. ३२.५.१;
य	युग सा. २१.२६.१;

(केवल एक बार)

र	रांम सा. ३३.६.१;
ल	लहंग प. ८७.७;
व	वार प. १२३.१०;
ष	षट प. ८०.३;

कुकाड़ी प. १८३.७;
देखत र. ६.५;
भगत प. ३३.६;
रघुनाथ प. १६१.१;
लोचन सा. १.१३.२;
बछल प. ४०.६;
बाजन प. १३८.४;
जुभाउर प. ५६.३;
अटक प. ३४.६;
अठसठि प. १७१.४;
नीडर सा. ३०.२४.१;
ढंढोरतां सा. ६.३२.२;
मुडावत सा. २५.२६.१;
चढ़ई सा. २४.१६.१;
रणि चौं. २०.१;
पतित प. २०.५;
थोथरे सा. ३२.३.२;
पदारथ प. ४५.६
बधिक सा. ५.६.२.
निनार र. ११.७;
पापी सा. २७.३.१;
नफर सा. ६.१०.२;
बबूर प. १३१.३;
भभूत सा. ३१.२८.३;
मुसलमांन प. १२८.१०;
दहेंड़िया प. १३१.७;

सरग प. १६४.२;
लालच सा. १.१७.१;
भुवन चौं. २१.१;
ओषद प. ८.३;

एक प. १८३.६
मुख प. १६५.८
भग र. १.५
अघ प. १४५.७
नीच प. १६६.५
बछ र. २०.७
बाज सा. १५.२.२
अबुझ सा. १४.६.१
बाट चौं. १६.१
अठ प. ३१.२
खड प. ३४.११
—
मूड सा. २५.२६.१
गढ़ चौं. १६.२
गण प. १३३.४
बरात प. ७३.३
नाथ प. १४३.१
भेद चौं. २६.२
साध प. ४४.५
निरगुन सा. २८.८.२
पाप र. ११.२
—
सब सा. ३२.१२.२
गरभ र. ४.३
भरम प. ५०.४
माय प. १२३.७

समुंदर सा. २.२७.१
फल सा. ३२.१०.२
देव प. ६४.५
विष सा. ५.१२.१
(एक बार)

स	सतगुर सा. १.३४.१;	समुर प. १३५.३;	मानुस सा. १६.२१.१
ह	हहि प. ३८.४;	मोहि प. ३६.१०;	नेह सा. २२-१४.१

व्यंजन-संयोग

१.५.२ : क० ग्रं० में दो से लेकर तीन व्यंजनों का संयोग एक साथ मिलता है। ये संयोग प्राथमिक और माध्यमिक स्थितियों में ही मिलते हैं। अंतिम में व्यंजन संयोग मिलने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि जब शब्दान्त संयुक्त-व्यंजन में होता है तो उसके अन्त में अ स्वर वर्तमान रहता है, ऐसा स्वीकार किया जा चुका है।

१.५.२.१: दो व्यंजनों का संयोग

प्राथमिक स्थिति : इस स्थिति में व्यंजन-संयोग का क्रम व्यंजन+य, र, व और ह है।

व्यंजन+य : य के साथ प्राथमिक स्थिति में केवल क्, ग्, छ्, ज्, त्, द्, ध्, न्, प्, ब्, म् और स् के संयोग प्राप्त हैं।

क्+य : क्यारी सा. २६.११.२, क्यूं प. ६८.५

ग्+य : ग्यांन सा. १.१६.१

छ्+य : छ्यांनवै प. ६६.४

ज्+य : ज्यूं प. ५१.२

त्+य : त्यागी प. ६४.४, त्यों प. ६७.१

द्+य : द्यौस सा. १५.३८.२, द्यौहाडी सा. १.१६.१

ध्+य : ध्यांन प. ५६.३

न्य+य : न्याइ सा. ११.३.२, न्यौति प. १३१.८

प्+य : प्यारे प. १५.१०, प्यास प. २.३

ब्य+य : व्याज सा. २१, १६.२, व्यापक प. १७.२

म्य+य : म्यांनै प. ८७.६

स्य+य : स्यार प. १२०.५, स्याम प. ८७.६

व्यंजन+र : र के साथ क्, ग्, त्, द्, ध्, प्, ब्, म्, स्, न् और ह का संयोग हुआ है।

क्+र : क्रोध र. १७.४, क्रिसन प. १५८.७

ग्+र : ग्रह प. १५५.६, ग्रिह प. ११३.५

त्+र : त्रेता प. १४३.५, त्रिय सा. ४.११.१

द्+र : द्रुगम प. १३०.३

धृ + र : ध्रिग र. १७.८
 प्र + र : प्रभु प. २६.७, प्रेम चौ. ३४.२
 वृ + र : व्रत सा. २६.६.१
 भृ + र : भ्रम प. १८०.४
 मृ + र : म्रिग प. २४.८
 शृ + र : श्री प. १०.८
 स् + र : स्त्री प. १३०.६, स्त्रीरामें प. ४३.८
 हृ + र : ह्रिदै प. ८२.८

व्यंजन + व : व के साथ केवल क्, ग्, ज्, द्, न् और ह् का संयोग हुआ है।

क् + व : क्वारी प. १६०.३
 ग् + व : ग्वालन र. ३.४
 ज् + व : ज्वाला सा. ६.३०.२
 द् + व : द्वापर प. १४३.६, द्वारिका सा. २६.११.१
 स् + व : स्वाति सा. ६.१८.१, स्वांमी सा. २१.१७.१
 ह् + व : ह्वैला प. १६६.६

माध्यमिक स्थिति :

माध्यमिक स्थिति में लगभग सभी व्यंजनों के संयोग प्राप्त हैं। संयोगों के क्रम में केवल य प्रथम सदस्य के रूप में नहीं आया है। क०श्र० की चौतीसी रसंती में विभिन्न वर्णों को द्योतित करने के लिए जिस ककहरा की योजना मिलती है उसमें य, र, व, श, ह और व्यंजन-वर्गों के प्रथम तीन नासिक्य (ङ, झ, ण) व्यंजनों को छोड़कर शेष समस्त व्यंजनों के द्वित्व मिल जाते हैं। य, श के लिए क्रमशः ज, स के द्वित्व प्रयुक्त हुए हैं। इसी प्रकार ङ और झ के लिए भी न का द्वित्व प्रयुक्त हुआ है। ण का णांणां रूप में उल्लेख हुआ है। इन द्वित्वों में क, ग, ज, ट, त, न, प, ल को छोड़कर शेष व्यंजनों के द्वित्वों का अन्यत्र उदाहरण नहीं मिलता।

कक्का चौ. ६.१, खक्खा चौ. ७.१, गग्गा चौ. ८.१, घग्घा चौ. ९.१, चच्चा चौ. ११.१, छछ्छा चौ. १२.१, जज्जा चौ. ३२.१, झझझा चौ. १४.१, टट्टा चौ. १६.१, ठठठा चौ. १७.१, डड्डा चौ. १८.१, ढढ्ढा चौ. १९.१, तत्ता चौ. २१.१, थथ्था चौ. २२.१, दद्दा चौ. २३.१, धध्धा चौ. २४.१, नन्ना चौ. २५.१, पप्पा चौ. २६.१, फफ्फा चौ. २७.१, बब्बा चौ. २८.१, भभ्भा चौ. २९.१, मम्मा चौ. ३१.१, लल्ला चौ. ३४.१, षष्षा चौ. ४०.१, सस्सा चौ. ३६.१,

जिन व्यंजनों के द्वित्व अन्यत्र भी प्राप्त हैं उनके उदाहरण नीचे दिए गए हैं—

भलक्कै सा. २६.१७.२, अगि सा. २.२०.२, लज्जा व. ६८.५, हट्ट सा. १.१५.२, पत्ता व. ११६.६, हट्ट सा. २०.६.१, जगन्नाथ र. ३.८ छधन व. ४२.४, मरम्म सा. २.३५.२, अल्लह व. १८४.३

द्वित्व के अतिरिक्त माध्यमिक स्थिति में व्यंजन-संयोगों में अधिकतर व्यंजन-क्रम—व्यंजन+य मिलता है तथा शेष में व्यंजन+अन्य व्यंजन क्रम है ।

व्यंजन+य : य के साथ ख, ग, च, ज, ट, ड, ढ, ण, त, द, ध, न, प, भ, र, ल, स और ह संयुक्त हुए हैं ।

ख+य : देख्यौ प. १०६.७, भिख्या सा. ४.३.२,

ग+य : ठग्यौ चौ. १७.२,

च+य : रच्यौ प. १०.३

ज+य : तज्यौ प. १२.१

ट+य : भेट्यौ प. ४४.५

ड+य : छाँड़्यौ प. १६०.४

ढ+य : बढ्यौ प. ७५.४

ण+य : बिण्यांणीं प. ६३.२

त+य : मृत्यु र. १२.२

द+य : विद्या प. १५५. १४

ध+य : सोध्यौ प. ७५.३

न+य : तीन्य प. १०७.६

प+य : कोप्यौ प. २६.६

भ+य : जिभ्या प. ८३.८

र+य : सुमिर्यौ प. ८३.४

ल+य : मिल्यौ प. ३३.६

स+य : डस्यौ प. ३६.५

ह+य : कह्यौ प. ८३.२

व्यंजन+र : केवल क, ग, ज, त, द, व, स के साथ संयुक्त ।

क+र : चक्र प. ८०.३

ग+र : नग प. १४४.४

ज+र : वज्र र. १८.१

त+र : छत्र प. १०१.५

द+र : मुद्रा प. १७२.३

व+र : सोवन सा. ३३.७.२, पतिव्रत प. १७६.६

स् + र : आस्रम र. १४.४, विस्राम र. १५.३

व्यंजन + व :

त् + व : तत्व सा. १६.१४.१

व् + व : अव्वनि प. १८५.३

स् + व : वेस्वा सा. ११.४.२

व्यंजन + ह तथा ह् + म :

स् + ह : कुम्हार सा. १५.६४.१, तुम्ह प. १०२.६

र् + ह : सिर्हानै सा. १५.१.१ (केवल एक उदा० प्राप्त)

ल् + ह : काल्ह सा. १५.१०.२, ओल्है सा. ७.१२.१

क० ग्रं० में ब्रह्मा (प. २७.३), ब्रह्मंड (प. ११३.३), ब्रह्मन् (र. १०.८), ब्रह्म (सा. २८.८.२) शब्दों में ह् + म के संयोग मिलते हैं किन्तु बांम्हन (सा. २१.४.१) में स् + ह स्थिति मिलती है।

अन्य व्यंजन + तवर्ग : तवर्ग के साथ केवल क्, व् और स् संयुक्त हुए हैं।

(अ) क् + त : भक्ति सा. १५.४८.१, मुक्ति प. १४४.१०

व् + द : सव्द सा. १८.१०.२

(ब) स् + त : निस्तार प. ४५.४, मस्तक प. १७५.५

स् + थ : अस्थान सा. ६.२१.१ अवस्था प. ६६.८

स् + न : विस्तु प. १५२.६, क्रिस्तन प. १४६.५

सबर्गीय (अल्पप्राण + महाप्राण) व्यंजन-संयोग :

क् + ख : अक्खर प. २१.५, दुक्ख सा. ३.१.१

च् + छ : मच्छ र. ३.६

ज् + झ : तुज्झ सा. ११.१६.२ मुज्झ सा. २.२५.२

त् + थ : अत्थि र. १७.११, समरत्थ सा. ३२.५.१

द्व + ध : मद्विम प. १८२.५, बुद्धि र. १२.७

ए + अन्य व्यंजन :

र् + प : सर्प प. १२०.४

र् + ब : गर्वसी प. ६७.३, निर्बध प. १.३

र् + म : धर्म सा. १५.३३.१; भर्म प. १६७.२

अन्य व्यंजन-संयोग :

ष् + ट : हष्टि प. १६२.८, दिष्टि सा. १.४.२

स् + ट : दिष्टि प. १३३.२, इष्ट सा. ३२.७.२

पूर्वाक्त व्यंजन-सर्वांगों के अतिरिक्त वर्गान्त के नासिक्य व्यंजन के लिए अनुस्वार का चिह्न लगाकर सर्वांगीय अन्य व्यंजनों के साथ संयोग प्राप्त हुए हैं, जिनका उल्लेख अनुस्वारों के विवेचन के साथ किया गया है; अतएव यहाँ उदाहरण देना पुनरावृत्ति-मात्र होगी ।

१.५.२.२ : तीन व्यंजनों का संयोग

तीन व्यंजनों के संयोग बहुत कम हैं । जितने संयोग क० अ० में प्राप्त हैं उनका उल्लेख नीचे किया गया है । ये संयोग केवल माध्यमिक स्थिति में प्राप्त हैं और इनका संयोग-क्रम नासिक्यचिह्न (अनुस्वार) + सर्वांगीय व्यंजन + य और र है ।

संघर्ष प. ८३.६, संग्रामहिं प. ११६.४, इंद्री प. ४१.४, कंदर्प प. १५५.१७,
मंत्रव प. १३३.४, इंद्र प. १६८.३, मंत्र सा. २.१.१, संम्रथ प. ६६.२

अक्षर-संरचना (सिलेबिक पैटर्न)

१.६ : क० अ० के लिखित रूप के आधार पर तत्कालीन भाषा की ध्वनि-प्रकृति अथवा उसका उच्चरित स्वरूप बताना कठिन है; अतएव अक्षर-संरचना के लिए जिन तत्वों का समावेश लिखित रूप में हो गया है उन्हीं को तत्कालीन भाषा के बोलचाल का रूप स्वीकार किया गया है । शब्दांत के अ का लोप समस्त अध्ययन में स्वीकार किया गया है ।

प्रस्तुत अध्ययन में स्वर के लिए अ तथा व्यंजन के लिए क संकेत स्वीकार करके अक्षर-संरचना दी गई है ।

(१) अ : कोई भी स्वर अक्षर-संरचना कर सकता है ।

ई प. १०५.१

ऊ सा. ३०.३.२

ओ र. १६.४

(२) अ क : कोई स्वर + व्यंजन :

इक सा. ६.१२.१

एक सा. ४.५.१

अठ प. ३१.२

(३) क अ : कोई व्यंजन + स्वर :

जा सा. २१.७.२

जे सा. १.७.२

जु सा. १५.३१.२

वा प. १६८.५

(४) क अ क : व्यंजन + स्वर + व्यंजन :

टेक प. १७८.१०

टोप प. २५.५

(५) क क अ : संयुक्त व्यंजन + स्वर :

क्या/री सा. २६.११.६

क्या/नी सा. ३०.२५.१

प्रो/तय सा. ११.१३.२

स्वा/रथ सा. ८.१७.२

(६) क क अ क : संयुक्त व्यंजन + स्वर + व्यंजन :

स्याम प. ८७.६

व्याज सा. २१.१६.२

व्यान प. ५६.३

व्यान सा. १.१६.१

व्रत सा. २६.६.१

क०ग्र० में एक शब्द में कम से कम एक अक्षर और अधिक से अधिक पाँच अक्षरों का प्रयोग हुआ है। शेष इन्हीं के संयोग से बने हैं। नीचे एक से पाँच अक्षरों से बने हुए शब्दों के उदाहरण दिए गए हैं—

एक अक्षर का शब्द : ओ (वह) र. १६.४

दो अक्षरों का शब्द : वेदु (वेद) प. १६६.८

तीन अक्षरों का शब्द : कलउ (कलियुग) प. १४३.६

चार अक्षरों का शब्द : रमइया (राम) प. ८२.१

पाँच अक्षरों का शब्द : पतिअइग्रै (विश्वास करें) प. २६.५

(केवल एक उदाहरण)

दूसरा अध्याय पद-विचार

संज्ञा

२.१.१ : प्रातिपदिक

क० अं० में अन्य प्रातिपदिकों की अपेक्षा संज्ञा प्रातिपदिकों की संख्या बहुत अधिक है। संज्ञा प्रातिपदिक व्यंजनांत और स्वरांत दोनों प्रकार के मिलते हैं तथा मूल और व्युत्पन्न दोनों रूपों में प्राप्त हैं। यद्यपि क० अं० के लिखित रूप और छंदबद्ध रचना होने के कारण यह कहना कठिन है कि शब्द व्यंजनांत ही हैं, किन्तु जैसा कि कहा जा चुका है, आ० आ० भाषाओं की प्रवृत्ति के अनुसार अंतिम व्यंजन (अ स्वर युक्त) को व्यंजनांत माना गया है, परन्तु जहाँ संयुक्त रूप में व्यंजन आए हैं वहाँ अ की उपस्थिति स्वीकार करते हुए उन्हें स्वरांत माना गया है।^१

क० अं० में प्रयुक्त व्यंजनांत और स्वरांत प्रातिपदिकों में प्रत्येक की सम्पूर्ण संख्या इस प्रकार है :—

व्यंजनांत प्रातिपदिक	१,००५
संयुक्त-व्यंजन (अकारांत)	१२०
आकारांत प्रातिपदिक	५३६
इकारांत प्रातिपदिक	२४०
ईकारांत प्रातिपदिक	४४१
उकारांत प्रातिपदिक	१५२
ऊकारांत प्रातिपदिक	३५
एकारांत प्रातिपदिक	१
ओकारांत प्रातिपदिक	५

^१ व्यंजनांत शब्दों के अंतिम वर्ण के नीचे हलन्त का चिह्न नहीं लगाया गया है—सम्पूर्ण अध्ययन में ऐसा ही किया गया है।

ऐकारांत प्रातिपदिक	११
औकारांत प्रातिपदिक	२८
कुल संज्ञा प्रातिपदिक		<u>२,५७४</u>

उदाहरण

२.१.१.१ : व्यंजनांत^१ :

—क (५४ प्राति०)

उदिक	प. ६८.४
खालिक	प. ८७.६, १८५.२, १८५.२, सा ४.३६.१, ७.२.१
ढाक	सा. ४.१.१, ४.६.२
नाक	प. १६५.५
मुलुक	प. १७७.६
साक	सा. २६.२२.१
हक	प. ८७.६

—ख (२६ प्राति०)

आमिख	सा. २०.११.२
गोरख	प. ४८.७, १२८.६, सा. २६.६.१
चमरख	प. १३६.३
दोख	सा. २३.२.१
परख	सा. १८.५.२
रूख	प. १५७.५, सा. १८.८.१, ३१.१३.२
सेख	प. ४२.४, सा. २७.७.१

—ग (४२ प्राति०)

काग	प. ६६.४, १३७.४
जोतिग	प. ६५.५
फाग	प. १४४.८, १४८.२
रग	सा. २. १७.१
सुहाग	प. १९६.६

—घ (१ प्राति०)

अधु	प. १४५.७
-----	----------

^१ प्रत्येक अंत्य की संपूर्ण संख्या कोष्ठक में दी गई है साथ ही कुछ उदाहरणों उनको संपूर्ण आवृत्तियों के साथ दिए गए हैं ।

अप स्थानों पर -च संयुक्त-व्यंजन के रूप में प्राप्त होता है।

नरनिच प. २६.१० आदि

-च (१० प्राति०)

करमच प. १११.६

खरच प. ८६.५

पनच प. १२४.५

वांच सा. १.२०.२

लालच प. ७४.३, सा. १.१७.१, र. १५.४

-छ (४ प्राति०)

पूछ सा. २१.२८.२

बछ र. २०. ७

बिरिछ प. १५२.३, सा. २.१२.९

मूछ सा. २५.२४.२

-ज (३३ प्राति०)

अनाज प. ६७.६

करज प. १६५.१२

चौज सा. १५.४८.१

बाज प. १४६.३, सा. १५.२.२

लेज सा. १२.६.१

सौज प. ५०.६

हज प. ८५.३, १७७.६ सा. २१.७.१

-झ (३ प्राति०)

बोझ सा. २६.६.२

रोझ सा. २५.६.२, २६.६.१

सांझ प. १२०.३, सा. ११.४.१, र. १२.१

-ट (२७ प्राति०)

ओट सा. ३.१०.२, १४.२६.१

चिरकुट प. ६५.१०

भोंट प. ६०.६

रहट सा. २. ४८.१

-ठ (५ प्राति०)

काठ प. ७६.५, सा. २२.१४.२, २५.७.३, २५.११.१, २५.

१८.२, २५.२१.१

जैठ प. १३५.३

मेठ प. १११.७

मठ सा. १०.७.२, २४.१.२

—इ (३ प्राति०) : (पूर्ववर्ती ध्वनि पर जो अनुस्वार का चिह्न है वह अनुनासिकता का सूचक है, नासिक्य व्यंजन का नहीं) ।

तृड सा. ३३.८.१

मांड सा. ७.३.२, ७.११.१, ७.११.१

रुंड सा. ३३.८.२

—ढ (अभाव है)

—ड (१६ प्राति०)

औघड सा. २६.६.१

गरुड प. १५३.४, १६६.२

धड सा. १४.३६.२

भेड प. १७४.४, सा. ११.२८.२

—ढ (२ प्राति०)

अमरगड प. १४३.७

गड प. ५६.८, (१४ बार)

—ण (३ प्राति०)

गुण प. ११३.४

जाण सा. ११.१०.१

त्रिगुण प. ५३.८

—न (५० प्राति०)

• कालवृत प. ६७.४, सा. ३३.४.२

वरात प. ७३.३

भागवत प. ६४.३

• हनुमत प. १०३.४

—थ (१८ प्राति०)

• काइथ प. ४१.२, सा. २१.२३.१

• जगन्नाथ सा. ४.२३.१

जसरथ प. १५८.५, १५८.५

रघुनाथ प. २४.५, १६१.१

—द (३० प्राति०)

अहलाद सा. ३०.२३.१

गोद सा. १६.१६.२, २.३.३

ननद प. १३५.४

मुरसिद प. १८४.४

—घ (१० प्राति०)

आवध र. ८.४

गीध प. १२०.२

वरध प. १२६.३

बोध प. १८०.४

—न (१४७ प्राति०)

असमानं प ८७.७, सा. ६.३१.२

चून सा. २०.१०.२

लहसुन सा. ३०.१.१

हरिजन प. १६.६, २८.१, १६६.१, १६६.३, सा. १५.७३.२, २४.१५.१

—प (२० प्राति०)

टोप प. २५.५

घूप सा. २.१५.२, २.२.४, ८.४

मधुप सा. २७.२.२

संताप सा. ३१.२१.१

—फ (अभाव है)

—ब (१२ प्राति०)

कतेब प. ८१.५, ८७.१, १७८.१, १७८.६, १८१.२, १८३.५

गालिब प. १७०.५

नीब प. १६८.५, सा. ४.१६.२, ६.१३.१, २२.८.१

रबाब सा. २.१७.१

—भ (५ प्राति०)

आभ सा. ३.१६.१

भारभ	प. १६.४, र. ४.३, ६.३, ६.४
जीभ	सा. १५.१५.२
लाभ	प. ३३.३, सा. ३.१६.१, र. १७.२
लोभ	प. २५.४ (१० बार)

—म (५६ प्राति०)

आदम	प. ४२.६, र. ५.१
खसम	प. २१.३ (६ बार)
रहीम	सा. २०.१०.१
रांम	प. १७७.१ (२४५ बार)

—य (७ प्राति०)

गोय	र. १०.८
जिय	प. १८.७ (४ बार), जिअ प. ३१.३ (८ बार)
पिय	प. ६.४ (६ बार)
हृदय	प. १४६.१०

—र (२०६ प्राति०)

असर	प. ३४.४
कबीर	प. ३०.५ (४१८ बार)
रेनाईर	सा. २.६.१
हैवर	सा. १५.२४.२

—ल (८६ प्राति०)

अजामेल	प. २०.५
करबाल	र. ८.४
चोल	सा. १.१८.२
देवल	सा. ६.१४.१, १२.७.२, २६.७.१, २६.७.२

—व (२६ प्राति०)

अभाव	प. १.३२.७
केसव	प. १६३.३
साव	सा. २.४६.१
सिव	प. ४३.५ (६ बार)

—ष (१ प्राति०)

विष	सा. ५.१२.१ (अन्यत्र 'विख' रूप में लिखा गया है)
-----	------------------------------------------------

—स (६५ प्राति०)

अंकुस प. ६७.५, सा. २६.२.२

कविलास प. १५५.३

जगदीस प. ६७.४, सा. १८.३.२, ३१.५.२

मुनिस प. १३१.८

—ह (२८ प्राति०)

अल्लह प. १७७.१, १८४.३, १८५.३, चौं. ४.१, अल्लाह प.
८७.६

गावह प. ११४.४

हुलह प. १०६.६

सनाह प. २५.५

साह प. ४.१

२.१.१.२ : स्वरांत प्रातिपदिक :

अकारांत संयुक्त व्यंजनों के उदाहरण व्यंजन-संयोग के अन्तर्गत दिए गए हैं; अतएव उनके उदाहरण यहाँ नहीं दिए गए हैं। शेष अंत्यों के उदाहरण अकारादि क्रम से इस प्रकार हैं :—

—आ

स्वरो से (२८) अदेसा प. १५.६, इला प. ११३.४, १२७.४

कवर्ग से (६८) कंधा प. १५१.४, गंगा प. १.५ (५ बार)

चवर्ग से (५४) चंदा प. १४२.४ (४ बार), भटका सा. २८.५.२

टवर्ग से (१२) टका प. ७३.२, ७३.३, डेरा प. ८६.६, ६५.८

तवर्ग से (७६) तमाचा सा. ११.३.२, नौका प. ३.५

पवर्ग से (१७६) पंखा प. ११६.७, मथुरा प. १३१.६, सा. ४.२३.१

रकार से (१८) रमइया प. ८२.१, रेखा प. १०८.६

लकार से (११) लंका प. ६६.५ (४ बार), लोहा प. ३.५ (४ बार)

वकार से (१) वावा चौं. ३५.१ (वर्णत्व सूचित करने के लिए)

पकार से (१) पण्पा चौं. ४०.१ (वर्णत्व)

सकार से (५०) संभा र. ७.२, सांझियां सा. ४.३५.१ (३ बार)

हकार से (८) हाकिमा प. १५२.६, हौवा र. ५.१

—इ

स्वरो से (२१) अकिलि प. १३४.२, औसेरि प. १०.२

कवर्ग से (३४) कवि प. १६६.५ (२ बार), गोपालराइ प. ८३.१०

- चवर्ग से (२०) चितामनि प. ३२.७ (३ बार), जोनि प. २७.७ (२ बार)
 टवर्ग से (४) ठाटनि सा. १५.८५.१, डांइनि प. २.५, १६२.८
 तवर्ग से (२६) तपनि प. १७.७ (३ बार), नौवति प. १००.१ (३ बार)
 पवर्ग से (८०) पंखि प. ५५.४ (३ बार), मोलि सा. १४.२०.१
 रकार से (१०) रघुपति प. ८६.२, रघुराइ प. ७७.६
 लकार से (७) लाहनि प. ५१.३; लूटि सा. ३.३.१, १५.६.२
 सकार से (३१) संपति प. ७३.६, स्वाति सा. ६.१८.१ (३ बार)
 हकार से (५) हरि प. २७.५ (१६५ बार), हरिनि प. १३७.३

—ई—

- स्वरों से (२६) अंगुरी सा. २५.७.१, औलौती प. १३४.६
 कवर्ग से (६६) कंदूरी प. १२६.४, गोपी प. १५८.८
 चवर्ग से (३६) चकई सा. २.४.१, भोली सा. २.५.१
 टवर्ग से (१२) टांकी प. १७६.८, टींकुली सा. १२.६.१
 तवर्ग से (६४) तंगी प. १.६, निवासी प. १७७.१०
 पवर्ग से (१२३) पंखी सा. १७.३.२, मोहड़ी प. ८३.६
 रकार से (८) रजनी र. १३.४, रोटी सा. २१.३.२
 लकार से (१३) लकड़ी प. ६२.५, लोभी प. ६१.३
 सकार से (५२) संगी सा. १५.६२.१, स्वामी सा. २१.१७.१ (८ बार)
 हकार से (११) हंकारी प. १७०.५, हरी प. १७७.११

—उ—

- स्वरों से (१३) अंतु प. १५५.१४, उदर प. १६६.५
 कवर्ग से (१५) कामु प. २५.३, उड.४, घाउ सा. १४.२६.१
 चवर्ग से (१४) चितु प. २१.२, २४.२, जैदेउ प. ४५.५, ४८.३
 टवर्ग से (२) ठांउं प. १६२.१ (५ बार), डंडु प. ६५.८
 तवर्ग से (२७) तत्तु प. १३८.१, नेहु सा. ४.२८.१ ३१.२३.१
 पवर्ग से (४०) पगु प. ८१.२, मीनु प. ६.३
 रकार से (६) रंकु प. ७८.२, रामु प. २०.१० (३ बार)
 लकार से (६) लसकर प. १२८.८, लोभु प. ७७.४
 सकार से (२२) संगु प. १२६.३, सेउ प. ७७.५
 हकार से (४) हंकार प. ७७.४, हंसु प. ६८.८

—ऊ—

- स्वरों से • (३) आंसू सा. २.४६.१, ऊजू प. १७७.५

- कवर्ग से (४) गारड़ू प. ३४.१४, ३६.६, गुरू (७ बार)
 चवर्ग में (३) चेतू प. ४१.२, जोरू सा. ३०.२०.१
 टवर्ग से (१) टेसू सा. १५.४५.२
 तवर्ग से (५) तराजू सा. १५.७६.२, धू प. ४८.५
 पवर्ग से (१०) पंखेरू सा. ३१.२५.२ (२ बार), प्रभू सा. ३२.६.२
 रकार से (१) रसनू प. ४१.४
 लकार से (२) लाड़ू प. १८७.७, लोहू र. १.२
 सकार से (२) साधू (५ बार), सवनू प. ४१.४
 हकार से (४) हाहू प. १३०.५

—ए (केवल एक प्राति०)

पांडे प. १६६.२, १६६.८

—ओ (केवल ५ प्राति०)

गो र. २०.७

जुलाहो प. १११.२, २००.४

बाहनों प. ८६.३

माहो प. १११.१

संजमो प. ८२.४

—ऐ (केवल ११ प्राति०)

अनभै प. १३२.६, अपरचै सा. २४.१२.१

गै सा. ४.३.१, ४.१०.१

परचै (४ बार), परलै प. १६५.६, बिखै (६ बार)

संपै प. ८२.६, ८२.७, है सा. ४.३.१, ४.१०.१

—औ (केवल २८ प्राति०)

अंदेसौ सा. २.१६.१, अचंभौ प. ११०.४ (५ बार)

ऊधौ प. १६८.५

केसौ सा. ३.४.१, २१.६.१, क्हांदौ, सा. २.१३.१

चांदिनौ सा. १.३.२, जौ सा. २४.६.१

टांडौ प. १२६.७

दौ सा. २.७.१, १३.१.१, धौ सा. १६.२.२

परचौ चौं. २६.१, बापौ प. १५४.६, माधौ प. ३६.१ (३ बार)

संदेसौ सा. २.१६.१. सरसौ सा. २४.६.२

२.१.२ : प्रातिपदिक के दीर्घरूप

२.१.२.१ : क० ग्रं० में प्रातिपदिक के दीर्घरूप अधिक मात्रा में मिलते हैं। दीर्घरूपों की यह प्रवृत्ति पूर्वी हिन्दी में अधिक देखी जाती है। रूप इस प्रकार प्राप्त हुए हैं—

—इया -इ, -ई में अंत होने वाले तथा व्यंजनांत स्त्रीलिंग अथवा पुल्लिंग संज्ञा-शब्दों के साथ—

भाइ : भइया प. १२५.१

जोगी : जोगिया प. १५१.१, १५१.३

रसरी : रसरिया प. १७०.६

माटी : मटिया प. १००.२

बेटी : बिटिया प. ११०.४

खाट : खटिया प. १००.२

राम : रमइया प. ८२.१

—इयाँ : -ई में अन्त होने वाले स्त्रीलिंग अथवा पुल्लिंग शब्दों के साथ—

छाहीं : छहियाँ प. ६६.७

बाघिनी : बघिनियाँ प. १३५.६

बाहीं : बहियाँ प. १२६.४

साईं : सांइयाँ सा. ४.३५.१, ६.७.२, ८.१३.२

—इवां : केवल सूर शब्द के साथ—

सूर : सूरिवां सा. १.६.१ (५ बार)

‘सांइयाँ’ का पाठ ‘सइयाँ’ होना; चाहिए क्योंकि -इयाँ, -उवा, -(अ) वा प्रत्ययों के साथ पूर्ववर्ती दीर्घस्वर नियमतः ह्रस्व हो जाते हैं, परन्तु प्रस्तुत उदाहरण में ऐसा नहीं हुआ। ‘सांइयाँ’ की तरह ‘कांढवा’ पाठ भी विचारणीय है, क्योंकि नियमतः इसे भी ‘कांढवा’ होना चाहिए। ‘सांइयाँ’ की जगह दा० और गुण० (क्रमशः ५६-४, ३५-२१) प्रतियों में ‘केसवा’ और नि० तथा सा० प्रतियों (क्रमशः ६१-७, १०५-२०) में ‘रामजी’ पाठ मिलते हैं। ‘सांइयाँ’ (सा. ८.१३.२) के स्थान पर दा० (३८-४) में ‘साईं मेरा सुलखना’ पाठ है। ‘कांढवा’ के स्थान पर दा० नि० सा० प्रतियों (क्रमशः ५०-१, ५८-१, १०२-१) में ‘काटां’ पाठ मिलता है। सासी० (५३-२१) में भी यही पाठ है जो छंद की ऊपर और नीचे की पंक्तियों के अर्थ के अनुकूल है। अर्थ और व्याकरण की दृष्टि से ‘काटां’ पाठ अधिक युक्ति-संगत प्रतीत होता है। ‘सांइयाँ’ के स्थान पर ‘सइयाँ’ अथवा अन्य प्रतियों के पाठ (केसवा आदि) भी उपयुक्त कहे जा सकते हैं।

-उवा व्यंजनांत तथा -ऊ में अंत होने वाले पुल्लिङ्ग शब्दों के साथ—

तरऊ : तरउवा प. १२१.३

फाग : फगुवा प. १४४.६

-उवां : केवल मन शब्द के साथ—

मन : मनुवां सा. २६.१०.१

-(अ) वा : -आ में अन्त होने वाले तथा व्यंजनांत पुल्लिङ्ग शब्दों के साथ—

कांटा : कांटवा सा. १५.१०.२

घर : घरवा प. ६६.६

चोर : चोरवा सा. २६.४.२

मिरगा : मिरगवा प. १२४.६

उपर्युक्त रूपों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी दीर्घरूप प्रयुक्त हुए हैं जो छंद की सुविधा के लिए दीर्घ कर लिए गए हैं, किन्तु उनमें कुछ स्वतंत्र रूप से भी दीर्घरूप कहे जा सकते हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

-आ : अंगन : अंगना प. १५.६

कबीर : कबीरा अथवा कबिरा सा. १८.४.१ (कुल ३२ बार)

कुंभार : कुंभरा प. ६५.३, कोंहार : कोंहरा प. ७६.४

गगन : गगना प. १६४.७

-ई : गांठि : गांठी प. ७३.२, सा. १८.१२.२, ३२.५.२

गाइ : गाई प. ११६.२

-ऊ : गुरु : गुरू प. ५८.८ (८ बार)

बिस्नु : बिस्नू प. १८७.६

साधु : साधू प. ३४.१ (५ बार)

२.१.२.२ : तुक के कारण प्रातिपदिक के दीर्घरूप

कविता की भाषा में छन्द की यति, गति, मात्रा और तुक के कारण प्रातिपदिकों को आवश्यकतानुसार ह्रस्व अथवा दीर्घ कर लिया जाता है। क० ग्रं० में ऐसे दीर्घीकरण के पर्याप्त उदाहरण मिलते हैं। नीचे तुक के कारण होने वाले दीर्घीकरण के कुछ उदाहरण दिए गए हैं—

-आ : इतबार : इतबारा प. १५२.१

परांन : परांनां चौ. ६.१

भेद : भेदा र. ७.१

सेस : सेसा प. १०३.४

	सूद	: सूदा प. १८१.४
-ई :	जाति	: जाती र. ५.४
-ऊ :	गांउं	: गांऊं प. १३१.११
	ठांउं	: ठांऊं र. १०.२
	नांउं	: नांऊं प. १३१.१२
	राउ	: राऊ र. ८.५

२.१.३ : अवधारण के लिए प्रयुक्त संयोगात्मक रूप

अर्थ की दृष्टि से निम्नलिखित संयोगात्मक रूपों का प्रयोग अवधारण के लिए हुआ है। इन्हें संज्ञा के कारकीय संयोगात्मक रूपों से भिन्न समझना चाहिए (अर्थ कोष्ठक में दिए गए हैं)।

-ऐ, ऐं :	दूवै सा. ५.१२.१ (दूध ही)
	हीरै सा. ६.३२.२ (हीरा ही)
	रामैं प. १२५.५ (राम ही)
-आँ :	चंदौ प. १०५.५ (चंद्रमा भी)
	सुरजौ प. १०५.५ (सूर्य भी)
-(अ)हि, हि, हीं :	बैकुंठहि प. २६.६ (स्वर्ग ही)
	रामहि सा. ३३.६.१ (राम ही)
	कुसलहि प. १०२.७ (कुशल ही)
	मनहीं चौं. ३०.२ (मन ही)
-(अ)हुं :	पाहनहुं प. १३४.४ (पत्थर से भी)
	मुखहुं प. १३६.२ (मुख से भी)

२.१.४ : लिंग-विधान

क० ग्रं० में पुल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग केवल दो लिंग मिलते हैं। आलोच्य ग्रंथ की संज्ञाओं के लिंग-विधान के संबंध में कोई सुनिश्चित व्याकरणिक नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। लिंग-निर्णय के लिए अधिकांश स्थानों पर शब्दों के वाक्यगत प्रयोग (सिनटैक्टिकली) पर ध्यान देना पड़ता है। इस प्रकार के प्रयोगों में लिंग का निर्णय संबंध-कारक के चिह्नों, विशेषणों, क्रियारूपों आदि द्वारा ही संभव है। यहाँ क० ग्रं० की संज्ञा के लिंग-विधान से संबंधित दोनों विधाओं—शब्द-प्रयोग एवं शब्द-रूप—के उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं जिनसे लिंग-विधान-संबंधी स्थिति स्पष्ट हो सकेगी।

२.१.४.१ : शब्द-प्रयोग

क० ग्रं० में कुछ ऐसे शब्द हैं जिनका प्रयोग दोनों लिंगों में हुआ है। कुछ स्थानों पर लिंग-निर्णय स्पष्ट नहीं होता अर्थात् कारकचित्त, विशेषण और क्रियारूपों द्वारा भी लिंग-निर्णय नहीं हो पाता। दिल शब्द सामान्यतः (परिनिष्ठित हिंदी में) पुल्लिंग में प्रयुक्त होता है, किन्तु क० ग्रं० में केवल एक स्थान पर छोड़कर शेष सभी स्थानों पर या तो स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हुआ है अथवा अस्पष्ट स्थिति में। यथा—

‘दिल’ स्त्रीलिंग में—

जाकी दिल साबित नहीं (कारकचित्त द्वारा लिंग-निर्णय) सा. २१.७.२
जौ दिल सूची होइ (विशेषण द्वारा लिंग-निर्णय) सा. २१.२.१
दिल दरिया भरपूरि („ „ „) सा. ६.११.१
दिल अपनी का सांच („ „ „) सा. १.२०.१
जौ दिल खोजौ आपनी („ „ „) सा. ६.५.२
जिन दिल बांधी एक सौ (क्रियारूप द्वारा लिंग-निर्णय) सा. ११.२.२
दुंदर दिल बिखसौ भरी („ „ „) सा. ६.११.२
राम नाम सौ दिल मिली („ „ „) सा. ३२.७.२

‘दिल’ पुल्लिंग में—

कबीर दिल साबित भया (क्रियारूप द्वारा लिंग-निर्णय) सा. ६.३२.१

‘दिल’ अस्पष्ट स्थिति में—

प. ८७.१, ८७.३, १७७.६, १७७.१२, १७८.८, १८३.६, सा. १५.११.२,
२६.३.२; २६.११.१, ३२.४.२

२.१.४.२ : शब्द-रूप

२.१.४.२.१: व्यंजनांत संज्ञा में लिंग— व्यंजनांत संज्ञाएँ प्रायः समान रूप से दोनों लिंगों में प्रयुक्त हैं।

पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
अंकुर प. ११६.५, र. ७.८	आस सा. १५.४५.१ (१५ बार)
अंगार सा. २.५३.१	किरत चौ. ६.१
उपगार सा. १.१३.१	चोट प. २५.८ (८ बार)
कड़वापन प. १७१.४	टेक प. १७८.१०
कुम्हार सा. १२.१.२, १५.६४.१	घार सा. २६.१.२
गोपाल प. २६.४ (५ बार)	नींद सा. १६.२८.१ (६ बार)
ढंङ्गल सा. २५.२४.१	पोट प. २३.८ (३ बार)

तीतर	सा. १५.२२.२	बिरहिन	सा. २.६.१, २.३१.१
पोख	सा. १६.३७.१	रेख	प. १६४.४ (४ बार)
बाप	प. ४६.४ (६ बार)	सीय	सा. २४.११.२ (५ बार)
महादेव	प. १५५.३, १८७.६	हौंस	सा. १.१.२, ३६.६.२
रांम	सा. ३.२१.१ (२४५ बार)		
हृदय	प. १४६.१०, सा. २२.१५.१		

२.१.४.२.२: आकारान्त संज्ञा में लिंग — आकारांत संज्ञाएँ भी प्रायः दोनों लिंगों में समान रूप से प्रयुक्त हैं। -इया में अन्त होने वाले रूप अधिकतर स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हुए हैं। -उआ अथवा-उवा अंत वाले रूप पुल्लिंग के हैं।

पुल्लिंग

अंगना	प. १५.६
अंसेसा	सा. १०.१५.१
कबिरा	सा. १८.१४.१
कलुवा	प. १४२.६
कलेजा	सा. २.३३.२. २.३५.२
कोंहरा	प. ७६.४
चिड़ा	सा. १६.२७.२
चितेरा	चौ. ११.२
छाला	सा. २.३६.२
जटाधर	प. १०१.८
भटका	सा. २८.५.२
तरउवा	प. १२१.३
तूमरिया	सा. २०.५.१
दहेंडिया	प. १३१.७
देहरा	प. ११६.७ (३ बार)
निहकामता	सा. ४.२४.१
पुखेखा	सा. १६.३७.१
पछेवरा	प. ५३.६, सा. ३२.४.२
पानिया	प. १३१.५, सा. ६.४.२
पिया	प. १७.१
फगुवा	प. १४४.६

स्त्रीलिंग

अरचा	प. ६६.५
आसा	सा. १२.८.१ (१६ बार)
कंवला	प. ३४.१ (४ बार)
कथा	प. ३३.२ (४ बार)
कन्या	सा. १५.७३.१
कबिता	प. ८५.५
खटिया	प. १००.२
गीता	प. ६४.३
गुफा	प. १२२.५, १४५.१ (४ बार)
चिता	प. ३२.८ (५ बार)
छाया	प. १४.४, ७८.३, सा. १७.३.२
तिरिया	प. १७६.६
तिसनां	प. २५.६, ६६.६
दया	प. १५.६ (५ बार)
दिसा	प. १७७.११
दुरगा	प. १५५.४
नदिया	सा. २.५४.१
पटिया	प. २६.४
पिउरिया	प. १३६.१
पुडिया	प. १११.३ (३ बार)
बलइया	प. १४०.१

बढ़इया प. ११०.६
 बरतिया प. ८५.६
 बलधिया सा. ४.३३.१
 वेटा सा. १६.४०.१
 मनुवां सा. २६.१०.१
 रमइया प. ८२.१
 हूखड़ा सा. २२.१४.१
 सूरिवां सा. १.६.१ (५ बार)

बहुरिया प. ११.१, १३६.२
 बांवरिया प. ६४.७
 बिटिया प. ११०.४
 बिलइया प. १२०.४
 मटिया प. १००.२
 महिमां प. ३५.१० (३ बार)
 राधा प. १५८.७
 सेजरिया प. १५.७

२.१.४.२.३: इकारांत संज्ञा में लिंग प्रयुक्त हैं।

पुल्लिंग

कवि प. ४३.६, १६६.५
 केहरी प. १६६.४, २. १६.२
 खुदाइ सा. २१.७.२ (७ बार)
 गिरि प. २६.७ (३ बार)
 नरहरि प. १०.६
 बिरंचि प. ४८.४ (३ बार)
 बिरिखि र. ११.१
 मुरारि प. ८२.२, सा. ३.२.१
 रघुपति प. ८६.२
 रघुराइ प. ७७.६
 रवि प. १०३.४ (४ बार)
 हरि सा. ३२.१२.१ (१६५ बार)

२.१.४.२.४: ईकारांत संज्ञा में लिंग— ईकारांत संज्ञाएँ अधिकांशतः स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हैं।

पुल्लिंग

अमीं प. ५१.७ (५ बार)
 अहेरी सा. १६.३.२, २. १२.१
 वी सा. २६.५.२
 छत्रपती सा. ४.१०.१
 जोहरी प. ६६.६

स्त्रीलिंग

अग्नि र. १०.२ (१० बार)
 असतुति प. ३२.३
 औरति प. १७७.१३, १७८.५
 कामिनि प. ८०.७ (५ बार)
 गुसांइनि प. २४.३
 नागिनि प. २.४
 वाघिनि प. १६५.१
 बिरहिनि सा. २.३६.२ (३ बार)
 भगतिनि प. १६३.७
 सुंदरि सा. ११.१४.१ (५ बार)
 हरिनि प. १३७.३

स्त्रीलिंग

अंबली प. १३१.३
 आंखी प. १६५.५
 कमोदिनी सा. २.२६.१
 गोपी प. १५८.८
 चकई सा. २.४.१
 चेली प. १६०.५

तपी प. १०१.७	छपरी सा. ४.३७.२
बहनोई प. १४०.४	छाहीं प. १५३.५; र. २.४
बद्री र. ३.७	जननी प. ३७.१, ३७.३, र. १७.३
मानई सा. २४.१.२	टोपी प. १४३.३
माली सा. १६.३४.१	डांडी सा. न.१०.२
मुरारी प. १७१.५	तूबरी सा. १६.१७.१
संगाती प. ६६.५	दासी प. १५.न (५ बार)
हरी प. १७७.११	देवी प. १२३.७
	धनुहड़ी सा. १३.३.२
	नांगिनी सा. ३०.२.१
	पारवती प. १०३.३
	बकरी प. १८३.७
	भंवरी प. ७५.२, ७५.न; ७५.६
	भवानी प. १२६.५, १६३.३
	महतारी प. ३७.५, ६४.३
	रांणी प. ६२.३, १५न.न, १६३.५
	लछिमी प. ३५.७
	सरसती प. १४६.७
	हरिनी सा. १६.३.१
	हस्तिनी प. ६७.४

२.१.४.२.५ : उकारांत संज्ञा में चार स्त्रीलिंग तथा शेष पुल्लिंग शब्द हैं ।

पुल्लिंग

स्त्रीलिंग

अकूर प. १६न.५	आड प. ६न.५
गोबर प. १६२.७	वस्तु सा. २१.१६.२ (७ बार)
तर प. १न०.४	मृत्यु र. १२.२
प्रभु प. ४०.२ (७ बार)	सामु प. १३५.३
विस्तु प. १४६.५ (६ बार)	
भानु प. ५२.६	
भोजनु प. १६६.५	
सिंभु सा. ६.२४.२	
मुखदेउ प. ४न.६ (३ बार)	

२.१.४.२.६ : ऊकारांत संज्ञा में लिंग—इसमें दो स्त्रीलिंग तथा शेष पुल्लिंग शब्द हैं ।

पुल्लिग

स्त्रीलिग •

अवधू प. ६०.६ (६ बार)

गऊ सा. १६.५.२

जनेऊ सा. २१.२१.१, २. ६.४

बहू प. ११०.७

पंखेरू सा. ३१.२५.२, ३२.५.२

प्रभू सा. ३२.६.२

विसनूं प. १८७.६

२.१.४.२.७ : एकारांत संज्ञा में लिग—केवल एक पुल्लिग शब्द प्राप्त है।

पाड़े प. १६६.२, १६६.८

२.१.४.२.८ : ओकारांत संज्ञा में लिग—केवल दो स्त्रीलिग तथा शेष पुल्लिग शब्द।

पुल्लिग

स्त्रीलिग

जुलाहो प. १११.२, २००.४

गो र. २०.७

बाहनों प. ८६.३

माहो प. १११.१

संजमो प. ८२.४

२.१.४.२.९ : ऐकारांत संज्ञा में लिग—केवल एक स्त्रीलिग तथा शेष पुल्लिग शब्द।

पुल्लिग

स्त्रीलिग

गै सा. ४.३.१, ४.१०.१

संपै प. ८२.६, ८२.७

परचै (४ बार)

परलै प. १६५.६ (?)

है सा. ४.३.१, ४.१०.१

२.१.४.२.१० : औकारांत संज्ञा में लिग—पुल्लिग और स्त्रीलिग दोनों में प्रयुक्त।

पुल्लिग

स्त्रीलिग

ऊधौ प. १६८.५

चांदिनी सा. १.३.२

कैसौ सा. ३.४.१, २१.६.१

दौ सा. ७.२.१

जौ सा. २४.६.१

धौ सा. १६.२.१

बापौ प. १५४.६

लौ सा. ११२.६.१

माधौ प. ७७.२

सरसौ सा. २४.६.२

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि क० अं० में लिग-निर्णय वस्तुतः शब्द-प्रयोग पर निर्भर है। शब्द-रूप के आकार पर निश्चित व्याकरणिक नियम निर्धारित नहीं हो पाते हैं; क्योंकि शब्द-रूप (अंतिम ध्वनि) की दृष्टि से पुल्लिग संज्ञाएँ लगभग उतनी ही प्रकार की होती हैं जितनी प्रकार की स्त्रीलिग संज्ञाएँ।

२.१.५ : वचन-विधान

वचन-विधान की दृष्टि से क० प्र० की संज्ञाएँ दो प्रकार की हैं—एक रूप से वस्तु के एकत्व का बोध होता है और दूसरे से एक से अधिकत्व का। इन्हीं दोनों रूपों को क्रमशः एक वचन और बहुवचन कहा जाता है। वस्तुतः संज्ञापदों में पाए जाने वाले वचन के विभक्ति-प्रत्ययों को कारक-संबंधों के द्योतक विभक्ति-प्रत्ययों से पृथक् करके नहीं देखा जा सकता; इसलिए इन विभक्ति-प्रत्ययों को सामूहिक रूप से पद-रचनात्मक कोटियों (डिक्लेन्शनल टाइप्स) के अन्तर्गत स्पष्ट किया जाएगा। यहाँ केवल इतना स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि वचन-विधान की इस संयोगात्मक विधा के अतिरिक्त एक वियोगात्मक अथवा विश्लिष्ट (एनलिटिकल) विधा भी है। क०प्र० में कुछ ऐसे शब्द मिलते हैं जिनके साथ कहीं अनिवार्य और कहीं वैकल्पिक रूप से स्वतंत्र शब्दों को रखकर अनेकत्व का बोध कराया गया है। इन्हें बहु वचन ज्ञापक शब्दावली कहा जा सकता है। इन शब्दों को नीचे उद्धृत किया गया है—

उदा०

अर्थ

अवलि, अवली	: रोमावलि प. १५५.८	रोएँ
	जमावली प. १५५.१५	यम समूह
आदि, आदिक	: सुकादि प. ४३.५	शुक और अन्य
	सनकादिक प. १०४.५	सनक और अन्य
गण, गन	: सुर नर गण प. १३३.४	देवताओं और मनुष्यों का समूह
	गन गंधर्प र. १३.२	गंधर्व लोग
जन, जनां	: संत जन प. १०६.३	संत लोग
	पंडित जनां प. १०३.१	पंडित लोग
दल	: किरिम दल प. ६८.३	कीड़ों का समूह
लोग, लोगु, लोइ	: लोग वटाऊ सा. १४.३.२	पथिक लोग
	लोगु प. १८६.६	सभी लोग
	स्वारथी लोइ सा. १५.६२.१	स्वार्थी लोग

अनिश्चयवाचक सर्वनामों के साथ उपर्युक्त शब्दों में लोग शब्द का प्रयोग (सर्व लोग प. १३.७; सभ लोग प. ६८.८) अधिक मिलता है।

आदरार्थ भी बहुवचन के प्रयोग मिलते हैं जिनका उल्लेख यथा-स्थान किया जाएगा।

२.१.६ : कारक-विधान

क० ग्रं० में कारक-विधान दो रूपों में प्राप्त है— संयोगात्मक और वियोगात्मक। संयोगात्मक रूपों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में हुआ है। इस स्थिति में विभक्तियाँ स्वतंत्र पदग्राम से संयुक्त होकर प्रयुक्त हुई हैं। इस दशा में मूल पदग्राम और विभक्ति मिलकर एक मिश्रित पदग्राम (कम्प्लेक्स मॉर्फ़ीम) का निर्माण करते हैं, जब कि वियोगात्मक स्थिति में विभक्ति और मूल पदग्राम के मिलने पर भी दोनों की अक्षरात्मक (सिलैबिक वन्स्टीटुएण्ट) स्थिति अलग-अलग बनी रहती है। क० ग्रं० में प्राप्त कारकीय रूपों के आधार पर तत्कालीन भाषा में कारकों की स्थिति के बारे में निश्चयात्मक रूप से निर्णय देना कुछ कठिन सा प्रतीत होता है, क्योंकि एक ही शब्द एक ही विभक्ति-प्रत्यय के साथ विभिन्न स्थानों पर विभिन्न अर्थ देता है। उदाहरणार्थ—
-हि, -हिं, -ऐ आदि विभक्ति-प्रत्यय अधिकांश कारकों के अर्थ चेतन के लिए प्रयुक्त हुए हैं। इस प्रकार दो स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं— एक स्थिति में समस्वत्तिक (होमोफोनस) पदग्राम मिलते हैं तो दूसरी स्थिति में उनका स्थितियन्त्र मूल्य (पोजीशनल वैल्यू) भी महत्व रखता है।

वियोगात्मक स्थिति में अन्य आ० भा० भाषाओं की तरह संज्ञा के केवल दो कारक रूप प्रयुक्त हैं— मूलरूप और विकृतरूप। एक तीसरा कारक संबोधन भी प्राप्त होता है। यद्यपि संबोधन के एक वचन के रूप विकृत रूप के एक वचन के रूपों से भिन्न नहीं हैं, किन्तु बहुवचन के रूपों में जो विभक्ति-प्रत्यय संयुक्त मिलते हैं वे संयोगात्मक स्थिति के प्रतीत होते हैं। संबोधन के रूपों का उल्लेख संयोगात्मक रूपों के साथ ही किया जाएगा।

पद-रचना के प्रकार (डिक्लेन्गनल टाइप्स)

२.१.६.१ : वियोगात्मक रूप :

क० ग्रं० के संज्ञापदों के मूल और विकृत रूपों की रचना विभिन्न प्रातिपदिक अन्त्यों और दोनों लिंगों की दृष्टि से दोनों वचनों में निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत की जा सकती है—

२.१.६.१.१ : मूलरूप एक वचन—मू० रू० ए० व० में पुल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग की संज्ञाएँ व्यंजनांत और स्वरांत दोनों रूपों में प्राप्त हैं। केवल एकारांत प्रातिपदिक में स्त्रीलिङ्ग संज्ञा उपलब्ध नहीं है। मू० रू० ए० व० के वे ही रूप कहे जा सकते हैं जो संज्ञा प्रातिपदिक के रूप में पहले उल्लिखित हैं।

२.१.६.१.२ : मूलरूप बहु वचन—मू० रू० ब० व० में सभी पुल्लिङ्ग संज्ञाओं को

दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—एक वर्ग में क० अं० की वे पुल्लिङ्ग संज्ञाएँ रखी जा सकती हैं जिनमें कोई प्रत्यय नहीं लगता अथवा कुछ भाषाशास्त्रियों की दृष्टि से शून्य (०) प्रत्यय लगता है। इस वर्ग में सभी व्यंजनांत और कुछ स्वरांत संज्ञाएँ सम्मिलित हैं। इनके बहु वचनत्व का बोध वाक्य-स्तर पर क्रिया, विशेषण और संबंध कारकीय परसर्गों के आधार पर होता है। उदा०—

व्यंजनांत	महादेव +० = महादेव (कोटि) महादेव प. १५५.३
	दास +० = दास (बूढ़े) दास सा. ३१.१४.१
स्वरांत	दीवा +० = दीवा (चौंसठि) दीवा सा. १.३.१
	कवि +० = कवि कवि (जन) प. ४३.६
	लोगु +० = लोगु लोगु (कहैं) सा. ७.२.२
	साधु +० = साधु साधु (अंग न मोरहीं) सा. २.२.२
	हिंदू +० = हिंदू हिंदू (आए) प. १७८.७

क० अं० में इस प्रकार के प्रयोगों की आवृत्तियाँ बहुत मिलती हैं, किन्तु सभी आवृत्तियों का (अपने लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए) उल्लेख यहाँ नहीं किया गया है।

पुल्लिङ्ग संज्ञाओं का दूसरा वर्ग आकारान्त संज्ञाओं का है जिनमें -ए, -ऐ प्रत्ययों को संयुक्त करके बहु वचन रूप प्राप्त किया गया है। यथा—

प्रत्यय आवृत्तियाँ		उदाहरण
-ए	१३	काबा +ए = काबे प. १८४.६ (सत्तरि काबे घट ही भीतर)
		कापरा +ए = कापरे सा. १५.२६.१ (पहिराहँ कापरे)
		तारा +ए = तारे सा. १४.३६.१ (३ वार)
		घौहड़ा +ए = घौहड़े सा. २३.७.२ (अजहूँ लंबे घौहड़े)
		पाहुना +ए = पाहुने सा. १६.१४.२ (चारि दिवस के पाहुने)
-ऐ	३	बनिजारा +ऐ = बनिजारै प. १२६.३ (५ वार)
		भांडा +ऐ = भांडै प. ७६.४ (गढ़े सब भांडै)
		सदका +ऐ = सदकै सा. १.२०.१ (सदकै किया)

सू० रू० ब० व० के रूपों में स्त्रीलिङ्ग संज्ञाओं के भी दो वर्ग बनाए जा सकते हैं—प्रथम वर्ग में व्यंजनांत संज्ञा प्रातिपदिक में -ऐ जोड़कर बहु वचन रूप प्राप्त किया गया है। यथा—

-ऐ	१	बात +ऐ = बातैं सा. १५.८०.१ (ए दोइ बातैं घोइ)
----	---	----------------------------------------------

द्वितीय वर्ग में ईकारांत स्त्रीलिंग संज्ञा प्रातिपदिक में -इयां प्रत्यय जोड़कर मू० रु० ब० व० के रूप निष्पन्न हुए हैं—

-इयां(आं) =	कली	+इयां=कलियां सा. १६.३४.१ (कलियां करै पुकार)
	डाबरी	+इयां=डाबरियां सा. १६.१०.२ (डाबरियां छूटै नहीं)
	वेरी	+इयां=वेरियां सा. १५.८२.१, १५.३६.१ (वेरियां बीती)
	मोती	+इयां=मोतियां सा. २२.१०.१ (पारब्रह्म बड़ मोतियां भड़ि बांधी)

२.१.६.१.३ : विकृतरूप एक वचन—वि० रु० ए० व० की रचना मू० रु० ए० व० अथवा पुल्लिंग और स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों में शून्य अथवा विना किसी प्रत्यय और आकारांत प्रातिपदिक में -ए और -ऐ जोड़कर हुई है—

व्यंजनांत	रांम	+०=रांम सा. १.१.१ (रांम नाम कै पटतरै)
स्वरांत	कंठ	+०=कंठ सा. ३.२२.२ (कंठ कौ गहैया)
	पाला	+०=पाला सा. २५.२४.२ (पाला मैं गिला)
	केहरि	+०=केहरि प. १६६.४ (केहरि सौं लेखा)
	साई	+०=साई सा. २१.१५.१ (साई सेती)
	सतगुरु	+०=सतगुरु सा. १.१३.१ (सतगुरु की महिमां)
	जौ	+०=जौ सा. २४.६.१ (जौ की भूसी)

उपर्युक्त रूपों का प्रयोग बहुत अधिक मिलता है ।

आकारांत

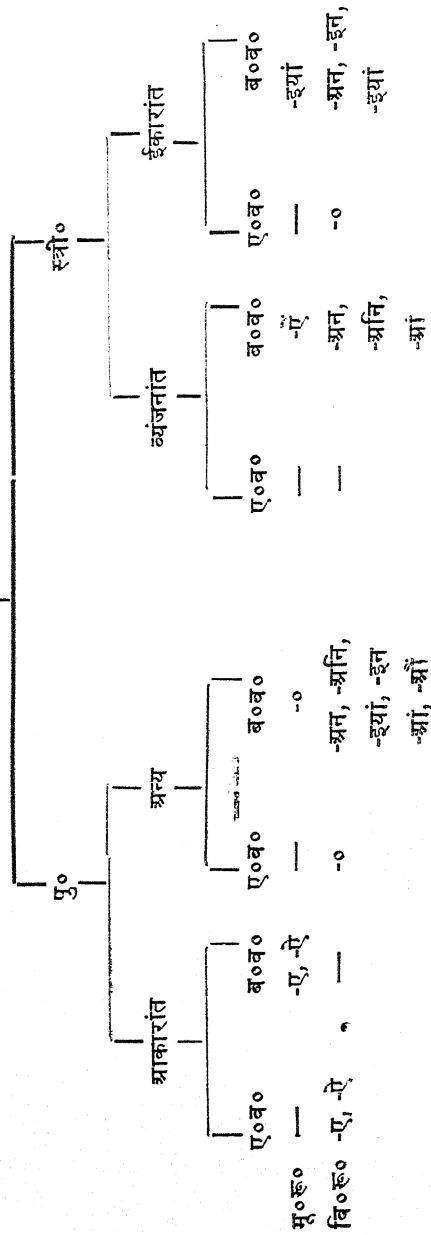
-ए	५	बंदा	+ए=बंदे प. ४१.८, सा. ८.११.१ (बंदे कौं, बंदे सौं)
		सोना	+ए=सोने सा. ३०.३.२ (सोने की होइ)
-ऐ	२	सुपिनां	+ऐ=सुपनै प. १०६.२ (सुपनै की नाई)
		सोना	+ऐ=सोनै प. ६६.५ (सोनै की लंका बनी)

२.१.६.१.४ : विकृत रूप बहु वचन—क० अं० में संज्ञा प्राति० (मू० रु० ए० व०) में निम्नलिखित प्रत्यय जोड़कर पुल्लिंग और स्त्रीलिंग वि० रु० ब० व० के रूप प्राप्त हुए हैं । ये प्रत्यय प्रायः सभी प्रकार के अंत्यों के साथ संयुक्त हुए हैं—

-अन	२६	देव	+अन=देवन प. ३३.५
(सभी पर-		नैन	+अन=नैनन प. ७६.३
सर्ग सहित)		भगत	+अन=भगतन प. ३५.७, १६१.७, १७६.६
		रस	+अन=रसन प. २.२, १३३.६

- हंस + अन् = हंसन् सा. ४.१८.१
 कुजड़ा + अन् = कुजड़न् सा. १८.१२.२
 ग्वाला + अन् = ग्वालन् र. ३.४
 आंखी + अन् = आंखियन् सा. २.३६.१
 साधू + अन् = साधुन् सा. ४.३७.२, ३२.७.२
 -अनि १७ दास + अनि = दासनि सा. १६.१४.१
 (परसर्ग सहित) फूल + अनि = फूलनि प. १४१.४
 संत + अनि = संतनि सा. ४.२४.२
 (परसर्ग ओस + अनि = ओसनि सा. ३.१६.१
 रहित) बात + अनि = बातनि प. २६.३
 सबद + अनि = सबदनि प. १६२.७
 -इन ५ मोती + इन = मोतिन् सा. २८.५.१
 (परसर्ग सहित) आंखी + इन = आंखिन् प. १३७.२
 (परसर्ग लोई + इन = लोइन् प. १७३.८, १७३.८, सा. २.४६.२
 रहित) इंद्री + इयां = इंद्रियां सा. १४.६.२
 -इयां(आं) ४ इंद्री + इयां = इंद्रियां सा. १४.६.२
 (परसर्ग सहित) आंखी + इयां = आंखियां सा. २.२३.१
 (परसर्ग चिकनी + इयां = चिकनियां प. १६१.२
 रहित) बेरी + इयां = बेरियां प. ६१.६
 -आं ६२ और + आं = औरां सा. १५.७५.२ (३ बार)
 (परसर्ग सहित) चरन + आं = चरनां सा. १७.८.२
 भगत + आं = भगतां प. १६३.७, सा. २१.४.१
 (परसर्ग कांन + आं = कांनां चौं. ८.१
 रहित) लात + आं = लातां सा. ३१.५.२
 • संत + आं = संतां सा. ३१.८.२
 (सिखरांहं सा. २२.१०.१, २२.११.१, निगुरांहं सा. २२.१०.२ और परिणांहं सा. २२.११.२ संज्ञापदों में -आं प्रत्यय ही संयुक्त है, -हं निरर्थक प्रत्यय है ।)
 -आँ ७ कुरांन + आँ = कुरांनाँ सा. ७.८.२
 (सभी परसर्ग रहित) चरन + आँ = चरनाँ सा. २५.१.२
 हाथ + आँ = हाथाँ सा. ३.२३.२, १५.२१.१
 संज्ञापदों के उपर्युक्त विवेचन अथवा उनके रचनात्मक विभक्ति-प्रत्ययों को एक साथ ही तालिका में इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है—

संज्ञा प्रातिपदिक



२.१.६.२ : संयोगात्मक रूप

२.१.६.२.१ : कर्त्ता कारक : क० ग्रं० में कर्त्ताकारक के अर्थ को प्रकट करने के लिए -ऐ, -ऐं, -आं (विकृत रूप बोधक) विभक्ति-प्रत्यय मूल संज्ञा प्रातिपदिक में प्रयुक्त हुए हैं। इस प्रक्रिया में सकर्मक क्रिया भूतकालिक कृदन्तीय रूपों के साथ कर्मणि प्रयोग में प्रयुक्त हुई है। इसे कर्तृवाचक अथवा ने अर्थ सहित कर्त्ता रूप कह सकते हैं।

प्रत्यय आवृत्तियाँ

उदा०

-ऐ १५ कबीर +ऐ=कबीरै सा. २६.२.२ (२ बार) (कबीरै कीन)
जसवा +ऐ=जसवै र. ३.३ (जसवै लै गोद खिलावा)
जोलाहा +ऐ=जोलाहै प. ५३.७ (जोलाहै...पाई)
बिड़ा +ऐ=बिड़ै सा. ४.१.१ (बिड़ै वेधे)
सूवा +ऐ=सूवै सा. २६.६.२ (सूवै सैत्रल सेइया)

बहुवचन में भी एक प्रयोग मिलता है, किन्तु इसमें ने रहित कर्त्ता रूप प्राप्त है।

हीरै सा. १५.५५.१ (जड़िया हीरै लालि)

-ऐं १+१ कबीर +ऐं=कबीरै प. ११८.१० (कबीरै सो धनु पाया)
बहुवचन चिड़िआ +ऐं=चिड़िआँ सा. १५.५४.१ (चिड़िआँ खाया खेत)
-आं ५ विधिनां +आं=विधिनां सा. १५.५८.१ (२ बार) (विधिनां
...रचे)

मीर +आं=मीरां प. १०२.३ (२ बार) (मीरां...कीन्हां)
सूरिवां +आं=सूरिवां स. १४.३६.२ (खेत बुहारा सूरिवां)

विना प्रत्यय अथवा शून्य (०) प्रत्यय से संयुक्त रूप भी कर्त्ताकारक का अर्थ प्रकट करते हैं। इन रूपों में ने रहित और ने सहित दोनों रूप प्राप्त हैं।

कबीर +०=कबीर सा. २६.१८.२ (कई बार) (कहै कबीर)
कोंहरा +०=कोंहरा प. ७६.४ (एकै कोंहरा सांनॉ)
गोपाल +०=गोपाल प. १३०.६ (तहं पउड़े सीगोपाल)
सरसती +०=सरसती प. १४६.७ (सरसती धारै राग)
आउ +०=आउ प. ६८.५ (आउ घटै)
गुरु +०=गुरु सा. ६.१६.२ (गुरु दिखाई बाट)
दौं +०=दौं सा. २.७.१ (हिरदै भीतरि दौं बलै)

२.१.६.२.२ : कर्म-सम्प्रदान : क० ग्रं० में कर्म-सम्प्रदान का द्योतन करने के लिए -इ, -उ, -ऐ, -(अ) हिं, हीं विभक्ति-प्रत्यय संयुक्त हुए हैं। बांंहि सा.

२.१.२, ५.८.२ और बांहीं प. १४६.५ में -हिं अथवा -हीं प्रत्यय संयुक्त नहीं हुए हैं, अपितु अनुनासिकता ही संयुक्त हुई है।

- इ ६ तीरथ +इ=तीरथि प. ३.३ (अपराधी तीरथि चले)
 बाग +इ=बागि सा. ३०.१६.१ (बिरला था मैं बागि)
 मान -इ=मानि सा. १५.८१.२ (मानि निवारि)
 लोह +इ=लोहि सा. १.३०.१ (तातैं लोहि लुहार)
- उ ६६ घर +उ=घरु प. १६८.२ (घरु मूसन लागा)
 पद +उ=पदु प. ३२.६ (परम पदु पाया)
 रस +उ=रसु प. ५५.१ (रांम रसु पीआ रे)
 रांम +उ=रांमु प. २०.१० (रांमु करि सनेही)
- ऐ १० अंगार +ऐ=अंगारै प. ११४.८ (चकवा बैठि अंगारै निगलै)
 कबीर +ऐ=कबीरै सा. ६.२.२ (कबीरै बुरा न कोइ)
 कूड़ा +ऐ=कूड़ै सा. १५.३६.१ (कूड़ै चित्त न लाइ)
 चित्र +ऐ=चित्रै चौं. ११.१ (तजि चित्रै)
- ऐं (ब०व०) १ पियादा +ऐं=पियादै सा. १४.५.२ (पंच पियादै पारि करि)
- (अ) हिं, हीं ३४ + १ करम +हिं=करमहिं प. १५६.६ (करमहिं किन जिउ दीनु रे)
 खसम +हिं=खसमहिं प. १५६.६, चौं. ७.२ (खसमहिं छाड़ि)
 नांम +हिं=नांमहिं र. ६.३ (सो जो नांमहिं)
 बांही +हीं=बांहीं प. १४६.५ (गहि बांहीं)

बिना प्रत्यय अथवा शून्य प्रत्यय से संयुक्त रूप भी कर्म-संप्रदान का चोतन करते हैं—

- जगदीस +०=जगदीस सा. ३१.५.२ (सुमिरि सुमिरि जगदीस)
 दसा +०=दसा प. २८.१ (दसा लिए डोलै)
 नरहरि +०=नरहरि प. १०.६ (नरहरि भेंटिए तू)
 मुरारि +०=मुरारि सा. ३.२.१ (जपै मुरारि)
 माली +०=माली सा. १६.३४.१ (माली आवत देखि कै)
 सपै +०=सपै प. ८२.६ (सपै देखि न हरखि)
 सरसौ +०=सरसौ सा. २४.६.२ (कांची सरसौ पेलि कै)

२.१.६.२.३ : करण-अपादान : करण-अपादान के चोतन के लिए -इ, -इयां, -आं, -ऐं, -ऐ, -(अ)हिं, -(अ)हुं विभक्ति-प्रत्यय संयुक्ति हुए हैं—

- इ १५ तरस +इ=तरसि प. १३५.३ (जेठ कै तरसि डरौं)

भरसाद	+इ=परसादि र. १८.८ (६ बार) (गुरु परसादि कबीर कहि)
मांन	+इ=मांनि सा. ३१.३.२ (मांनि बड़े मुनिवर गिले)
सर	+इ=सरि सा. २.५५.१, २.५५.२ (जिहि सरि मारा काल्हि, तिहि सरि अजहुं मारि)
हाथ	+इ=हाथि सा. १५.२६.२ (मारिआ... अपनै हाथि)
-इयां, -आं	बड़ाई +इयां=बड़ाइयां सा. २२.८.२ (बूड़ा बांस बड़ाइयां)
१+५	ओस +आं=ओसां सा. ३.१६.२ (ओसां प्यास न भाजई)
	पवन +आं=पवनां सा. २६.३.२ (पवनां वेगि उतावला)
	मुख +आं=मुखां प. १६.३ (मुखां न बोला)
	मेह +आं=मेहां सा. ३१.१३.२ (मेहां कुम्हिलाइ)
-ऐं ५	कलमां +ऐं=कलमें प. १८४.५ (कलमैं भिस्ति न होई)
	नीर +ऐं=नीरैं प. ११६.६ (बिनु नीरैं सरवर भरिया)
	पुन +ऐं=पुनैं सा. १५.६३.२ (पुनैं पाया देह रे)
	सुरत +ऐं=सुरतैं प. ११५.६ (सुरतैं तहां कछू न पावा)
-ऐ १२	मत +ऐ=मतैं सा. २६.२३.१ (मन कै मतैं न चालिए)
	षंड +ऐ=षंडै प. ११६.४ (बिनु षंडै)
	संजोग +ऐ=संजोगै र. ५.५ (संजोगै करि गुन घरा)
	सबद +ऐ=सबदै सा. १५.१८.२ (जा सबदै साहि मिलै)
-(अ) हिं, हुं	मन +हिं=मनहिं सा. ३१.१८.२ (मनहिं उतारि)
१+१	मन हुं=मनहुं प. ६८.७ (रांम नांम जिन मनहुं बिसारद्यौ)

शून्य अथवा विना प्रत्यय वाले रूप—

अस्तुति +०=अस्तुति प. ३२.३ (अस्तुति...बिबरजित)

बपु +०=बपु प. १२४.३ (बपु बिहांनां सोई रे)

• लेजु +०=लेजु प. ६५.४ (एकै लेजु भरै नौ नारी)

उपर्युक्त विभक्ति-प्रत्ययों के अतिरिक्त क० अं० में संस्कृत की तृतीया विभक्ति

के तीन तत्सम प्रयोग भी प्राप्त हुए हैं—

मनसा सा. ३.७.२

बाचा सा. ३.७.२

कर्मनां सा. ३.७.२

२.१.६.२.४ : संबंधकारक : संबंधकारक के द्योतन के लिए -उ, -ऐ, -(अ)ह, -(अ)हं

प्रत्यय संयुक्त हुए हैं—

- उ २ सरीर +उ=सरीरउ सा. ४.२०.२ (पाप सरीरउ जाहि)
 वेद +उ=वेदु प. १६६.८ (वेदु भरोसै पांडे डूबि मरहि)
- ऐ ३ देवा +ऐ=देवै र. ३.३ (देवै कोखि न अवतरि आवा)
 सोनां +ऐ=सोनै प. १३१.५ (सोनै बूंद बिकाइ)
 प. १६.६ (सोनै संग सुहागा)

- (अ)ह, हं थांभ +ह=थांभह चौ. २२.२ (बिनहीं थांभह)
 १+१ मन +हं=मनहं प. १३१.४ (मनहं पाट की सैली रे)

शून्य अथवा विना प्रत्यय वाले रूप—

- पंजर +०=पंजर सा. २.३३.१ (पंजर पीर न जाइ)
 अगिनि +०=अगिनि प. ६६.४ (अगिनि संग जाली)

२.१.६.२.५ : अधिकरणकारक : अधिकरण कारक के अर्थ के द्योतन के लिए -आं, -आ, -इ, -ए, -ऐ, -ऐं, -(अ)हि, हीं विभक्ति-प्रत्यय संयुक्त हुए हैं। मुहि सा. २१.२६.२, प. २३.३ में केवल अनुनासिकता संयुक्त हुई है—

- आं -आ १८ अकास +आं=अकासां प. ११४.८ (समद अकासां धावा)
 सा. २०.८.१ (अनल अकासां घर किया)
- अकास +आ=अकासा प. ३४.७ (चित देइ अकासा)
 गांव +आं=गांवां प. ४१.३ (देही गांवां जिउधर महतो)
 रूख +आं=रूखां सा. २.५४.२ (मंछी रूखां चढ़ि गई)
- इ २८० घर +इ=घरि प. ११७.८ (तिसि घरि जाइअँ)
 चाक +इ=चाकि सा. १२.१.२ (न चढ़ई चाकि)
 नरक +इ=नरकि सा. ३२.७.२ (बंदा नरकि न जाइ)
 पताल +इ=पतालि सा. १६.६.१ (सेजा किया पतालि)
- ए ८ हिय +ए=हिए र. १६.६ (लागै हिए)
 गला +ए=गले सा. ६.१.२ (गले रांम की जेवरी)
 सासुर +ए=सासुरे प. १०६.१ (मैं सासुरे पिय गौहनि आई)
- ऐ ८६ ओल्हा +ऐ=ओल्है सा. ७.१२.१ (तिनकै ओल्है रांम है)
 करेजा +ऐ=करेजै सा. १.६.२ (परा करेजै छेक)
 कावा +ऐ=कावै सा. २१.७.१ (क्या हज कावै जाई)
 धोखा +ऐ=धोखै सा. २०.५.२ (धोखै पड़े)
- ऐं ४१ आकास +ऐं=आकासैं प. ११२.६ (आकासैं फरु फरिया)

कोना	+ऐं=कोनै सा. ३०.१.२ (कोनै बैठे खाइए)
माथा	+ऐं=माथै प. १०६.४ (माथै हलदि चढ़ाई)
सरन	+ऐं=सरनै प. १६१.८ (रांम की सरनै)
-(अ)हिं, हीं	पद +हिं=पदहिं प. ११३.१० (जौ नहिं पदहिं समांनं)
३१+२	भेद +हिं=चौं. २६.१ (भेदहिं भेद मिलावा)
जल	+हीं=जलहीं प. २००.४ (जलहीं डुरि मिलि गयौ)
मन	+हीं=मनहीं प. १३४.१ (मनहीं उलटि समांनं)

शून्य अथवा विना प्रत्यय वाले रूप—

ठाइं	+०=ठाइं सा. ४.३३.२ (पकड़ि जु राखै ठाईं)
नाइं	+०=नाइं सा. ४.४१.१ (रत भए हरि नाइं)
डारी	+०=डारी सा. ८.३.२ (जिहि डारी पग धरौं)

२.१.६.२.६ : संबोधन : पहले कहा जा चुका है कि संबोधन ए० व० के रूप विकृतरूप ए० व० के रूपों से भिन्न नहीं हैं जैसे—

मन	+०=मन प. ५८.१ (डगमग छाड़ि दे मन बौरा)
बंदा	+ए=बंदे प. १००.६ (कहत कबीर भजन विन बंदे)
बौरा	+ए=बौरे प. ६४.४ (सुद्ध किया नहिं बौरे)

क० प्र० में संबोधन के ए० व० में विशेष प्रयोग भी मिलते हैं। अकारांत और आकारांत शब्दों में -ऐ संयुक्त भिलता है—

गोविंद	+ऐ=गोविंदै प. १२१.१ (गोविंदै तुम्हारै वन कंदलि मेरो मन अहेरा खेलै)
बावरा	+ऐ=बावरै प. ६६.१ (नांम (रांम ?) सुमिरि नर बावरै)

किन्तु संबोधन कारक के बहुवचन में -औ और -(अ)हु प्रत्यय संयुक्त हुए हैं जो विकृतरूप ए० व० के रूपों से भिन्न हैं। इन्हें संयोगात्मक रूप का प्रयोग कह सकते हैं—

-औ २३	संत +औ=संतौ सा. ३.१२.२ (११ बार) (कहौ संतौ)
साध	+औ=साधौ प. १५८.१ (१२ बार) (साधौ करता करम तैं न्यारा)

-(अ)हु १ संत +हु=संतहु प. ४१.७ (सुनहु रे संतहु)

इस प्रकार कारक-रचना के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि क० प्र० में वियोगात्मक स्थिति में मूलरूप, विकृतरूप और संबोधन, तीन कारक प्राप्त होते हैं;

किन्तु संयोगात्मक रूपों में अपभ्रंशकालीन प्रायः सभी कारकों के रूप प्राप्त होते हैं। -आं -इ, -उ, -ए, -ऐ, -ऐं, -(अ) हि, हीं, हुं आदि विभक्ति-प्रत्ययों का प्रयोग कई कारकों में प्राप्त हुआ है। इसका प्रमुख कारण यही है कि जहाँ एक स्थिति में समस्वनिक (होमोफोनस) पदग्राम प्राप्त हुए हैं वहीं दूसरी स्थिति में अपने स्थिति-जन्य मूल्य के कारण वे विभिन्न कारकों का अर्थ प्रकट करते दिखाई देते हैं। इस प्रकार क० ग्रं० में संयोगात्मक रूपों में प्रायः समानता अथवा एकरूपता दिखाई पड़ती है। यह प्रवृत्ति संभवतः बहुत पहले से ही प्रारंभ हुई होगी। इसके कारण कारकों के अलग-अलग अर्थ समझने में कुछ कठिनाई पैदा होने लगी, अतएव कारकों के अर्थ को अधिक स्पष्टता देने के निमित्त कारकीय परसर्ग (संभवतः अपभ्रंश काल से ही) जोड़े जाने लगे। क० ग्रं० में संयोगात्मक रूपों के पर्याप्त प्रयोग मिलने पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि कबीर के समय संयोगात्मक पद्धति प्रधान थी, क्योंकि क० ग्रं० में वियोगात्मक स्थिति के रूप कम नहीं मिलते। उसमें परसर्गों के बहुत अधिक प्रयोग प्राप्त हैं (जिनका विवेचन कारकीय परसर्ग के अन्तर्गत किया गया है)। इसलिए क० ग्रं० में वियोगात्मक स्थिति की प्रधानता ही मान्य होनी चाहिए।

२.१.७ : कारकीय परसर्ग

प्रातिपदिकों के साथ प्रयुक्त विकारीय कारकीय प्रत्ययों के अतिरिक्त क० ग्रं० में स्वतंत्र परसर्गों का प्रयोग भी बहुत मिलता है। इन परसर्गों की सहायता से संज्ञा और संज्ञा, संज्ञा और विशेषण तथा संज्ञा और क्रिया के बीच कारकीय अर्थ प्रकट किए गए हैं। संज्ञाओं की अपेक्षा सर्वनामों के साथ इन परसर्गों का प्रयोग अधिक हुआ है। विभिन्न कारकों के अर्थ के द्योतन के लिए प्रयुक्त परसर्ग इस प्रकार हैं—

२.१.७.१ : कर्त्ताकारक-परसर्ग : इस कारक के लिए कोई भी परसर्ग प्रयुक्त नहीं हुआ है।

२.१.७.२ : कर्म-सम्प्रदान : कर्म-सम्प्रदान के लिए +कै, +को, +कौ, +कों, +कउं, +कउ, परसर्गों का प्रयोग हुआ है। नीचे प्रत्येक के आवृत्ति-सहित उदाहरण दिए गए हैं। जिन परसर्गों के प्रयोग बहुत अधिक प्राप्त हैं उनके एक या दो ही उदाहरण दिए गए हैं, साथ ही उनकी पूरी आवृत्तियों की संख्या मात्र दी गई है। कम प्रयोग वाले परसर्गों के सभी संदर्भों की छंद संख्या भी दी गई है।

परसर्ग आवृत्तियाँ

उदा०

विशेष

+कै ३

जाकै लागी प. २६.४

इस परसर्ग का

कतहूँ कै जासी र. २०.१

प्रयोग संबंध कारक

सतगुरु कै सदकै करूँ सा. १०.२०.१ के लिए भी हुआ है।

- +को १ बहते को सा. १५.८६.१ संबंध कारक के लिए भी प्रयुक्त
- +कौ ५ (कर्म) ताही कौ (कर्म) चौं. २०.२ संबंध कारक के अन्यत्र- प. २६.१०, ४६.४, १२८.८, १६०.४ लिए भी प्रयुक्त
- ८ (सम्प्र०) व्यासे कौ नीर (सम्प्र०) प. १३.६ अन्यत्र-प. १३.६, ३३.५, ७५.१०, १८४.३, १६५.१३, सा. ४.४२.१, ६.२.२
- +कौं ८४ (कर्म) जाकौं जेता निरमया (कर्म) सा. ३२. संबंध कारक के लिए भी प्रयुक्त
- ६१ (सम्प्र०) खावे कौं (सम्प्र०) सा. ३२.४.१
- +कउं १ मोकउं कहा पढ़ावसि प. २६.४
- +कउ १ तिसु काजी कउ जरा न मरनां प. १२८.६

एक स्थान पर संबंधकारकीय परसर्ग से कर्मकारक का अर्थ प्रकट होता है—बिख के खाएं का गुन होई र. १२.५

२.१.७.३ : करण-अपादान :

- +तैं १ (करण) लागे तैं भागै नहीं सा. १४.२२.२
- +ते १ (अपा०) कबीर सभ ते हंम बुरे सा. १५.३२.१
- +तैं १३ (करण) साधन तैं सिधि पाइए (करण) प. १०.६
- ८८ (अपा०) पढ़िबा तैं भल जोग (अपा०) सा. ३३.२.१
- +सनां १ (करण) मोहिं सनां प. १०३.२
- +सवां १ („) जौ हारौं तौ हरि सवां(नां ?) सा. १४.२१.१
- +सनि १ („) का सनि र. ६.७
- +सिउं १ („) सकल सिउं प. १६१.२
- +सूं १ (अपा०) हमसूं बाधिनि न्यारी प. १६५.१०
- +सें १ (करण) मोसे मुखहुं न बोला प. १३६.२
- +से २ („) तुमसे प. १५.४, ६४.५

+सेती १० (,,) नारी सेती नेह (करण) सा. ३०.६.१
 १ (अपा०) हरिजन सेती रूसनां (अपा०) सा. २४.
 १५.१

+सों १ (करण) जुगुति सों चौं. १३.१

विन्दी छापे की भूल
 के कारण प्रतीत
 होती है।

+सौं १०८ (करण) सीस उतारै हाथ सौं (करण) सा.
 १४.१८.२

११ (अपा०) वासन सौं खिसै (अपा०) सा. १५.७६.२

विशेष:—‘सौं’ का एक प्रयोग इस प्रकार है—

बेस्वा केरा पूत ज्यों
 कहै कौन सौं बाप सा. ३.२०.२

यहां सौं का अर्थ
 को है।

२.३.७.४ : संबंधकारक :

+क ४ हजारि क सूत प. ११०.१
 कासी क जोलहा प. १८३.३
 कासी क जुलहा प. १६६.७
 बट क बीज चौं. ४.२

+कर ८ जेहि कर सर लागै हिए र. १६.६
 अन्यत्र—प. ७८.४, १५२.७, सा. २०.
 ६.२ र. ४.६, ६.७, १२.३, १७.५

+करि १ भैं दूजा करि मारै प. १८३.६

यहाँ करि का का
 अर्थ है।

+का १८० मोहिं भरोसा इस्ट का सा. ३२.७.२

+की २८७ हरि मोतिन की माल है सा. २८.५.१

+के ८८ बिरलै दोस्त कबीर के प. ६६.१

+केर २ कला केर गुन ठाकुर मानै र. १६.३

दुहुं केर बिनासा र. १८.४

+केरा ७ बेस्वा केरा पूत सा. ३.२०.२

अन्यत्र—प. १७७.६, सा. १५.४०.२,

१६.२१.१, २६.१.१, २८.४.१, २६.

२३.२

+केरी ८ अंगित केरी पूरिया प. ३४.३

केरा का स्त्रीरूप

		अन्यत्र-सा. १२.१०.१, २४.७.१, २२.८.१, २६.२.१, २६.१८.१, २६. १८.१, ३०.१२.१	
+केरे	२	करता केरे बहुत गुन सा. ६.५.१	केरा का विकृतरूप
		साईं केरे बहुत गुन सा. २.४४.१	
+केरै	४	इंद्री केरै बसि पड़ा सा. ३०.२४.२ अन्यत्र-सा. २१.२१.१, ३०.४.१, ३०.१४.१	
+कै	१४४	जाकै मुहं सा. ७.७.१	
+को	५	रांम को पिता प. १५८.५ अन्यत्र-प. २१.४, ११३.८, १३८.८, सा. १५.३०.२	
+कौ	४	भांति भांति कौं नाज सा. ३२.२.१, अन्यत्र-प. १६२.५, सा. २१.२४.१ २४.१८.१	
+कौ	४५	तन कौ चांम सा. ४.१३.२	

२.१.७.५ : अधिकरण कारक :

+ऊपर	१	हैवर ऊपर छत्र तर सा. १५.२४.२	
+ऊपरि	१३	सिर ऊपरि तुम धनीं सा. ८.१.२.२	
+ऊपरै	२	मीन तलै जल ऊपरै प. ३४.५ काल खड़ा सिर ऊपरै सा. १६.२८.२	
+पर	६	म्रिगछाला पंर बैठे कवीर प. २४.४	
+परि	४	सिर परि चढ़ै सा. २१.२६.२ अन्यत्र-प. ४.८, सा. ३.६.२, सा. १४.१४.२	
+पै	३	तापै सहजै आवै प. ३४.१४ अन्यत्र-प. ८६.४, १७५.६	
+पै	६	हंमहूं पै आई प. १६४.६ अन्यत्र-प. ४२.६, १७६.११, सा. २. ३२.१, २.४०.२, १७.६.१	
+पहि	४	उन हरि पहि क्या लीनां प. ८६.८ अन्यत्र-प. ११८.४, १६८.३, १६६.२	

+ मंभा	१	पंच चोर गढ़ मंभा प. ७२.३
+ मंभारि	२	तीनिउ लोक मंभारि सा. ३०.२.१ संतन हृदय मंभारि प. ८२.८
+ मंभि	१	बोल अबोल मंभि है सोई चौं. ३.२
+ मंभै	१	सोरह मंभै पवन भकोरै प. ११२.६
+ मभारं	१	पैसीले गगन मभारं प. ११५.५
+ मभार	१	काया नग्न मभार प. १४४.४
+ मभारी	१	फिरि गयीं गगन मभारी प. १५१.१
+ महं	३	दोनों महं लीनां र. १८.५ अन्यत्र- र. १७.८, चौं. १८.१
+ महि	४३	दिल महि खोजि प. १७८.८
+ मांभ	१	फिरै कलि मांभ प. ६४.४
+ मांभि	१	उरधैं मांभि वसेरा चौं. २४.१
+ माहि	५१	लिखे जु हिरदै माहि सा. २.४४.१
+ मांहीं	१६	मन मांहीं अहलाद सा. ३०.२३.१
+ माहैं	६	वर ही माहैं वेरि सा. २६.१६.१ अन्यत्र-सा. १.५.१, ६.१०.१, ६.१०. २, ६.१४.२ ६.१४.२, ६.१६.१, १६.६.१, र. १.२
+ में	१	पानीं में की माछरी सा. १६.३८.१
+ मैं	१२६	नाम (राम) भजा सोइ जीता जग मैं प. ६४.१
+ म्यांनै	२	खालिक खलक म्यांनै प. ८७.६ असमान म्यांनै लहंग दरिया प. ८७.७
+ मद्धे	४	इस तन मन मद्धे मदन चोर प. ४३.३ अन्यत्र- प. १२५.३, १३०.१७, १८६.३
+ सिर	१	सबही ऊभा पंथ सिर सा. १५.४३.२
+ सिरि	२	बिरहिन ऊभी पंथ सिरि सा. २.३१.१ पंथी ऊभा पंथ सिरि सा. १६.३०.१

२.१.७.६ : संबोधन कारक : संबोधन कारक के अर्थ के द्योतन के लिए संज्ञा के पूर्व निम्नलिखित विस्मयादि बोधक शब्दों को प्रयुक्त करके संबोधन की सूचना दी गई है—

री ३ कागद केरी नाक री सा. २६.१८.१

रे	१६५	सुनहु रे लोई प. २००.५
हे	५	हे सखी सा. ४.३५.२
हो	३२	हो कंता प. १२४.२

२.१.८ : परसर्गवत् प्रयुक्त अन्य परसर्गीय पदावली : कारकीय परसर्गों के अतिरिक्त अन्य परसर्ग भी क० ग्रं० में प्रयुक्त हुए हैं। इन परसर्गों की सूची अकारादि क्रम से इस प्रकार है—

अंतर	अंतरघट सा. १५.१७.२
अंतरि	सुख अंतरि प. ५१.१ सा. २.४७.१, ११.१२.१
अंतरै	गंग जमुन के अंतरै सा. १०.७.१
आगै	मुहं आगै सा. १६.३०.२ (५ बार)
करि	प्रांन करि राखै प. ८०.४ (१४ बार)
कारन	जा कारन सा. २.६.१, ४.४३.१, चौं. १५.२
कारनि	जेहि कारनि सा. २६.३.२ (६ बार)
कारनै	कुल कै कारनै सा. २२.१३.१ (६ बार)
काठै	केरा काठै बेर सा. २१.८.१, २४.२.१
कै	सांच कै जानां र. १४.२
खीनां	गुन खीनां र. १८.५
गौहनि	पिय गौहनि प. १०६.१, सा. ३१.२४.१
जोग	करनै जोग सा. ८.१.१
जैसै	माया जैसै प. १६४.५ (समान अर्थ है)
ज्यूं	आगि ज्यूं सा. ३०.१७.२
ज्यौं	मिरिग ज्यौं सा. ७.६.२ (१८ बार)
ठौर	काठ की ठौर सा. २५.७.२
डिंग	चंदन कै डिंग प. १६६.३
तर	छत्र तर सा. १४.१५.२, १५.२४.२, २०.२.२
तलि	विरिछि तलि सा. २.१२.२ (५ बार)
तेह	बोही तेह सा. २२.६.२
दूरि	अनगाया तै दूरि सा. ३२.१४.१
नजीकि	भिस्ति नजीकि प. ४२.८
नाई	भ्रिग की नाई प. १८.५, १०६.२, १७७.१
निकटि	दुहुं कै निकटि सा. २०.६.२, ३०.१८.२
न्याइ	न्याइ तमाचा खाइ सा. ११.३.२ (तरह अर्थ है)

रहित	त्रिगुण रहित प. ५३.८ (४ बार)
वत	नट वत र. ११.४
लगि	कौड़ी लगि प. ६०.१, १००.३ (कारण अर्थ है)
लागि	कामिनीं लागि प. ६७.६, सा. ३१.२.१
लागे	लोभ लागे प. ६०.१, र. १५.४ (के लिए अर्थ है)
लागै	लालच लागै प. ७४.३ (, ,)
लौं	सुन्नि लौं सा. १०.७.१ (४ बार)
संग	मूरिख संग सा. २४.११.१ (१० बार)
संगा	काठ कै संग प. ७६.५, र. २०.२
संगि	साकति संगि सा. २४.६.२ (१२ बार)
सई	सोधी सई सा. १.२.१, १.२.२ (समान अर्थ है)
सनमुख	साहिब सौं सनमुख सा. १५.६५.२
सम	तुम सम प. ४५.३ (४ बार)
समसरि	तुम्ह समसरि प. ३६.१०, ३६.१०
समान	सुपिन समान प. ६७.३, १५३.४
सरिखा	रांवन सरिखा सा. १२.१०.२, १५.६४.२
सरीखे	आपु सरीखे सा. ४.१.२, ४.४३.२
सा	लंका सा कोट प. ६६.४, चौं. ३०.२
साथ	रांडनि कौ साथ प. ११०.१०
साथा	साहि कै—साथा र.३.१
साथि	मन कै साथि सा. २५.२०.१ (६ बार)
सारिख	सारिख रांम र. २.६ (समान अर्थ है)
सारिखे	मरघट सारिखे सा. ४.६.२
साम्ही	सतगुरु साम्ही मूठि सा. २४.१२.२
सी	समुंद सी प. ६६.४ ६६.४
सौं	पसुवा सौं सा. २२.७.१ (५ बार)
हित	जिहि हित र. १७.७
हीनां	जिभ्या हीनां प. ४६.३, १०८.५, १८८.५
हेत	भगति हेत प. २६.१०, हा. १४.१२.१
हेतु	भगति हेतु प. १५४.४

२.१.६ : संयुक्त-परसर्ग :

में की

पांतीं में की माछरी सा. १६.३८.१

माहि के :	जंगल माहि के प. १६१.४
के मांहीं :	सो संतन के मांहीं प. ३३.६
कै ताई :	भौ सागर कै ताई प. ११.३, सा. ६.१२.१

विशेषण

२.२ : क०ग्रं० में संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया और अव्यय पदों की अपेक्षा विशेषण पदों का प्रयोग बहुत कम मिलता है। काव्य-प्रतिभा के प्रकाशनार्थ विशेषणों की श्रृंखला प्रस्तुत कर देने वाले कवियों की कृतियों में ही विशेषणों की भरमार रहती है। क० ग्रं० में इस दृष्टिकोण का सर्वथा अभाव है। उसमें ऐसे ही विशेषणों का प्रयोग हुआ है जो कबीर की स्वानुभूति के क्षेत्र से संबंधित थे। क्षेत्रीय दृष्टि से मध्यदेश में प्रचलित विशेषण ही उसमें प्रयुक्त हुए हैं। अर्थ की दृष्टि से विशेषण के गुणवाचक, सार्वनामिक और संख्यावाचक भेद किए जा सकते हैं।

२.२.१ : प्रातिपदिक

२.२.१.१ : गुणवाचक प्रातिपदिक

प्राति०

उदा०

२.२.१.१.१ : व्यंजनांत

ऊंच (घर) प. १६६.५

+ संयुक्त व्यंजनांत

भीन (दोस्त) सा. २६.३.१

(अकारांत) (१६६)

टेढ़ (पगरी) प. ४४.२

सरस चौं. ३३.१

अंध (कुहेरा) प. ८५.१ (३ बार)

२.२.१.१.२ : स्वरांत :

आकारांत

(१०३)

अंधा प. १८६.६ (४ बार)

ऊजरा सा. २२.३.२

खोटा सा. १६.४.१

सिलहला प. १४६.३

हरुवा सा. ७.६.१

- इकारांत (२०) ऊंचि सा. ३३.७.१
त्रिखि (डांडनि) प. १६२.८
भयावनि (रैनि) र. १३.६
सुंदरि (काया) प. ८८.३
सुठि (सेवग) सा. २४.१३.१
- ईकारांत (८६) कड़ियाली सा. ३१.११.२
छोछी (नली) प. १११.६
सांकरी सा. २०.२.१, २६.१०.१
सांची र. १०.७
हजारी (सूत) प. ११०.१, सा. ४.३४.१
- उकारांत (४) अथाहु प. ४३.७
अनूप प. ८०.३, ८०.७
खीनु प. ६.३
सु (घटु) चौ. ६.२
- ऊकारांत (७) अनभेद प. १४६.५
कुरु (गड़ाई) सा. १५.७८.२
गरु र. २.३
बटाऊ (लोग) सा. १४.३.२, १६.२२.२
लदाऊ प. १७६.४
साधू (जनां) सा. ३०.१६.२
हरु र. २.३
- एकारांत अभाव है ।
- ओकारांत (३) पियारो सा. ३१.२४.१
बड़ो प. १५४.४, सा. १५.३४.२
भलो सा. १६.१३.१, ३३.२.१
- ऐकारांत (३) अखै (पद) चौ. ७.२
अनभै चौ. ४१.२
अभै (पद) प. १५५.१८ १७०.८
- औकारांत (३) न्यारौ प. १७६.१
बैसनौ (पूत) सा. ४.३८.१
सगौ प. १३५.६

निम्नलिखित प्रयोगों में ज्यूं, ज्यों, सार्वनामिक विशेषण की तरह प्रयुक्त मिलते हैं—

जंडुक केहरि कै ज्यूं संगी र. १६.२
ज्यों पांनीं सरवंग सा. १६.८.२
हरिजन ऐसा चाहिए
ज्यों धरनीं की खेह सा. १६.७.२

२.२.१.२.२ : परिमाणवाचक सार्वनामिक विशेषण :

केतिक सा. १५.३६.२
किता सा. १५.३६.१
जेता सा. ४.२१.१, ६.१४.१, ३२.१५.१
तेता सा. ४.२१.१, ३२.१५.१

परिमाणबोधक विशेषण के लिए निम्नलिखित शब्दावली प्रयुक्त हुई है :

अधिक प. ७५.७, सा. १४.३३.१
अषट् सा. १.१५.१
रंचक सा. ३.११.१
टुक प. ८७.४, सा. २१.३.१
तनक प. ११.२
वरिस प. १३६.४
किंचित र. १७.२, १६.३, १६.५
घनेरा प. ८६.३
थोड़ा सा. १५.४३.१
चुरुआ (पांनीं) प. १६७.४
अति प. ५८.८ (५ बार)
पूरि र. १६.५
• अधिकी सा. २६.१०.२
घनेरी प. ४२.६
थोरी प. ७३.१
पूरी सा. ४.१२.२, ३१.६.२
बहु सा. ६.२५.१ (७ बार)
अलपै र. १५.१
अधिकै र. ७.५
थोरै चौं. २२.२

२.२.१.२.३ : संख्यावाचक सार्वनामिक विशेषण :

केतक (बीजि) सा. २२.७.२

केतिक (भालि) सा. १६.३.२

केती (माछली) सा. ४.३२.१, ३०.४.२

केते (दिन) प. ३७.३ (५ बार)

जेते (औरति) प. १७७.१३, सा. १४.३६.१

तेते (अपराध) प. ३७.३ सा. १४.३६.१

२.२.१.३ : संख्यावाचक विशेषण :

यद्यपि विभिन्न अंत्यों की दृष्टि से संख्याओं का विभाजन किया जा सकता है, इस दृष्टि से व्यंजनांत और अकारांत ६५, आकारांत १२, इकारांत १४, ईकारांत १६, उकारांत ४, एकारांत, १, ओकारांत १, ऐकारांत ५ और औकारांत २ संख्याएँ क० ग्रं० में प्रयुक्त हुई हैं, किन्तु संख्याओं का विभाजन दूसरे प्रकार से किया जाता है। उनके प्रकार-निर्धारण में एक विशिष्ट प्रकार का क्रम पाया जाता है; अतएव यहाँ उसी क्रम में गणनावाचक, अपूर्णाक-वाचक, क्रमवाचक, आवृत्तिमूलक, परत या प्रकारवाचक, समुदायवाचक तथा अनिश्चित संख्याओं की सूची प्रस्तुत है—

२.२.१.३.१ : गणनावाचक :

इक सा. ६.१२.१ (१३ बार)

एक सा. ४.५.१ (११३ बार)

एकु प. १२६.३

एकै र. १०.८ (१६ बार) (अवधारण सूचक)

एको प. १३३.८

एकौ सा. २१.२४.२ (७ बार) (अव० सू०)

एकहिं प. २५.८, १७७.८, सा. १५.४२.२, र. १.३, १.४
(अव० सू०)

एकहि र. १.१ (अव० सू०)

एकही प. ७६.३, ८४.१ (अव० सू०)

अकेल^१ सा. १६.२६.१अकेला^२ प. ६८.८, १००.४, ११६.२, र. ४.५अकेली^३ (स्त्री०) प. १६०.६

१, २, ३ इन रूपों को कामताप्रसाद गुरु (हिं० व्या०, पृ० ११४) 'एक' का समुदायवाचक रूप मानते हैं; किन्तु 'समुदाय' शब्द एक से अधिक संख्या का द्योतन करता है, अतएव यदि इन्हें 'दोनों' 'तीनों' आदि की श्रेणी में रखना जाय तो 'समुदाय' के शाब्दिक अर्थ का द्योतन नहीं हो पाता।

दुइ	प. २५.६ (११ बार)
द्वै	प. १३१.४
दोइ	सा. ६.२६.२ (२३ बार)
दोई	र. १०.५
तीन	प. १४६.३, सा. ५.११.१, २६.४.१
तीनि	प. १२६.६ (१५ बार)
तिर	प. १५२.४, १६३.२
त्रि	प. ५३.८ (७ बार)
त्री	प. १३०.७, १३०.७
त्रै	चौ. १.१
चतुर	र. ६.२
चार	र. १४.५
चारि	प. ४५.६ (६ बार)
चारी	र. ११.२
पंच	प. ८०.५ (१५ बार)
पांच	सा. ३.१५.१ (७ बार)
खट	र. १४.४ (८ बार)
खटु	प. १३४.३
खड	प. ३४.११
छ	र. १४.५
छह	प. ६४.४
षट	(खट ?) प. ८०.३
सत	सा. १२.४.१
सात	प. १११.४, १२६.५, १४२.३ सा. ८.२.१, १६.६.१
अष्ट	प. १०८.४
अठ	प. ३१.२
नड	प. ३१.२, ८०.७, १२६.४
नव	प. १४.३, १४.७, १११.३, १२२.४, १५५.६
नौ	प. १४३.६ (६ बार)
दस	र. १.३ (१० बार)
ग्यारह	प. १७७.८
द्वादस	प. १३०.१०
बारह	प. ८३.३, ६६.७, सा. १७.३.१

चतुरदस	प. ५१.५
चौदह	प. १०५.६, सा. १.३.१
सोरह	प. ११२.६, १५८.८
अठारह	प. १५५.८
उनइस	प. १११.३
बीस	प. ८३.३, १३७.६
पचीसक	प. १२६.३ (इससे बहुवचन की निश्चितता तथा संख्या की अनिश्चितता प्रकट होती है)

तीस	प. ८३.४
तेतीस	प. ४२.५
तैंतीस	प. १०५.८
पचास	सा. २१.१७.१
बावन	प. १५५.११, १५७.३, सा. ३३.१.२, चौ. १.१, ४१.१
छप्पन	प. ४२.४
चौंसठि	सा. १.३.१
अठसठ	प. ३५.८
अठसठि	प. १७१.४
सत्तरि	प. ४२.३, १८४.६
बहत्तरि	प. १११.४, १२६.४
चौरासी	प. ४२.५, १५४.३, सा. १.४.१, २०.५.२, २१.२१.२
अठासी	प. ५.७, ४२.४, १०५.७
छचानबै	प. ६६.४
सौ	र. १६.७ (७ बार)
सहस	प. ५.७, ४२.३, १०४.५, १५५.१६, १५८.८
हजार	(फ़ारसी) सा. १५.२७.१
लख	सा. २१.२१.२ (८ बार)
लाख	प. ४२.३, सा. १५.८.२, १५.२१.२, १८.७.१
करोड़ी	प. ४२.५
करोरि	सा. १५.८.२, १५.२१.२
कोटि	सा. ३.१०.२ (३६ बार)
कोटिक	प. १०२.४, १४६.६, १५५.६, १५५.१०, सा. ४.२.१

२.२.१.३.२ : क्रमवाचक :

पहिला	सा. २२.६.२
-------	------------

पहिलै	प. ११०.१२ (अव० सू०)
दूजी	सा. ११.१.१, १६.२.२
दुजै	प. ८.६
दोसर	चौं. ८.१
चौथे	प. २३.१०
चउथै	प. ३२.६
चौथै	सा. ५.११.१
छठा	सा. ३.१५.१
दसवां	सा. २६.११.२
दसएं	सा. २६.१.१
दसवैं	प. ८०.८, १२३.५, १४५.५. चौं. २३.२

टि०— तिवात्त सा. २६.२२.२ का अर्थ तीसरे दिन का है।

२.२.१.३.३ : आवृत्तिमूलक :

दूनां	प. ६०.५
दूनीं	सा. १८.८.२

२.२.१.३.४ : परत या प्रकारवाचक :

दुहेरा	प. ११.४ (दोहरा अर्थ है)
दुसरी	प. १३१.७ (दोहरी अर्थ है)
दोवर	प. २५.२ (दोहरा अर्थ है)
तेवर	प. २५.२ (तेहरा अर्थ है)

२.२.१.३.५ : अपूर्णाकिवाचक :

पाव	१११.६, सा. १०.६.२, १५.२.१
तिहाई	प. १११.७
अरध	प. ३५.७, १७८.६
अधूरी	सा. १.२६.१
आध	प. ३२.७, सा. २४.४.१
आधा	प. ६१.८, सा. १५.५४.२
आधी	सा. २४.४.१, २४.४.१, २८.६.१
धूरी	प. ६६.८ (अधूरी)
पौनै	सा. १६.१२.२
सवा	प. ४२.३, ६६.३
सवाई	र. ८.१

अढ़ाई प. १११.५, १११.६
साढ़े (तीनि) सा. १६.१२.२

२.२.१.३.६ : समुदायवाचक :

दुहुं प. ४७.३, १७७.१०, सा. २०.६.२, र. १८.४
दुहूं सा. ६.२०.१
दोउ प. ३२.३, सा. १४.१३.१, र. ६.२, १८.३
दोऊ सा. १५.७२.२ (१० बार)
दोनउं सा. २०.३.२
दोनिउं प. १०.१२
दोनौं प. १६३.३, सा. १.१७.२, र. १८.५
दोन्यूं सा. १.६.२
तिहुं सा. ३.१३.१, २४.११.२
तीनिउं प. ११६.७, १२०.३, सा. ३०.२.१
तीन्यूं प. १०७.६
तीनौं सा. २.३०.२
चारिउ सा. २१.४.२, र. ६.२
पांचै (पाँचौं) प. १२६.४
पांचउ प. ५.३, सा. ५.१.२
पांचौं प. २.४ (६ बार)
पांचहुं प. १३७.७
छौ (छग्रौं) प. १३६.४
नऊं प. ६६.२
नवै (नवौं) प. ८०.८
दसौं प. १२६.२
दसहुं सा. ३.२२.२
चौबीसौं प. १७७.७
पचीसौं प. २.४
तैंतीसउ प. १५५.५
तैंतीसौं प. ५.७
छतीसौं प. १४४.७
सहसौं प. १५८.३
लाखौं सा. ८.१२.२

गंड प. ११.४

२.२.१.३.७ : अनिश्चित संख्यावाचक :

अधिक	प. ७३.६
अति	र. २०.५
अनंत	सा. १.१३.२ (७ बार)
अनंतहि	सा. २५.८.१ (अव० सू०)
अनिक	प. २६.११, ३६.६
अनेक	प. ७५.४, १८०.४, सा. ३.११.२ र. १०.२, ११.३
अपार	प. ४५.५, १८७.७, सा. १५.७४.२
असंखि	प. १५५.१५
घन	प. १३१.११, सा. ४.३.१, ४.१०.१
सघन	सा. ४.३.१, ४.१०.१
घनां	सा. १.३१.२
घनीं	सा. २६.१४.२
घनेरी	सा. १५.६.२
नांनां	प. १०६.५, १८४.६, सा. २८.४.२
बहु	सा. ३.१२.१ (२१ बार)
बहुत	प. ४६.५ (११ बार)
बहुतक	प. १०.२, १४६.५
बहुतै	सा. ११.२.१, २१.६.१
बहुतैं	र. १७.४
बहुतेरा	र. १४.३
विविधि	सा. २४.१४.२
सब	प. १०१.४ (८ बार)
सभ	प. १५.१ (५ बार)
सभै	प. ५२.२, ८६.६
सकल	प. २.५, १.६, ५६.५
सगल	प. ४६.४
सगली	प. ८४.८

विशेष—केवल क्रिया विशेषण ५ स्थानों पर विशेषण के समान प्रयुक्त हुआ है—

केवल रांम रहहु लिव लाइ प. ७१.८

तब केवल रांम नांम लिव लागी प. १५६.६

जौ जाचउं तौ केवल रांम प. १५५.१

कबीर केवल रांम कहि सा. १५.७८.१

करता केवल सार सा. २१.३१.१

इसी प्रकार बिरला प. १२०.५, १०४.८, १४६.४, सा. २४.१२.२, २५.५.१, ३०.१७.१, ३०.३.१, ३२.१६.१ छन्द संख्याओं में कोई के साथ प्रयुक्त होकर विशेषण का अर्थ देता है।

२.२.२ : प्रातिपदिकों के दीर्घ और लघुरूप :

तुक के कारण प्रयुक्त दीर्घरूप—

अतीत : अतीता प. ११३.६

अदभुत : अदभूता र. ६.७

खीन : खीनां सा. ४.२६.२

गंवार : गंवारा र. १२.४

हरव : हरवा सा. ७.६.१

आ और ई के लघुरूप भी मिलते हैं, किन्तु ऐसे रूप सर्वथा छन्द की सुविधा के लिए ही निमित्त प्रतीत नहीं होते, अपितु मूल प्रातिपादिक की प्रकृति की भी सूचना देते हैं—

आ : अ

अंधा प. १८६.६, सा. २६.८.२, : अंध प. ८५.१, ६७.५, र. १३.४

३०.१३.१, ३३.८.२

ऊंचा प. १४६.१, सा. १४.३०.१, : ऊंच प. १६६.५

१५.२३.१, १५.८३.१,

२२.१३.१, ३३.८.१

कांचा सा. १५.१६.१ : कांच सा. ६.३६.२

बड़ा प. २७.३, २७.४, २७.५, २७.५ : बड़ प. २५.४, १६५.५, सा. ४.३७.२, १६.१४.२, २२.१०.१

सूधा सा. ३३.६.२ : सुध सा. २५.१.१

ई : इ

ऊंची (संभावित) : ऊंचि सा. ३३.७.१

भूठी प. ६५.६, ६६.७, १६४.८, : भूठि सा. १६.३०.२

१६५.१०, र. १४.२

सुंदरी (संभावित) : सुंदरि (काया) प. ८८.३

सांची प. १७६.६, र. १०.७ : सांचि प. १८७.६

२.२.३ : अवधारण के लिए प्रयुक्त रूप : संज्ञा के समान -ऐ (विरल प. ११२.२, १३४.८), -ऐं (बहुतै र. १७.४), -(अ) हि, हिं, ही, हुं, हूं (अनंतहि सा. २५.८.१, एकहि सा. १५.४२.२, एकही प. ७६.३, ८४.१, दसहुं सा. ३. २२.२, पांचहुं प. १३७.७) आदि प्रत्ययों द्वारा ही विशेषण में भी अवधारणबोधक रूप प्राप्त हुए हैं।

२.२.४ : लिंग-विधान : कबीर-ग्रंथावली में विशेषणपद के लिंग-विधान में तीन स्थितियाँ मिलती हैं—

२.२.४.१ : विशेषण के लिंग का निर्धारण विशेष्य के लिंग के अनुसार हुआ है—
पु० विशेषण और पु० विशेष्य अंधा (नर) सा. २६.८.२

कांचा (कुंभ) सा. १५.५६.१

साता (पानी) सा. १६.६.१

स्त्री० विशेष० और स्त्री० विशेष्य खरी (कसौटी) सा. १६.४.१

गरी (गोंदरी) प. ६५.६

मीठी (खांड) सा. ३१.७.१

२.२.४.२ : विशेषण के द्वारा विशेष्य का लिंग बोध होता है। इसके भी पर्याप्त उदाहरण प्राप्त हैं। यथा—

मैं रे अबुभी वृक्षिया सा. ४.१२.२

ओछी ठौर न जाइ सा. १५.६३.२

यह कलि है खोटी प. १६७.५

उपर्युक्त उदाहरणों में अबुभी, ओछी और खोटी विशेषण पदों से मैं, ठौर और कलि विशेष्यों (स्त्री०) के लिंग का बोध होता है।

२.२.४.३ : एक ही विशेषण का दोनों लिंगों में प्रयोग—

२.२.४.३.१ : सभी व्यंजनांत और अकारांत विशेषणों में एक ही विशेषण का प्रयोग दोनों लिंगों में हुआ है।

पुल्लिंग

(अरध) अनूपम सा. ३२.१०.१ -

औषट (घाट) सा. ६.२७.२

(मारग) कठिन सा. १०.६.१

चंचल (मन) प. १६८.८,

सा. ४.२५.२

दुरलभ (प्रसाद) प. ३३.५

स्त्रीलिंग

(बात) अनूपम प. १३३.७

औषट (घाटी) सा. २०.४.२

कठिन (दूरी) प. १५०.४

चंचल (मति) प. १५६.६

दुरलभ (दीदार) सा. ३.१२.२

जौ जाचउं तौ केवल रांम प. १५५.१

कबीर केवल रांम कहि सा. १५.७८.१

करता केवल सार सा. २१.३१.१

इसी प्रकार बिरला प. १२०.५, १०४.८, १४६.४, सा. २४.१२.२, २५.५.१, ३०.१७.१, ३०.३.१, ३२.१६.१ छन्द संख्याओं में कोई के साथ प्रयुक्त होकर विशेषण का अर्थ देता है।

२.२.२ : प्रातिपदिकों के दीर्घ और लघुरूप :

तुक के कारण प्रयुक्त दीर्घरूप—

अतीत : अतीता प. ११३.६

अदभुत : अदभूता र. ६.७

खीन : खीनां सा. ४.२६.२

गंवार : गंवारा र. १२.४

हरुव : हरुवा सा. ७.६.१

आ और ई के लघुरूप भी मिलते हैं, किन्तु ऐसे रूप सर्वथा छन्द की सुविधा के लिए ही निर्मित प्रतीत नहीं होते, अपितु मूल प्रातिपादिक की प्रकृति की भी सूचना देते हैं—

आ : अ

अंधा प. १८६.६, सा. २६.८.२, : अंध प. ८५.१, ६७.५, र. १३.४

३०.१३.१, ३३.८.२

ऊंचा प. १४६.१, सा. १४.३०.१, : ऊंच प. १६६.५

१५.२३.१, १५.८३.१,

२२.१३.१, ३३.८.१

कांचा सा. १५.१६.१ : कांच सा. ६.३६.२

बड़ा प. २७.३, २७.४, २७.४, २७.५ : बड़ प. २५.४, १६५.५, सा. ४.३७.

२, १६.१४.२, २२.१०.१

सूघा सा. ३३.६.२ : सुघ सा. २५.१.१

ई : इ

ऊंची (संभावित) : ऊंचि सा. ३३.७.१

झूठी प. ६५.६, ६६.७, १६४.८, : झूठि सा. १६.३०.२

१६५.१०, र. १४.२

सुंदरी (संभावित) : सुंदरि (काया) प. ८८.३

सांची प. १७६.६, र. १०.७ : सांचि प. १८७.६

२.२.३ : अवधारण के लिए प्रयुक्त रूप : संज्ञा के समान -ऐ (विरल प. ११२.२, १३४.८), -ऐं (बहुतै र. १७.४), -(अ) हि, हिं, ही, हुं, हूं (अनंतहि सा. २५.८.१, एकहि सा. १५.४२.२, एकही प. ७६.३, ८४.१, दसहुं सा. ३. २२.२, पांचहुं प. १३७.७) आदि प्रत्ययों द्वारा ही विशेषण में भी अवधारणबोधक रूप प्राप्त हुए हैं।

२.२.४ : लिंग-विधान : कबीर-ग्रंथावली में विशेषणपद के लिंग-विधान में तीन स्थितियाँ मिलती हैं—

२.२.४.१ : विशेषण के लिंग का निर्धारण विशेष्य के लिंग के अनुसार हुआ है—

पुं० विशेषण और पुं० विशेष्य अंधा (नर) सा. २६.८.२
कांचा (कुंभ) सा. १५.५६.१
ताता (पानीं) सा. १६.६.१
स्त्री० विशेष० और स्त्री० विशेष्य खरी (कसौटी) सा. १६.४.१
गरी (गोंदरी) प. ६५.६
मीठी (खांड) सा. ३१.७.१

२.२.४.२ : विशेषण के द्वारा विशेष्य का लिंग बोध होता है। इसके भी पर्याप्त उदाहरण प्राप्त हैं। यथा—

मैं रे अबूभी बूझिया सा. ४.१२.२
ओछी ठौर न जाइ सा. १५.६३.२
यह कलि है खोटी प. १६७.५

उपर्युक्त उदाहरणों में अबूभी, ओछी और खोटी विशेषण पदों से मैं, ठौर और कलि विशेष्यों (स्त्री०) के लिंग का बोध होता है।

२.२.४.३ : एक ही विशेषण का दोनों लिंगों में प्रयोग—

२.२.४.३.१ : सभी व्यंजनांत और अकारांत विशेषणों में एक ही विशेषण का प्रयोग दोनों लिंगों में हुआ है।

पुंल्लिंग

(अरथ) अनूपम सा. ३२.१०.१ -
औषट (घाट) सा. ६.२७.२
(भारण) कठिन सा. १०.६.१
चंचल (मन) प. १६८.८,
सा. ४.२५.२
दुरलभ (प्रसाद) प. ३३.५

स्त्रील्लिंग

(बात) अनूपम प. १३३.७
औषट (घाटी) सा. २०.४.२
कठिन (दूरी) प. १५०.४
चंचल (मति) प. १५६.६
दुरलभ (दीदार) सा. ३.१२.२

परम (तत्त) प. १७५.४	परम (गति) प. १७४.५
विकट (पेड़, पंथ) प. १४६.२,	विकट (वाट) चौ. १६.१
सा. ३.१२.१	
सुंदर (सरूप) प. ६४.५	सुंदर (मति) प. १३५.८
अस (प्रेम) चौ. ३४.२	अस (जाति) सा. १६.२१.१
जस (ओहु) चौ. ३.२	जस (धार) सा. १४.१६.१

२.२.४.३.२ : आकारान्त विशेषणों में लिंग : केवल पुल्लिङ्ग शब्द प्राप्त हैं ।

ऊजरा सा. ६.२६.२
 कांचा सा. १५.५६.१
 ताता सा. ६.८.२, १६.६.१
 भोरा प. २००.१
 राता सा. १५.५०.२
 हल्वा सा. ७.६.१
 किता प. १८६.३
 जेता सा. ४.२१.१, ६.१४.१, ३२.१५.१
 अँसा सा. २४.७.१ (२६ बार)
 कैसा प. १३.४, ५४.२, सा. ६.२.१
 जैसा सा. १६.६.२ (६ बार)
 तैसा सा. ३.१६.१, ७.१०.२, २४.३.२

२.२.४.३.३ : इकारान्त विशेषणों में लिंग : इकारान्त विशेषणों में एक ही विशेषण दोनों लिंगों में प्रयुक्त हुआ है —

धनि (भाग) प. ५.६	धनि (सुंदरी) सा. ४.३८.१
धन्नि (जनम) चौ. २०.१	धन्नि (सुहागिनि) प. ११.५

२.२.४.३.४ : ईकारान्त विशेषणों में लिंग : अधिक उदाहरण स्त्रीलिंग में प्राप्त —

अविनासी (रांम) प. १०२.८	(में) अबूभी सा. ४.१२.२
र. २०.१ अन्यत्र—प. ५.८,	ओछी (भगति) प. ४६.६
१५.७., २५.१२	
(गुरु) ग्यानीं प. १३१.१	* कड़ियाली (कुमति) सा. ३१.११.२
पापी (जियरा) प. ७४.२	काली (कामरी) सा. ४.३४.२
(रांम) सनेही सा. १५.१.२	खरी (कसौटी) सा. १६.४.१
	गरी (गोंदरी) प. ६५.६
	मधुरी (वांती) प. १६३.२

मोटी (आस) सा. ३१.१६.१
 सांची (बात) र. १०.७
 हरहाई (गाइ) सा. २१.१८.२
 केती सा. ४.३२.१, ३०.४.२
 असी (ठाटनि) सा. १५.८५.१
 (८ बार)

२.२.४.३.५ : उकारान्त विशेषणों में लिंग :

(तू) अथाहु प. ४३.७ (वस्तु) अनूप प. ८०.३, ८०.७
 (तन) खीनु प. ६.३
 सु (घट) चौ. ६.२

२.२.४.३.६ : ऊकारान्त विशेषणों में लिंग :

(लोग) बटाऊ सा. १४.३.२, कुरू (बड़ाई) सा. १५.७८.२
 १६.२२.२
 (महिखी) लदाऊ प. १७६.४
 सुत
 साधू (जन) सा. ३०.१६.२

२.२.४.३.७ : ओकारान्त, ऐकारान्त और औकारान्त विशेषणों (जिनका उल्लेख पहले किया गया है) में कोई भी स्त्रीलिंग विशेषण नहीं मिलता ।

ऊपर के विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यंजनांत, अकारांत, इकारांत और ईकारांत विशेषणों में विशेषण दोनों लिंगों में प्रयुक्त हुए हैं । ईकारान्त शब्दों में स्त्रीलिंग विशेषण अधिकांशतः प्रयुक्त मिलते हैं । आकारान्त, ओकारांत, ऐकारांत और औकारांत शब्दों में केवल पुल्लिंग विशेषण प्राप्त होते हैं और उकारांत तथा ऊकारांत शब्दों में भी अधिकांशतः पुल्लिंग पद ही प्राप्त होते हैं । संज्ञाओं की तरह विशेषणों में भी शब्द-रूप की अपेक्षा शब्द-प्रयोग के आधार पर लिंग-निर्णय अधिक सुविधाजनक हो सकता है ।

२.२.५ : वचन : विशेषण का वचन-विधान दो रूपों में प्राप्त होता है ।

२.२.५.१ : समान वचन में प्रयुक्त विशेषण और विशेष्यः^१

ए० व०	ब० व०
अजब (जरी) प. २.१	खारे (बरे) प. ११४.१
अतीत (सबद) प. १४४.६	नांगे (हाथों) सा. १५.२१.२

^१ ऐसे प्रयोगों की संख्या अधिक है ।

अधम (मन) प. १६८.८	भले (ते) र. १०.१०
उदार (चित) सा. १५.७२.१	बुरे (हंम) सा. १५.३२.१
कुटिल (वचन) सा. ४.२५.२	लंवे (झौहड़े) सा. २३.७.२
सीतल (छाया) सा. १७.३.२	अैसे (लोगनि) प. १६७.१
सुंदर (सर्पिनी) सा. ३.१८.१	जेते (तारे) सा. १४.३६.१
अस (जाति) सा. १६.२१.१	पंच (किसनवां) प. ४१.६
अैसा (संसार) सा. २४.७.१	नांनां (रंगै) प. १०६५
तैसा (फल) सा. २४.३.२	सत्तरि (कावे) प. १८४.६

२.२.५.२ : असमान वचन में प्रयुक्त विशेषण और विशेष्य^१ :

२.२.५.२.१ : विशेषण ए० व० और विशेष्य ब० व० :

ऊजल (कापरे) सा. १५.२६.१
नीच (ते) सा. ३०.२०.२
पंडित (जनां) प. १०३.१
बड़ (मोतियां) सा. २२.१०.१
बर (ब्रह्मादिक) प. १६५.७
स्वारथी (सवै) सा. १५.६२.७

२.२.५.२.२ : विशेषण ब० व० और विशेष्य ए० व० में :

ऊले (व्यौहार) र. ३.६
कारे (मूंड) प. १६०.४
कूड़े (काम) सा. १५.५३.१
न्यारे-न्यारे (करतब) प. ६१.३
पुरांनै (पुहुप) प. ७५.७
बड़े (मुनिवर) सा. ३१.३.२
बड़ें (भाग) प. १४८.१
बावरे (नैन) सा. २.२५.१
मोटे (भाग) सा. १०.१०.२
लावे (गोड़) सा. ३.२.२

^१ असमान वचन में प्रयुक्त विशेष्य और विशेषण की स्थिति में विशेषण के बहुवचन में रहने पर भी विशेष्य एक वचन में प्रयुक्त हुए हैं। इस प्रकार के प्रयोगों की संख्या अधिक है, किन्तु विशेष्य के बहु वचन में रहने पर भी विशेषण के एक वचन में प्रयोग अत्यन्त सीमित हैं।

लांवे (केस) सा. २५.१.२
 सूचे (जन) प. १६२.८
 केते (दिन) प. १७८.२
 जेते (औरति) प. १७७.१३
 तेते (बैरी) सा. १४.३६.१
 बहुतै (रूप) र. १७.४
 बहुतै (मीत) सा. ११.२.१
 अठसठि (तीरथि) प. १७१.४
 कोटि (क्रिस्न) प. १४६.५

२.२.५.२.३ : विना विशेष्य के केवल विशेषणों में बहुवचन :

केते सा. ३०.१२.१ (केते गए गइंत)
 चौं. ४०.१ (पष्पा खिरत खपत गए केते)
 हरए-हरए सा. १५.२७.२ (हरए हरए तिरि गए)

२.२.६ : कारकीय रूप : संज्ञा की तरह विशेषणपद में भी संयोगात्मक और वियोगात्मक स्थिति प्राप्त होती है। वियोगात्मक स्थिति में विशेषण में केवल आकारांत विशेषण के परिवर्तित रूप प्राप्त होते हैं। आकारांत विशेषण का रूप-परिवर्तन आकारांत संज्ञा की ही तरह होता है, अर्थात् पुल्लिङ्ग संज्ञा के साथ विशेषण का मूलरूप, विकारी संज्ञा के साथ आकारांत विशेषण का विकृतरूप और स्त्रीलिङ्ग विशेष्य के साथ विशेषण भी स्त्रीलिङ्ग हो जाता है। क० ग्रं० में पुल्लिङ्ग आकारांत विशेषण के -ए, -एं, -ऐ, -ओं रूपांतरित रूप मिलते हैं। -एं और -ओं कारकीय प्रत्यय संज्ञा के रूपांतरों में प्रयुक्त नहीं मिलते, केवल विशेषण में उनके प्रयोग प्राप्त हैं। -ओं का प्रयोग केवल एक स्थान पर मिलता है जो आधुनिक खड़ी बोली हिन्दी के घोड़ों वाले रूप के समान ही है।

२.२.६.१ : वियोगात्मक :

२.२.६.१.१ : मू०रू०ए०व० : इसमें केवल प्रातिपदिक रूप प्रयुक्त हैं।

२.२.६.१.२ : मू०रू०ब०व० :

प्रत्यय आवृत्तियाँ

उदाहरण

- * -ए ४३ न्यारा +ए=न्यारे प. ६१.३ (करतब न्यारे न्यारे)
- बड़ +ए=बड़े प. ११.२ (राम बड़े) आदरार्थ ब० व०
- लंबा +ए=लंबे सा. २३.७.२ (लंबे घोड़े)
- घना +ए=घने प. ६७.१० (तीरथ घने)

- तेता + ए = तेते सा. १४.३६.१ (तेते बैरी मुज्ज)
- एँ २ अनचीन्हां + एँ = अनचीन्हें र. ११.६ (अनचीन्हें ते भए पतंगा)
- अँसा + एँ = अँसे प. ४०.१ (हंम अँसे)

२.२.६.१.३ : वि०रू०ए०व० :

- ए १३ अंधा + ए = अंधे प. ७२.१२ (अंधे मन के)
- ऊंचा + ए = ऊंचे सा. ३३.७.१ (ऊंचे कुल का)
- भूठा + ए = भूठे प. ६२.१, सा. २५.६.१ (भूठे कुलकी)
- एँ १ बड़ा + एँ = बड़ें प. १४८.१ (बड़ें भाग) (परसर्ग रहित)
- ऐ २ भूठा + ऐ = भूठै सा. २५.१५.१ (भूठै कुल की)
- सूनां + ऐ = सूनै सा. २.४६.२ (सूनै घर का)

२.२.६.१.४ : वि०रू०ब०व० :

- ए ५ कारा + ए = कारे प. १६०.४ (कारे मूड़ कौं)
- कूड़ा + ए = कूड़े सा. १५.५३.१ (कूड़े कांम) (परसर्ग रहित)
- नागा + ए = नागे सा. १५.२१.२ (नागे हाथी ते गए)
- ओं १ बड़ा + ओं = बड़ों सा. १५.६८.२ (बड़े बड़ों की लाज)

२.२.६.१.५ : संबोधन :

- ए २ पियारा + ए = पियारे प. ७.१ (राम पियारे)
- पियारे सा. १५.१.१ (पियारे मित)

२.२.६.२ : संयोगात्मक रूप :

२.२.६.२.१ : कर्म-सम्प्रदान :

- ऐ ७ अंधरा + ऐ = अंधरै (काजी) प. २३.८
- चौड़ा + ऐ = चौड़ै (दीया) सा. १६.२६.२
- चौड़ा + ऐ = चौड़ै (खेत) सा. १४.११.२
- ऐँ ४ ताता + ऐँ = तातै (लोहि) सा. १.३०.१
- सयांनां + ऐँ = सयानै (लोग) प. ८६.४ (ब०व०)

२.२.६.२.२ : करण-अपादान :

- ऐ ७ ओछा + ऐ = ओछै प. १८८.५
- झड़ा + ऐ = झड़ै (पांती) सा. २१.१६.१
- भूठा + ऐ = भूठै (मन) प. १६.५
- सांचा + ऐ = सांचै (मन) प. १६.५

२.२.६.२.३ : अधिकरण :

- ऐ ८ उधार + ऐ = उधारै (अंगि) सा. १.२३.२
कांचा + ऐ = कांचै (करवै) प. ७०.४
दूजा + ऐ = दूजै (हाथि) प. ६८.६
हरियार + ऐ = हरियारै (तालि) सा. १६.३.१
-ऐ २ उतान + ऐ = उतानै (खटिया) प. १००.२
कांचा + ऐ = कांचै (कुंभ) प. ६८.४

२.२.७ : विशेषण के प्रयोग :

२.२.७.१ : विधेयक (प्रेडीकेटिविली) रूप में प्रयुक्त विशेषण : क० अं० में १६१ स्थानों पर विशेषण विधेयक के रूप में प्रयुक्त हैं। इनमें वे संज्ञाएँ भी मिली हुई हैं जो विशेषण के समान प्रयुक्त हैं। इस प्रक्रिया में विशेषण विशेष्य के पहले अथवा बाद में भी प्रयुक्त हुए हैं।

उदाहरण —

- ऊजल सा. १५.६५.१ (मन धरि ऊजल होइ)
कठोर सा. २२.१२.१ (जौ हिरदा भया कठोर)
तीखा सा. १७.८.१ (कबीर मन तीखा किया)
थोथरा सा. २६.६.१ (जप तप दीसैं थोथरा)
फीका सा. ३१.२१.२ (फल फीका तन ताप)
रसाल सा. १४.३३.१ (रांम रसाइन प्रेम रस पीवत अधिक रसाल)
अपार प. १८७.७ (पूजा चढ़ै अपार)

२.२.७.२ : संज्ञा के समान प्रयुक्त विशेषण : इस प्रकार के प्रयोग ६८ हैं।

- ऊजर सा. १६.६१.२ (ऊजर भए न छूटिए)
गरू र. २.२ (हरू गरू कछु जाइ न तोला)
बड़े बड़ों सा. १५.३८.२ (बड़े बड़ों की लाज)
सारीखा सा. २४.१७.१ (सारीखा सौं संग)
हख्वा सा. ७.६.१ (हख्वा कहूं तौ भूठ)
अड़ाई प. १११.६ (अड़ाई मैं जे पाव घटै)

२.२.७.३ : संज्ञाएँ जो विशेषण के समान प्रयुक्त हैं : कुल ४० उदाहरण प्राप्त हैं।

- अहीरा प. १३१.१० (वहि बनि कान्ह अहीरा रे)
जन सा. ३.१३.२ (जन कबीर मस्तक दिया)
जार सा. ११.५.२ (जार मीत हृदया बसा)

पंडित	प. १०३.१	(कवन मुवा कहु पंडित जनां)
परसोतम	प. १०८.८	(अपरंपार पार परसोतम)
बैसनौं	सा. ४.३८.१	(जिन जाया बैसनौं पूत)
मानुस	सा. १६.१४.१	(मानुस धरिया नाउं)
राही	प. १३१.१०	(इहि बनि खेलै सकमिनि राही)
सत्त	प. १७.१	(सत्त गियांनी)

२.२.८ : विशेषण की रचना : विभिन्न प्रत्ययों से निष्पन्न विशेषणों का विवेचन रचनात्मक प्रत्यय के अन्तर्गत किया जाएगा। यहाँ ऐसे विशेषणों का उल्लेख किया गया है जो दो पदों के योग से प्राप्त हुए हैं—

आसामुखी	:	आसा + मुखी (नर) सा. २६.८.२
कनफूँका	:	कान + फूँका (गुर) प. १६५.६
चकमक	:	चक + मक (चित) सा. २६.१३.२
जरजर	:	जर + जर (बेड़ा) सा. १.१०.२, १५.२७.१
दुखभंजनां	:	दुख + भंजनां (हरि) प. ७१.२
मनमुखी	:	मन + मुखी (माला) सा. २५.६.१, २५.२२.१
मतिहींनीं	:	मति + हींनीं (माछरी) सा. १६.१०.१
समसरि	:	सम + सरि (घर) प. १७३.४

२.२.९ : विशेषणों में तुलना : क०ग्रं० में विशेषणों में कई प्रकार से तुलनाएँ की गई हैं। इनमें कम-अधिक, नीच-ऊँच आदि तुलनात्मक दशाओं के अर्थ प्रकट किए गए हैं।

२.२.९.१ : श्रेणी बोधक पदों द्वारा :

ते, तैं	:	साकत ते सूकर भला सा. २१.१२.१
	:	पानीं हू तैं पातरा धूवां हू तैं भीन सा. २६.३.१
	:	पुहुप बास तैं पातरा सा. ७.७.२
	:	सुंदरि तैं सूली भली सा. ३०.१७.१
सूं	:	हंम सूं बाधिनि न्यारी प. १६५.१०
सभ ते	:	कबीर सभ ते हंम बुरे सा. १५.३२.१
अधिक	:	पीवत अधिक रसाल सा. १४.३३.१
उतंग पतंगा	:	हरि उतंग मैं जाति पतंगा र. १६.२
बड़े लहुरिया	:	रांम बड़े हंम तनिक लहुरिया प. ११.२

२.२.९.२ : केवल एक विशेषण-पद द्वारा :

कसौटी	:	खरी कसौटी रांम की सा. १६.४.१
-------	---	------------------------------

चोखा	:	चोखा रांम नांम मनि लीन्हा र. २०.३
नीच	:	मिलि खेलै ते नीच सा. ३०.२०.२
बड़ा	:	रांम बड़ा कि रांमहि जानै प. २७.४ ब्रह्मा बड़ा कि जिन रे उपाया प. २७.३
मद्धिम	:	कहै कबीर मद्धिम नहि कोई प. १८२.५

२.२.६.३ : कुछ शब्दों से श्रेणी नहीं; अपितु समानता की अभिव्यक्ति हुई है—

सम, समान,	:	कासी मगहर सम विचारि प. ४६.६
संमि, सारीखा,	:	मांगन मरन समान है सा. ३२.१६.१
पटंतर	:	आपा पर संमि चीन्हिए प. १०.५ सारीखा सौं. संग सा. २४.१७.१ तास पटंतर नां तुलै सा. ४.१०.२

सर्वनाम

२.३ : संज्ञा का प्रतिनिधित्व करने वाले सर्वनामपदों के प्रातिपदिक (प्रकृति) रूपों का निर्धारण करना कठिन है। सर्वनाम प्रातिपदिक और विभक्ति-प्रत्ययों (दोनों) का निर्धारण करना बहुत ही कठिन है; अतएव विभिन्न प्रकार के सर्वनामपदों की सूची उनके वचन और कारक के अनुसार ही प्रस्तुत की गई है।

क० प्र० में संज्ञा के समान सर्वनामपद में भी वचन और कारक के आधार पर रूपांतर प्राप्त हुए हैं, किन्तु लिंग-भेद रूपात्मक-स्तर पर प्राप्त नहीं होता। लिंग का निर्णय वाक्य-स्तर पर क्रिया के आधार पर होता है। कारक-रचना की दृष्टि से संज्ञा की भांति सर्वनाम में भी दो वचन और दो कारक (मू० रू०, वि० रू०) मिलते हैं। अर्थ की दृष्टि से सर्वनाम में ने अर्थ वाला (कतू) प्रयोग भी मिलता है—जैसे—उत्तम पुरुष ए० व० मैं (१६ आवृत्तियाँ), उ० पु० व० व० हम (१५ आवृ०), म० पु० ए० व० तैं (९ आवृ०), निश्चयवाचक व० व० उन (२ आवृ०), संबंध तथा नित्यसंबंधी ए० व० में (४ आवृ०), व० व० जिन (९ आवृ०), प्रश्नवाचक किन (५ आवृ०) और अनि० वाचक काहू (१ आवृ०) के प्रयोग मिलते हैं, किन्तु कारक की रूप-रचना की दृष्टि से उनमें भिन्नता न मिलने के कारण उन रूपों के लिए अलग कारक की योजना नहीं की गई है। इस प्रकार के सर्वनामों का प्रयोग सदैव कर्मणि प्रयोग में भूतकालिक कृदंतों के ही साथ हुआ है। वियोगात्मक स्थिति के कारकों के अतिरिक्त क० प्र० में सर्वनाम में भी संज्ञा की भांति संयोगात्मक स्थिति

की कारक-योजना प्राप्त होती है, किन्तु संज्ञा की अपेक्षा सर्वनाम में ऐसे रूपों का बहुत कम प्रयोग हुआ है। सर्वनाम के संबंध कारक के रूप विशेषण की भाँति प्रयुक्त हुए हैं; उनके लिंग और वचन विशेष्यों के अनुसार हैं।

सर्वनाम के वर्गीकरण हिन्दी भाषा के विभिन्न व्याकरण-ग्रंथों में दिए गए हैं। प्रायः उनमें विशेष अन्तर नहीं देखा जाता। उन्हीं ग्रंथों के वर्गीकरण के आधार पर यहाँ सर्वनाम पदों का विवेचन किया गया है।

प्रत्येक सर्वनामपद की आवृत्तियों का उल्लेख करते समय संज्ञा के समान प्रयुक्त सर्वनाम तथा संयुक्त सर्वनामों को उनमें सम्मिलित नहीं किया गया है। उनकी आवृत्तियों का उल्लेख यथास्थान ही किया गया है। आवृत्तियों के पूरे संदर्भों का उल्लेख वहीं किया गया है जहाँ आवृत्तियाँ कम हैं, ऐसा अधिक विस्तार को बचाने की दृष्टि से किया गया है।

२.३.१ : पुरुषवाचक सर्वनाम

उत्तम और मध्यम पुरुष सर्वनामों का विवेचन स्वतंत्र रूप से किया गया है, किन्तु रूप की दृष्टि से समान होने के कारण अन्य पुरुष और निश्चयवाचक सर्वनामों का एक साथ विवेचन किया गया है।

२.३.१.१ : उत्तम पुरुष : क० ग्रं० में हम बहुवचन में प्रयुक्त नहीं मिलता, केवल निजात्मक अर्थ में अथवा आदरार्थक इसका प्रयोग बहुवचन के अन्तर्गत माना जा सकता है। मध्यम पुरुष तुम १२ स्थानों पर एक वचन में प्रयुक्त हुआ है। प्रस्तुत अध्ययन में हम और तुम को प्रचलित परिपाटी के अनुसार ही बहुवचन में स्थान दिया गया है। हम दो रूपों हम और हंम—में लिखा हुआ मिलता है। इनका उल्लेख इन्हीं रूपों में किया गया है। हंम में ह के अ पर अनुस्वार के चिह्न के संबंध में ध्वनि-विचार के अन्तर्गत अनुस्वार प्रकरण में विचार किया जा चुका है। नीचे उत्तम पुरुष सर्वनामपदों की वचन और कारकीय स्थिति पर विचार किया गया है।

२.३.१.१.१ : वियोगात्मक रूप

२.३.१.१.१.१ : मूलरूप

एक वचन	बहुवचन
में (७८ आवृत्तियाँ)	हंम, हम (३६ + १२ आवृत्तियाँ) आदरार्थ
प. (५४ आवृ०) ५३.१ इत्यादि	और अपने लिए
सा. (२० आवृ०)	प. (४४ आवृ०)
४.१२.२, १२.२.१, इत्यादि	१५.१०. १८.४ इत्यादि

र. १६.२, १६.२, १६.५

चौं. ५.१

हौं (१३ आवृ०)

प. १६.१, २३.४, २७.५, ४४.३,

६४.३, १०६.८, १३५.६, १३६.४

सा. ११.६.१, ११.१२.१, ११.

१२.२, १४.३७.१, १६.३५.२

हउं (४ आवृ०)

प. ६.३, ६.४, ६.५, १६२.२

२.३.१.१.१.२ : विकृतरूप :

मुष्म (४ आवृ०)

सभी परसर्ग सहित—सा. ३.६.१,

४.१४.२, ६.२.१, ६.५.२

मुज्झ (३ आवृ०)

सभी परसर्ग रहित—सा. २.२५.२,

११.१६.१, १४.३६.१

मो (१४ आवृ०)

परसर्ग सहित—प. १३.३, १५.७,

२६.४, २६.७, २६.८, ५४.३, १३६.२

सा. २.४०.२, ८.५.१, २१.१४.१,

२१.१४.२

परसर्ग रहित—प. ४०.७, ४२.१

सा. ३१.१६.१

हंम, हम (१२+८ आवृ०)

परसर्ग सहित—प. ४४.१, १०६.२,

१६४.४, १६५.१०

सा. १.२०.२, १.३४.१, ५.३.१,

५.५.१, ३१.२६.१

परसर्ग रहित—प. ५.२, ५.८, १६.४

सा. ५.८.१, ५.१३.१, ११.१६.१,

१४.२६.२, १५.३२.१, १५.५६.१,

१६.३२.१, ३२.७.१

२.३.१.१.१.३ : संबंध कारकीय रूप (विशेषणवत्) :

मेरा (२२ आवृ०)

प. (११ आवृ०) १०.१, २६.८,

३७.२, ५६.१, ६५.७, ७६.१,

८६.१, १०८.१, ११०.५, १३८.

८, १५६.५

सा. (११ आवृ०) १.२०.१, १.

३०.१, ४.३५.१, ६.१.१, ६.२.१,

६.२.२, ६.८.१, ८.१०.१, ८.

१३.२, ८.१७.१, १६.३५.१

हमार (१ आवृ०) र. १६.८

हमरा (२ आवृ०) प. २३.१०, १६३.५

हमरी (४ आवृ०) (स्त्री०)

प. १४३.२, १६२.८

सा. १८.११.१, १८.११.२

हमरै (४ आवृ०) प. १५.८, ५३.४,

५३.६,

सा. १६.३२.२

मेरी (१३ आवृ०) (स्त्री०) केवल पदों में ।

प. १२.५, २४.४, २६.४, ३५.७,
४५.२, ४६.२, ५३.२, ६१.५,
१२७.१, १३५.१, १४०.१, १४७.
७, १८८.७

मेरे (३ आवृ०) प. २३.१

सा. २.५५.१, २६.२१.१

मेरै (३२ आवृ०)

प. (२२ आवृ०) ४.८, १६.८,
२२.२ इत्यादि
सा. (१० आवृ०) ४.४.८, ४.५.१,
४.१३.२, ७.१२.१, ११.७.१,
११.१६.२, १४.२.१, १४.११.१,
१७.१.२, ३२.११.२

मेरो (२ आवृ०)

प. १४.१, २६.६

मेरौ (६ आवृ०)

प. ३१.६, ३५.५, ४३.२, ४३.८,
४५.४, ५०.२, ६१.५, १२१.१,
१३६.४

मोर (६ आवृ०)

प. ६.४, ४३.३, १०४.२, १३६.
१, १४०.४, १८८.३

मोरा (५ आवृ०)

प. ११.१, १७.१, ४७.२, १८६.
२, १६०.४

मोरी (२ आवृ०) (स्त्री०)

प. १६.१, ४६.१

मोरै (२ आवृ०) प. ५.४, १८८.४

हमरौ (१ आवृ०) प. ५३.८

हमारा (७ आवृ०) प. ५.६, १६.८,

१४०.४, १५२.१२, १५८.४,

१७७.१४

सा. १५.३२.२

हमारी (१ आवृ०) (स्त्री०)

सा. १६.३४.२

हमारे (४ आवृ०) प. ७.२, १८८.८

सा. २.२५.१, ३१.२६.२

हमारै (६ आवृ०)

प. १.१, २.१, १३.१, १३६.३

सा. ५.१३.२, १६.५.२

२.३.१.१.२ : संयोगात्मक रूप

कर्म-सम्प्रदान

मोहि (३३ आवृ०)

हमहि (३ आवृ०)

प. (२५ आवृ०) २.३ इत्यादि
सा. (८ आवृ०) २.४३.१, २.४७.
२, १०.५.१, १६.३१.१, १६.२८.
१, १६.५.१, ३२.७.२, ३२.
१६.२

प. ६.५, ४७.५, १३६.३

मोहिं २ स्थानों पर संबंध कारकीय अर्थ
में प्रयुक्त है—

तुम्ह समसर्गि नाहीं दयालु
मोहिं समसर्गि पापी प. ३६.१०
और प. १६६.७ में ।

२.३.१.१.३ : अवधारण-बोधक प्रयोग :

(ब०व०)

हमहिं प. ४७.३, १४०.४

हमहीं प. १६६.५

हमहुं प. १५६.४

हंमहं प. १०६.४, १६४.४

२.३.१.२ : मध्यम पुरुष :

२.३.१.२.१ : वियोगात्मक :

२.३.१.२.१.१ : मूलरूप :

ए० व०

ब० व०

तु (१ आवृ०) प. १३१.१२
तू (३२ आवृ०)
प. (१४ आवृ०) ६.३, ६.४, ६.५,
१४.६, ४३.७, ११०.६, १३६.४,
१६१.४, १६१.७, १८२.३, १८२.
४, १८७.६, १८८.३, १८६.७
सा (१८ आवृ०) २.२५.२ इत्यादि
तू (७ आवृ०)
प. १०.६, २६.६, ३६.६
• सा. ११.६.१, २१.२२.१, २१.
३०.२, ३१.२६.१
तै (६ आवृ०)

तुम (ए०व० + ब०व०) (१३ + ५ आवृ०)
(ए०व०) प. १५.८, १८.४, ४२.७,
४५.४, ४५.६, ४७.५, ५४.३,
१८८.७, १६१.१
सा. २.४५.२, ८.१२.२, १४.३.२,
१६.७.२
(ब०व०) प. १३८.१, १५४.१,
१५६.६, २००.१
सा. १६.७.२
तुम्ह (ए०व०, ब०व०) (६ आवृ०)
प. १०.१३, ४७.४, ४६.३, १०१.
३, १०२.६, १६६.२

प. ६३.३, ७५.३, ७५.४, ८३.
 ४, ८६.२, ८८.१, ८९.४, १७८.
 १, १८८.४

२.३.१.२.१.२ : विकृतरूप :

तुम्ह (६ आवृ०)	तुम (७ आवृ०) (आदरार्थ)
परसर्ग सहित—सा. ६.२.२	सभी परसर्ग सहित— प. १५.४,
परसर्ग रहित—प. २३.५, २६.५	१९.४, ४५.२, ४५.३, ६९.७,
सा. २.१८.२, ८.१२.१, ११.१२.२	१४२.२
तुम्ह (१ आवृ०)	र. १.२
परसर्ग रहित प. २३.५	तुम्ह (५ आवृ०) (आदरार्थ)
तुम्ह (८ आवृ०)	परसर्ग सहित—प. १३.२, ३९.१०,
परसर्ग सहित— सा. २.३२.१,	१८४.१
६.८.१, ११.७.१	परसर्ग रहित—प. २७.२, १८४.२
परसर्ग रहित—सा. २.२५.१, २.	
३२.१, ११.१६.२, १४.३६.१,	
२१.१५.२	

२.३.१.२.१.३ : संबंध कारकीय रूप (विशेषणवत्) :

तेरा (१६ आवृ०)	आदरार्थ ब०व०
प. २८.६, ३२.१, ३७.१, ५२.५,	तुम्हारा (१ आवृ०) प. २३.१
६३.११, ७९.२, ८९.२, ९२.६,	तुम्हारी (१ आवृ०) (स्त्री०)
९४.६, ११९.१	प. १९.५
सा. २.१४.१, ६.२.१, ६.२.२,	तुम्हारे (१ आवृ०) प. १२४.८
६.८.१, १५.६२.१, २९.५.१	तुम्हार (१ आवृ०) प. ४५.३
तेरी (१२ आवृ०) (स्त्री०)	तुम्हारा (१ आवृ०) प. १७७.१३
प. १०.२, १४.६, ३२.५, ४२.८,	तुम्हारी (९ आवृ०) (स्त्री०)
६३.११, ७५.२, ८५.४, १३४.७,	प. १३.३, १५.३, १५.८, २२.३,
१३९.४	३९.२, ४०.१०, १७०.६
सा. ८.८.२, १६.१८.२	सा. २.१८.१, ३२.११.२
र. ११.१	तुम्हारै (२ आवृ०)
तेरे (२ आवृ०) सा. ३.६.२, ३२.	प. १२१.१, १८४.४
११.१	तोहारि (१ आवृ०) प. १३९.४
तेरै (१ आवृ०) प. १७७.१	थारौ (तिहारौ ?) (१ आवृ०)

तेरौ (३ आवृ०) प. २०.४, ५५.३

चौ. ३२.२

सा. १६.७.१

तोर (२ आवृ०) प. ६.४, १०४.२

तोरा (३ आवृ०) प. ३८.१, ४७.१,

१८६.१

तोरी (३ आवृ०) प. १६.३, ६६.२,

१५०.५

२.३.१.२.२ : संयोगात्मक रूप

कर्म-सम्प्रदान

तुमै (२ आवृ०) सा. ४.१४.२, १५. तुमहि (२ आवृ०) (आदरार्थ)

१३.२

प. ६.५, २२.४

तुमहि (१ आवृ०) प. ८१.४

तोहि (१४ आवृ०)

प. ७.१, १०.१, १८.१, १८.३,

१८.५, २६.६, ७५.३, १६६.७

सा. २.४७.१, १४.३७.१, १६.

३५.२, २४.६.१, ३२.१.२

चौ. १२.२

तोहि (२ आवृ०) सा. ११.६.१, १५.

५३.२

२.३.१.२.३ : अवधारणबोधक प्रयोग :

(ब० व०)

तुमहि प. १६.४, ४७.३

तुमहीं प. १४२.२

तुहीं प. १३१.१२

२.३.२ : निश्चयवाचक :

२.३.२.१ : निकटवर्ती :

२.३.२.१.१ : मूलरूप :

ए० व०

ब० व०

१- यह (२ आवृ०) (सर्वनामरूप)

१-ए (८ आवृ०) (सर्व०)

२- यह (१० आवृ०) (विशेषणरूप)

२-ए (८ आवृ०) (विशे०)

- १- प. १०.१३ (यह निज ब्रह्म विचार)
सा. २५.१७.१
- २- प. १३.३, ३५.५, ४४.३. ७६.३,
६६.३, १२२.१२, १६४.५, १७८.
७, १६७.५
सा. १७.७.१ (यह मन)
- १- यह (१३ आवृ०) (सर्व०)
- २- यह (५८ आवृ०) (विशे०)
- १- प. ६.५, २६.६, ६३.११, ६३.११,
६५.७, ७१.६, ८७.१०, १६२.८
चौ. २२.१, ३३.२, ३५.१, ३५.२,
३८.२
- २- प. (३६ आवृ०) १३२.५ इत्यादि
सा. (१७ आवृ०) ६.६.२ इत्यादि
र. ४.५, १०.६, ११.१
चौ. १३.१, ३३.२
- १- एह (२ आवृ०) (सर्व०)
- २- एह (२ आवृ०) (विशे०)
- १- प. १६५.६, सा. ४.३४.२
- २- सा. १५.४.१ चौ. १०.२
एउ (१ आवृ०) (सर्व०) प. १८७.१
एहु (१ आवृ०) (सर्व०) चौ. ३६.२
एहि (१ आवृ०) (विशे०) प. ११३.२
एही (२ आवृ०) (विशे०) प. ६३.२,
१२६.३
- १- इह (१ आवृ०) (सर्व०) प. ११३.६
- २- इह (१ आवृ०) (विशे०) प. १३०.१
इहु (२ आवृ०) (विशे०) प. २२.१,
१८६.५
- इहै (८ आवृ०) (विशे०)
- प. ५८.५, ६८.४, १८०.५
सा. २२.१.१, ३१.६.२, ३२.६.२
चौ. ७.१, ११.२

- १- प. ४०.७, ४०.८, १४०.५,
१७६.४, १७६.१०, १७६.१२
सा. १६.२६.१, ३१.२३.२
- २- प. १२.३, ६७.७, ८८.४,
१०२.१, ११३.४
सा. १५.८०.१
र. ३.६
चौ. १.२
- एहि (२ आवृ०) (विशे०)
(विशिष्ट प्रयोग)
प. १६६.४, १६६.५
लुंचित मुंडित मोनि जटाधर
एहि कहहि सिधि पाई
एहि कहहि बड़ हमहीं

ई (२ आवृ०) (विशे०)

प. १०५. १, र. १५.५

२.३.२.१.२ : विकृतरूप :

१- या (१ आवृ०) (सर्व०) सा. १४.६.२

१- इन (६ आवृ०) (सर्व०)

२- या (१५ आवृ०) (विशे०)

२- इन (१ आवृ०) (विशे०)

प० सहित—प. २३.४, ३१.४,

१-प० सहित—प. ३६.४, ८५.

६८.४, १०८.२, ११६.७, १५२.

६, १४२.६

२, १६४.१

सा. ३१.६.२

सा. २.८.२, २१.२८.१

र. ७.२, ७.४, ११.३, १७.६

प० रहित—प. ६३.४, ११०.११,

चौ. १.२

१६४.७, १७५.२, १८६.६

२-प. १०.२

सा. २.१४.२

इनि (१ आवृ०) (सर्व०)

१- इस (१ आवृ०) (सर्व०) प. १६२.६

र. १४.८

२- इस (५ आवृ०) (विशे०)

इनहीं (१ आवृ०) (सर्व०)

प० सहित—सा. २.२२.१, ६.६.

चौ. १.१

१, १३.३.२, १६.३.१

इन्ह (२ आवृ०) (सर्व०)

प० रहित—सा. १५.४५.१

प. २०.३

इसु (१ आवृ०) (विशे०) प. ४३.३

सा. ४.१६.१

इसहि (१ आवृ०) (सर्व०) प. २३.५

इहि (६ आवृ०) (विशे०)

सभी प० रहित—प. १०.६, ५१.

७, १३१.६, १३१.६, १३१.१०

सा. ३१.६.१

इहि (४ आवृ०) (विशे०)

सभी प० रहित—प. ५३.६, १३८.

१. १३८.७, १८३.२

इहीं, इही (१+१ आवृ०) (विशे०)

सा. २१.२४.१, २६.१.२

१- एहि (१ आवृ०) (सर्व०) सा. १०.

१३.२

२- एहि (२ आवृ०) (विशे०) सा. ११.

२.१, र. १५.५

यहि (१ आवृ०) (विशे०) प. ४१.१

यहु (१ आवृ०) (विशे०) सा. २.२०.१

उपर्युक्त इहै, एहि, इहि, इहि, इहीं, इही, इनहीं, इसहि आदि रूपों में संयोगात्मक तथा अवधारण बोधक प्रयोग देखे जा सकते हैं, किन्तु इनका अलग विभाजन अव्यावहारिक समझकर यहाँ नहीं किया गया। इसी प्रकार आगे अन्य सर्वनामों में भी नहीं किया जाएगा।

२.३.२.२ : दूरवर्ती :

२.३.२.२.१ : मूलरूप :

ए० व०

ब० व०

१- वह (५ आवृ०) (सर्व०)

वै (२ आवृ०) (सर्व०, विशे०)

२- वह (१ आवृ०) (विशे०)

सा. २.४.२ (सर्व०)

१- प. १५८.८

सा. २.२०.२ (विशे०)

सा. ६.६.२, १५.४६.२, २१.१०.२

१-ते (२६ आवृ०) (सर्व०)

२१.१०.२

२-ते (५ आवृ०) (विशे०)

२- सा. २.४२.२

१-प. ३२.४, ५०.५, ५८.७, ७३.

ओ (१ आवृ०) (सर्व०) र. १६.४

८, ८६.१०, ८८.८, १४०.५,

वो (७ आवृ०) (सर्व०)

१६५.८, १७३.४, १६६.२

प. ११८.५

सा १.७.२, २.४.२, ४.७.२,

सा. ४.५.२, ४.५.२, ११.१०.२,

१०.१.२, ११.२.२, १५.२१.

२२.६.२

२, १५.२४.२, १६.२३.२,

र. २.२, ३.४

१६.३२.१, २२.१.२, २६.१.

१- ओहु (४ आवृ०) (सर्व०)

२, ३०.५.२, ३०.२०.२, ३१.

२- ओहु (१ आवृ०) (विशे०)

१६.२, ३१.१६.२, ३३.६.२

१- चौँ. ३.२, २२.१, ३८.२, ३६.२

र. ११.६, ११.६, ११.७

२- सा. १०.१३.२

२-प. १७३.८

ओही (१ आवृ०) (सर्व०) चौँ. ३६.२

सा. ३.६.२, ४.६.२, २४.

ओइ (१ आवृ०) (विशे०) प. ८४.६

१५.१

वहि (३ आवृ०) (विशे०)

र. १०.१०

प. १००.५, १००.५, १००.५

तेई (२ आवृ०) (सर्व, विशे०)

१- वहु (१ आवृ०) (सर्व०) चौँ. ३५.२

सा. ३१.१२.२ (सर्व०)

२- वहु (२ आवृ०) (विशे०)

प. ११६२.८ (विशे०)

चौँ. ३३.२, ३३.२

तेऊ (१ आवृ०) (सर्व०)

वहै (१ आवृ०) (विशे०) प. १६२.६

प. २०.६

ऊ (२ आवृ०) (सर्व०)

सा. १५.१८.२, ३०.३.२

सु (८ आवृ०) (सर्व०)

प. ११६.८, १५६.८, १६१.५

सा. ६.३.२, ८.१.२, २५.३.२

चौं, १६.२, ४१.२

१- सो (१०१ आवृ०) (सर्व०)

२- सो (४४ आवृ०) (विशे०)

१- प. (४५ आवृ०) १.२ इत्यादि

सा. (३८ आवृ०) १६.१६.१ इत्यादि

र. (११ आवृ०) ३.१०, ६.३,

६.३, ७.६, ८.३, १०.७, १०.६,

११.३, ११.४, १७.६, १७.७

चौं. १३.१, २६.२, ३१.१, ३१.

२, ३६.१, ३७.१, ३८.१

२- प. (२६ आवृ०) ५४.२ इत्या०

सा. (१५ आवृ०) ७.६.१ इत्या०

चौं. १.२, १७.२, ३३.१

१- सोइ (१८ आवृ०) (सर्व०)

२- सोइ (८ आवृ०) (विशे०)

१- प. ६७.७, ८७.१०, ६४.१, ६४.

२, १२५.५, १४८.५, १५६.७,

१७६.६, १७७.१४

सा. २.७.२, २.१४.२, २.३४.२,

७.३.२, ७.४.१, १५.३२.२, २३.

६.१, २६.६.२, ३३.७.२

२- प. ६६.६, ६६.८, १७६.३

सा. १४.१२.१, १५.८८.२, २८.

७.१, ३४.१.२, ३४.२.२

१- सोई (२७ आवृ०) (सर्व०)

२- सोई (१८ आवृ०) (विशे०)

१- प. (८ आवृ०) ३५.६ इत्या०

सा. (११ आवृ०) १४.३४.२ इत्या०

र. २.१, १६.६, १८.१

चौं. ३.२, ५.२, ६.१, ३८.१, ४२.२

२- प. (६ आवृ०) १६.४ इत्या०

सा. (६ आवृ०) २८.१.२ इत्या०

२.३.२.२.२ : विकृतरूप :

१- वा (११ आवृ०) (सर्व०)

२- वा (७ आवृ०) (विशे०)

१- प० सहित—प. २३.६, ३४.१०,
६४.३, १०८.४, १४६.२, १६८.५
र. २.२, ८.१, १०.७

प० रहित—चौं. ३५.१, ३५.१

२- प० सहित—प. १०८.८, १४६.४,
१४६.८, १४७.१

सा. ४.३३.२, २४.८.२

प० रहित—प. १४७.८

उस (६ आवृ०) (विशे०)

प० सहित—सा. ६.६.२, ८.१६.

२, १०.१४.१, ११.८.१, २१.२.

२, २२.१४.१

प० रहित—प. १६२.३

सा. ६.३.२, १४.२८.१

उसही (१ आवृ०) (विशे०)

सा. ११.८.२

१- ता (४२ आवृ०) (सर्व०)

२- ता (१६ आवृ०) (विशे०)

१- सभी प० सहित

प. (१८ आवृ०) ४.६ इत्या०

सा. (२४ आवृ०) ४.३४.१ इत्या०

२- प० सहित

प. ४८.१, ४८.६, ४८.७, ४८.८,

१२४.६, १२७.३, १८५.५

सा. ४.३.२, ४.३२.२, १५.१६.

२, २४.७.२

बहुवचन के सभी रूप सर्वनाम के हैं ।

उन (४ आवृ०) (आदरार्थ)

प० सहित—प. ३४.१२

सा. ४.१.२

प० रहित—प. ४२.६, १५८.८

उनि (१ आवृ०) प. ८६.८

उनहुं (१ आवृ०) प. ४८.३

उनहूं (२ आवृ०) प. ४८.४, ४८.५

तिन (२५ आवृ०)

प० सहित—प. (८ आवृ०)

३०.३, ८०.५ इत्या०

सा. (८ आवृ०)

सा. ४.६.२ इत्या०

प० रहित—प. ८४.३, ६८.७,

११४.२, १७५.२

सा. २.३८.१, ४.४३.२, १६.

१३.१, १६.३२.२, ३२.१४.

१

तनि (३ आवृ०)

सभी प० सहित—प. ११२.४,

१३४.६, र. ६.६

तिनहिं (१ आवृ०) प. ४४.४

तिनहीं (४ आवृ०)

प० सहित—प. ७६.२

प० रहित—प. ३२.६, ६३.६

र. १२.६

तिनहुं (३ आवृ०)

- चौं. ६.२
 प० रहित—प. ४८.६, ७४.५,
 १२२.८, १४२.६
 सा. १५.३६.२
 चौं. २७.१, २७.२
 तास (४ आवृ०) (सर्व०)
 प० सहित—सा. ५.१३.२, ७.११.२
 प० रहित—सा. ७.६.१, १४.५.२
 तासु (६ आवृ०) (सर्व०)
 प० सहित—प. ११२.८, १५२.११,
 सा. २४.१३.१
 प० रहित—प. ३१.५, ५६.८,
 १३७.६
 सा. ४.१०.२, ४.१५.१, १७.३.१
 ताहि (१४ आवृ०) (सर्व०)
 सभी प० रहित—प. १२६.४, १३०.
 १४, १३४.४
 सा. (८ आवृ०) ५.७.२ इत्यादि
 चौं. ५.१, १२.२, १५.२
 ताही (५ आवृ०) (सर्व०)
 सभी प० सहित—सा. २.२६.२,
 ३.१७.२, २६.७.२, २७.४.२
 चौं. २०.२
 तिस (५ आवृ०) (सर्व०)
 प० सहित—प. ४०.२, १८३.६
 प० रहित—प. ११७.८, ११८.५
 सा. ८.८.१
 १- तिसु (१ आवृ०) (सर्व०)
 प० सहित—प. १३३.६
 २- तिसु (२ आवृ०) (विशे०)
 प० सहित—प. १२८.४, १२८.६
 तिसै (१ आवृ०) (सर्व०)
 प० रहित—प. ८८.५
- प० सहित—सा. ४.३५.२, २३.
 १.१
 प० रहित—र. ६.१
 तिन्ह (१ आवृ०)
 प० रहित—सा. ४.१२.१
 निम्नलिखित रूप वि० रु० व० व०
 के समान प्रयुक्त हैं—
 औ (१ आवृ०) प. १७६.१०
 (सुंदरि नाम न ओपै)
 ते (२ आवृ०)
 प. १६५.७ (ते वाधिनि धरि
 खाया)
 सा. १५.५८.२ (ते विविनां
 बागुल रचे)

तिसहिं (२ आवृ०) (सर्व०)

प० रहित—प. ८४.१०, सा. ८.८.१

१- तिहि (३ आवृ०) (सर्व०)

२- तिहि (३ आवृ०) (विशे०)

१- प० सहित—सा. ७.११.१,

र. २०.४

प० रहित—प. १६७.४

२- प. ६६.३, ६६.४, सा. १.३.२

१- तिहिं (३ आवृ०) (सर्व०)

२- तिहिं (३ आवृ०) (विशे०)

१- सभी प० सहित—प. ५२.२

सा. २०.४.२, ३०.१८.१

२- प० सहित—सा. १७.४.२

प० रहित—प. ११८.८,

सा. २.५५.२

१- तेहि (१ आवृ०) (सर्व०)

प० रहित—प. ७५.५

२- तेहि (४ आवृ०) (विशे०)

सभी प० सहित—प. १३६.५

सा. ४.१७.२, र. ३.१, १६.१

तेहिं (१ आवृ०) (विशे०)

प० सहित—सा. १३.१.२

तेनि (१ आवृ०) (सर्व०)

प० रहित—सा. ६.१५.२

निम्नलिखित रूप भी वि० रू० की तरह प्रयुक्त हुए हैं—

वहि (२ आवृ०) (विशे०)

प. १३१.६, १३१.१० (वहि बनि

कान्ह अहीरा रे)

तेई (१ आवृ०) (विशे०)

सा. २०.४.१ (जेहिं मारिग पंडित

गए तेई गई बहीर)

वो (१ आवृ०) (सर्व०)

र. २.२ (आदि अंत वो किनहुं न
जानां)

वा ५ स्थानों पर मू०रू०ए०व० की
तरह प्रयुक्त है।

सा. १४.१२.२ (वा मांग संवारै
पीव की)

अन्यत्र—प. १६२.७, सा. १४.११.२,
२४.२.२, २४.२.२

२.३.३ : संबंध वाचक :

२.३.३.१ : मूलरूप :

संबंधवाचक सर्वनाम के मू० रूप के पद दोनों वचनों में समान रूप से प्रयुक्त
हुए हैं। अतएव दोनों वचनों को एक साथ रक्खा गया है।

ए०व० व०व०

१- जु (६ आवृ०) (सर्व०)

२- जु (२ आवृ०) (विशे०)

१- प. ८८.८, १२८.७, १६६.३, १६३.२
र. ६.३, ८.३

२- प. १४१.३, सा. २८.७.१

१- जे (१७ आवृ०) (सर्व०)

२- जे (८ आवृ०) (विशे०)

१- प. ५०.५, ५०.७, १६६.६, १६२.८
सा. १.७.२, ३.२१.१, ४.१.२,
१५.७७.२, २६.१.२, ३०.५.२,
३०.१८.२, ३१.१२.२, ३१.१६.२
र. १०.७, १०.१०, चौ. ६.२, ३७.३

२- प. १६४.८, १६६.४, १६६.५, १६७.२
सा. २.४.२, ४.७.२, ११.१४.१, १६.६.२

१- जो (५६ आवृ०) (सर्व०)

२- जो (१० आवृ०) (विशे०)

१- प. (२४ आवृ०) ११.५ इत्या०

सा. (२५ आवृ०) २.३६.२ इत्या०

र. ३.१०, ६.३, ११.४, १६.३, १७.६, १७.११

चौ. २६.२

२- प. २६.३, ३०.३, ३२.६, ५२.५, ८२.६,

१३८.७, २००.३

सा. १५.५.२, र. ८.४, १७.१

जोई (सर्व०) प. १०४.५

२.३.३.२ : विकृतरूप :

ए० व०

१- जा (६५ आवृ०) (सर्व०)

२- जा (१३ आवृ०) (विशे०)

१- सभी प० सहित

प. (४१ आवृ०) प. ३१.१ इत्या०

सा. (२२ आवृ०) २.२४.२ इत्या०

चौ. ४.२, ४२.२

२- प० सहित—प. ३६.३, ८६.२,

१४७.१, १५६.४

प० रहित—प. ३३.५, १८२.५

सा. ४.२०.१, ६.४.१, ६.२७.१,

६.२६.१, १५.८८.२

र. १२.५, चौ. १५.२

जासु (विशे०) र. ६.७ (प० रहित)

जिस (३ आवृ०) (सर्व०)

प० सहित—प. १७२.४,

र. ४.६

प० रहित—सा. ८.८.१

जिसहि (सर्व०)

(प० रहित) सा. ८.८.१

जिसु (२ आवृ०) (विशे०)

प० सहित—प. १८७.४

सा. १४.२.१

१- जिहि (५ आवृ०) (सर्व०)

२- जिहि (७ आवृ०) (विशे०)

व०व० व०व०

१- जिन (२५ आवृ०) (सर्व०)

२- जिन (२ आवृ०) (विशे०)

१-प० सहित

प. ४४.५, ७३.८

सा. २.३.१, १५.२१.२, १५.

४२.२, २३.२.२

प० रहित

प. (६ आवृ०) ५६.७, ७६.

२ इत्या०

सा. (६ आवृ०) १.१६.२

इत्या०

र. ११.६

२-प. ४०.२ (प० रहित)

१६५.२ (प० सहित)

१-जिनि (२३ आवृ०) (सर्व०)

२-जिनि (१ आवृ०) (विशे०)

१-प० सहित—प. ६३.१०

प० रहित—

प. (१० आवृ०)

प. ५५.३ इत्या०

सा. (८ आवृ०)

सा. ३.१६.१ इत्या०

र. ६.१, ६.६, १०.६, १२.६

२-प. १७३.८ (प० रहित)

१- प० सहित—प. १५५.१५

प० रहित—प. १२६.२

सा. १४.१६.२ र. १७.७,

चौ. १६.२

२- सभी प० रहित

प. ६४.१, ६४.३

सा. १.३.२, ३.६.१, १२.७.१

र. १६.६, चौ. १७.२

१- जिहि (४ आवृ०) (सर्व०)

२- जिहि (१७ आवृ०) (विशे०)

१- सभी प० रहित

सा. २.७.२, २.३४.२, १४.२८.२,

१५. ३५.१

२- सभी प० रहित

प. ३०.४, ६२.४, १६६.३

सा. (१४ आवृ०) ४.६.२ इत्या०

जाहि (२ आवृ०) (सर्व०)

दोनों प० रहित

सा. ७.४.१, २५.७.२

जेहि (४ आवृ०) (सर्व०)

प० सहित—र. १६.६

प० रहित—प. ८.२

र. १४.१, १४.२

१- जेहि (२ आवृ०) (सर्व०)

२- जेहि (२ आवृ०) (विशे०)

१- दोनों प० रहित

प. २७.४, सा. १४.३२.२

२- सा. २०.४.१, २६.३.२ (प० रहित)

जो सा. १५.३१.२ (जो पहिले सुख भोगिया) में विकृत रूप में प्रयुक्त हुआ है।

जिनहि (सर्व०)

प० रहित—प. ४४.४

जिनहुं (२ आवृ०) (सर्व०)

दोनों प० रहित

सा. ४.१२.२, २३.१.१

जिन्ह (२ आवृ०) (सर्व०)

प. ८६.१० (प० रहित)

सा. १५.२१.२ (प० सहित)

जिन्हि (सर्व०)

प. १०३.४ (प० रहित)

२.३.४ : नित्य संबंधी :

निश्चयवाचक सर्वनाम सो तथा उसके प्रायः सभी रूप नित्यसंबंधी सर्वनाम के रूप में भी प्रयुक्त हुए हैं। नित्यसंबंधी सर्वनाम में दो संबंध सूचक सर्वनामों के बीच एक वाक्य अथवा वाक्यांश रहता है। कहीं-कहीं उनमें से एक सर्वनाम का लोप भी हो जाता है। उसकी उपस्थिति बोधगम्य रहती है। क० अं० में प्रयुक्त ऐसे प्रयोगों की आवृत्तियाँ लगभग ४१३ हैं। रूप-रचना की दृष्टि से ऊपर सो तथा उसके विकृतरूपों पर विचार किया जा चुका है। यहाँ नित्यसंबंधी के कुछ उदाहरण-मात्र प्रस्तुत किए गए हैं—

२.३.४.१ : मूलरूप :

ए० व० ब० व०

जे राम कहैला सो रामहिं ह्वैला प. १६६.६

सो ब्रह्मा जो कथै गियांन प. १७२.५

इसी प्रकार

जो.....सो सा. ६.२.१

जो.....सो प. १०.१

सो.....जो प. १०८.१

२.३.४.२ : विकृतरूप :

ए० व० ब० व०

अकेला सर्वनाम : ते: राम रमे ते कुरुरि के पूता प. १४०.५

राम कहैं ते सूचा प. ५८.७

दो सर्वनाम : जिन प्रभु जीव पिंडु था दीया प. ४०.२

तिन की भाव भगति नहिं साधी ,,

जिसतिस सा. ८.८.१

जिसहिं.....तिसहिं सा. ८.८.१

२.३.५ : प्रश्नवाचक :

२.२.५.१ : प्राणिवाचक

प्रश्नवाचक सर्वनाम के म०रू० ए०व० और ब०व० के रूप समान रूप से प्रयुक्त मिलते हैं। को सर्वनाम की पुनरुक्ति से भी ब०व० का द्योतन हुआ है।

२.३.५.१.१ : मूलरूप

ए०व० ब०व०

१- कवन (३ आवृ०) (सर्व०)

२- कवन (१० आवृ०) (विशे०)

१- प. १३३.८, १८०.५ र. ७.४

२- प. ३८.२, ४०.३ ४०.३, ४६.१,
६६.७, १२६.१, १३२.४, १७८.१,
१६१.१, १६२.१

कवनां (सर्व०) प. २१.३

१- को (१६ आवृ०) सर्व०)

२- को (१ आवृ०) (विशे०) चौं. ४.१

१- प. (१५ आवृ०) ८.४, ४.३.१ इत्या०
(को को) प. ४३.४, (को धौं) प. १८०.५

सा. १०.१.२, ३१.१४.१

र. १४.५, १६.२

१- कौन (१८ आवृ०) (सर्व०)

२- कौन (१२ आवृ०) (विशे०)

१- प. (१४ आवृ०) ४६.३, ४६.४ इत्यादि०
सा. ३.२४.२, १६.५.२ २१.३.२, २६.५.२

२- प. १२५.३, १४६.१, १४६.२,
१७१.१, १७५.७, १६७.१, २००.२

सा. १.२४.२, २.३.२, १०.१३.१,

२१.५.२, र. १.४

२.३.५.१.२ : विकृतरूप

ए०व०

कवन (सर्व०) (ए०व० ब०व०)

प० सहित प. १३४.७

कौन (३ आवृ०) (सर्व०) (ए०व० ब०व०)

प० सहित—प. ६६.३, सा. ३.२०.२

प० रहित—र. ५.४

१- कौनै (२ आवृ०) (सर्व०) (ए०व० ब०व०)

२- कौनै (३ आवृ०) (विशे०) (ए०व० ब०व०)

१- दोनों प० रहित—प. १५८.५,

१६४.२

ब०व०

किन (५ आवृ०) (सर्व०)

सभी प० रहित

प. १५६.६, १७४.६, १७८.७

र. ५.३ ७.३

किनि (सर्व०)

प० रहित प. ८५.१०

आप आप (कौं) सा. १५.६०.२

आपस^१ प. १६१.६ (आपस कौं)

आपु (६ आवृ०)

सभी प० रहित—प. ६८.१०,

१६०.६, १६६.२, सा. ४.१.२

निज (१४ आवृ०) (विशे०)

प. १०.१३. २८.५, ११८.२,

१५३.५, १६५.८

सा. (७ आवृ०) ६.१६.२ इत्या

र. १६.१

२.३.६.३ : संबंध क

अपनां (६ आवृ०)

प. ६.४, ६५.२, ६६.६

सा. ५.१.१, ५.५.२, १५.७५.२

अपनीं (६ आवृ०)

प. १५.१०, १००.१, १६०.५

सा. १.२०.१, १५.१३.२, १८.२

अपनीं अपनीं सा. ५.२.२

अपनै (१३ आवृ०)

प. २७.२, ३५.१०, ८१.१, १०६

सा. ४.४३.१, १०.१२.१, १५.२६३.१

१६.२६.१, १६.३.१, २३.२.२,

अपनै अपनै प. ६१.३

अपनीं प. १३१.८

आपतै प. १.२ (आपतै रंगी)

आपन (५ आवृ०) प. ४३.६, १६६.५५

सा. ६.४.२, ३२.१.२, र. १७.१

आपनां सा. ५.१३.१, २०.११.१

ए०व० व०व०)

^१ 'आपस' के स्थान पर दा० (गौड़)

आपुन, आपन, अपने, अपनै आदि पाठ सम्मत पाठ न होने से तथा एक ही प्रयोग उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

१- क्या (३६ आवृ०) (सर्व०)

२- क्या (२ आवृ०) (विशे०) प. २३.७, १६१.३

१- प. ६१.३, ७०.३, ७२.२, ७२.१०,

७४.७, ८६.८, ६६.१, १६६.८

सा. (२६ आवृ०) १.१.२ इत्या०

र. ४.६, चौ. ४.१

२.३.६ : निजवाचक

निजवाचक सर्वनाम में आपस सर्वनाम आप अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। परिनिष्ठित हिन्दी में यह परस्परताबोधक सर्वनाम के रूप में प्रयुक्त होता है। इसके पाठ के संबंध में अलग से विचार किया जाएगा। निजवाचक सर्वनामों की पुनरुक्ति भी देखी जाती है। सभी रूप केवल एकवचन में प्राप्त होते हैं।

२.३.६.१ : मूलरूप

आप (१३ आवृ०)

प. २६.५, १०७.८, ११०.३, १२३.८

१३८.८, १४६.८, १६७.४, १६७.६

सा. ६.२८.२, र. १०.३, ११.८, १३.३,

चौ. १२.२

आपहि (४ आवृ०)

प. २१.३, २१.३, ११६.२, १७८.४

आपि प. १६०.४, १६१.७

आपु प. १७६.५

आपु आपु र. १७.१०

आपुन सा. ३१.२४.२

आपुहि र. १०.१

आपै सा. २६.६.२

आपै (५ आवृ०) प. ११६.२, १३०.१७

सा. १६.११.२, ३०.२५.१, र. ११.८

२.३.६.२ : विकृतरूप

आप (५ आवृ०)

प० सहित—सा. ११.१६.१, १५.६.२

प० रहित—सा. १२.१०.२, १४.३६.१,

१५.२३.२

आप आप (कौं) सा. १५.६०.२
 आपस^१ प. १९१.६ (आपस कौं मुनिवर कहैं)
 आपु (६ आवृ०)
 सभी प० रहित—प. ६८.१०, ११८.१०,
 १६०.६, १६६.२, सा. ४.१.२, र. ७.१
 निज (१४ आवृ०) (विशे०)
 प. १०.१३, २८.५, ११८.२, १२२.११,
 १५३.५, १६५.८
 सा. (७ आवृ०) ६.१६.२ इत्या०
 र. १६.१

२.३.६.३ : संबंध कारकीय रूप (वि० वत्)

अपनां (६ आवृ०)
 प. ६.४, ६५.२, ६६.६
 सा. ५.१.१, ५.५.२, १५.७५.२
 अपनीं (६ आवृ०)
 प. १५.१०, १००.१, १६०.५
 सा. १.२०.१, १५.१३.२, १८.२.२
 अपनीं अपनीं सा. ५.२.२
 अपनै (१३ आवृ०)
 प. २७.२, ३५.१०, ८१.१, १०६.१, ११६.२
 सा. ४.४३.१, १०.१२.१, १५.२६.१, १५.८०.१,
 १६.२६.१, १६.३.१, २३.२.२, र. १६.५
 पनै अपनै प. ९१.३
 पनौ प. १३१.८
 आपतै प. १.२ (आपतै रंगी)
 आपन (५ आवृ०) प. ४३.६, १६६.५,
 सा. ६.४.२, ३२.१.२, र. १७.१
 आपनां सा. ५.१३.१, २०.११.१

^१ 'आपस' के स्थान पर दा० (गौड़ी ३६) में 'आपन' पाठ मिलता है। यहाँ आपुन, आपन, अपने, अपनै आदि पाठ अधिक संगत प्रतीत होते हैं। व्याकरण सम्मत पाठ न होने से तथा एक ही प्रयोग प्राप्त होने से 'आपस' पाठ के लिए संदेह उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

आपनीं (४ आवृ०)

सा. ६.५.२, १५.१३.१, १६.१८.१, ३०.११.१

आपनीं सा. २.१४.१, ८.१५.२, २. ५.६

आपनीं र. ८.२

२.३.७ : आदरवाचक

क० ग्रं० में आदरवाचक सर्वनाम के केवल दो ही प्रयोग मिलते हैं। इन्हें मध्यम पुरुष सर्वनाम का रूप भी कह सकते हैं।

आप सा. १५.७६.१ (कबीर नवै सो आप कौं)

रउरा^१ प. १७२.१ (आसन पवन दूरि करि रउरा)

२.३.८ : अनिश्चयवाचक :

२.३.८.१ : प्राणिवाचक :

२.३.८.१.१ : मूलरूप :

ए०व०

ब०व०

काइ (सर्व०) सा. १६.२६.१

अभाव है।

१- कोइ (७० आवृ०) (सर्व०)

२- कोइ (१५ आवृ०) (विशे०)

१- प. ३.१, १०.१, ५५.३, ६७.८,

७८.२, ६०.१, ६६.६, ११३.२,

१४७.१

सा. (५६ आवृ०) ६.२.२ इत्या०

र. १४.६, १६.७

चौं. ३०.२, ३१.२, ३५.२

^१ 'रउरा' भोजपुरी का सर्वनाम पद है। पूरी क० ग्रं० में केवल एक प्रयोग विचारणीय है? प्रस्तुत प्रसंग में यह पाठ असंगत प्रतीत होता है; क्योंकि प्रसंग की दृष्टि से 'रउरा' के स्थान पर कोई संबोधन-सूचक पद होना चाहिए था, जैसा कि दूसरी पंक्ति में 'बौरा' का प्रयोग इसकी अपेक्षा रखता है। दा०^१, दा०^२ (भैरू^३ ३१) और नि० (भैरू^३ ३०) में 'रे' पाठ है और गु० (विलावलु ८) में 'बवरे' पाठ मिलता है। इन पाठों के रहते हुए भी 'रउरा' पाठ स्वीकार करने में सम्पादक का कोई विशेष आग्रह जान पड़ता है अन्यथा रउरा, राउर, रावरे, रउवां, रावरो, राउरे आदि रूपों का कहीं भी उल्लेख न मिलने पर भी केवल एक स्थान पर यही पाठ क्यों स्वीकार किया जाता ?

२- प. १४६.४

सा. (१४ आवृ०) १५.७६.१ इत्या०

१- कोई (७८ आवृ०) (सर्व०)

२- कोई (१२ आवृ०) (विशे०)

१- प. (५१ आवृ०) १६.४, २६.१ इत्या०

सा. (१८ आवृ०) ५.२.१. ५.६.१ इत्या०

र. २.२, २.६, १०.५, १३.८, १४.१

चौ. ३.२, ५.२, २७.१, ३६.२

२- प. (८ आवृ०) ३४.१४, ५१.१ इत्या०

सा. ६.५.१, ६.८.२, २४.१२.२,

३०.६.२

कोऊ (५ आवृ०) (सर्व०)

प. २४.५, ४५.३, ७३.५, ७३.५, १६८.१

२.३.८.१.२ : विकृतरूप :

ए०व०

ब०व०

काहू (१४ आवृ०) (सर्व०)

किनहुं (८ आवृ०) (सर्व०)

प० सहित—प. ३८.२, ६५.४,

सभी प० रहित

१६३.६, १६३.६

प. ६६.४, ८५.४, ८५.६,

सा. १५.३०.२, ३१.८.१

१७७.१०

प० रहित—प. ६५.४, ६५.५, ६५.५,

सा. १.७.१, १६.१५.१,

६५.६, ६५.६, ६१.४, १५०.१

३१.६.२, र. २.२

सा. २६.४.२

किनहुं (सर्व०)

किसी (सर्व०) प. १६३.५ (प० सहित)

र. १२.२, १५.३

किस (ही) (सर्व०) सा. ३२.२.२ (प० सहित)

उपयुक्त रूपों के अतिरिक्त एक आध संयुक्त पद भी कोई की तरह प्रयुक्त हुआ है—

प. ३२.१ (तेरा जनु एक आध है कोई)

सा. १.२६.२ (गुरु ग्यांन तैं एक आव उबरंत)

२.३.८.२ अप्राणिवाचक : (मूलरूप)

१- कछु (१८ आवृ०) (सर्व०)

२- कछु (८ आवृ०) (विशे०)

१- प. २.२, २०.४, ६१.४, ७६.२,
८३.६, १००.२, १२३.३
सा. (६ आवृ०) १.१.१ इत्या०
र. १३.६, १६.४

२- प. ३४.५, ७८.४, ८३.३, १८८.६,
२००.३
सा. ६.२०.२, ६.२२.१, १३.२.२

कुछ्छ (सर्व०) प. ३४.४

कछ्छ (११ आवृ०) (सर्व०)

प. ६.६, ८४.४, ८८.७, १०८.४, ११३.५,
११५.६, १३०.१५
सा. ४.२३.२, ८.४.१, १५.५६.२
र. १३.३

किछ्छ (४ आवृ०) (सर्व०)

प. ३६.७, ५३.६, ६६.१, सा. ६.२.१

किछ्छ (सर्व०) प. १२२.५, सा. ४.१२.१

२.३.६ : अनिश्चयवाचक सर्वनाम की भाँति प्रयुक्त शब्दावली :

क० ग्रं० में अनिश्चयवाचक सर्वनाम की तरह कुछ शब्द प्रयुक्त हुए हैं। ऐसे रूप दोनों वचनों में प्राप्त हैं। मू०रू०, वि० रू० तथा संयोगात्मक कारक रूप तीनों में पद प्रयुक्त हैं। अवधारण बोधक रूपों से संयुक्त रूप भी प्रयुक्त हैं। परसर्ग सहित और परसर्ग रहित दोनों प्रकार के प्रयोग प्राप्त हुए हैं। नीचे ऐसे सभी रूपों की सूची प्रस्तुत की गई है—

पद

आवृत्तियाँ

उदाहरण

सर्व०रूप विशेष रूप (पहला उदा० सर्व० और दूसरा विशेष का होगा)

अउर	१	१	अउर पढ़न सौं नहीं कांम प. २६.२ अउर दुनीं सम प. १३३.१०
अउरो	१	—	उस रखवारा अउरो होवै प. १६२.३
अवरै	—	१	अवरै अकिलि प. १३४.२
आंन	७	४	रांम चरन चित आंन उदासी प. २८.३ आंन देव सौं प. १५५.२

और	१८	१०	हरै और की व्याधि सा. २४.१०.१ और मुलुक प. १७७.६
औरन	४	—	औरन हंसत प. १६७.६
औरनि	१	—	औरनि मैं हूं सब प. ५३.१
औरा	१	—	बिगरै मति औरा प. १६०.२
औरै	—	२	पाइं औरै प. १.३, १.३
दुतिअ	—	१	दुतिअ नांहीं कोइ प. ६७.८
दूजा	—	१०	भाव है दूजा प. ७७.३
दूजी	—	१	तुमहिछांड़ि जानउं नहि दूजी प. २२.४
दूजै	—	१	दूजै सहा न जाइ सा. ४.२५.२
दूसर	—	१	जे दूसर होइ प. ८७.६
पराई	—	२	नारि पराई सा. ३०.११.१
पराए	—	१	दोख पराए सा. २२.२.२
पर	—	१३	परनिदा प. ४०.५
बिरांनीं	१	१	तुमै बिरांनीं क्या परी सा. १५.१३.२ रासि बिरांनीं सा. २१.१.२
सकल	२	१८	हरि बिन सकल अयांनां प. ६६.३ सकल जग चौं. १७.२
सगला	—	१	सगला जग सा. ४.४२.१
सगली	१	—	सगली जरि जाइ सा. २.८.२
सगले	—	१	सगले जीअ प. १६२.२
सगलो	१	—	यह जग सगलो बंधा प. १८६.५
सब	२४	६३	सब का किया बिबेका हो प. ६०.२ सब जग सा. ३१.१.२
सबहि	१	—	सबहि पियारे राम के सा. ५.११.२
सबहिन	२	—	सबहिन मैं प. ५४.६
सबहिन्ह	१	—	सबहिन्ह महि प. ५३.१
सबहीं	१	—	सबहीं लेखा र. १२.२
सबही	१	१	सबही करि सा. १८.१४.२ सबही जाण सा. ११.१०.२
सबै	२	६	सबै फिरि प. ६६.२ अंधा सबै र. १३.७
सभ	६	८	सभ परिहरि प. ८.५

			सभ बनराइ प. ७७.६
सभनि	४	—	सभनि पयांना कीन्ह प. १०२.४
सभै	५	४	सभै कीन्ह र. १०.२
			सभै गुन प. १५५.१४
समूला	१	—	समूला जाइ सा. ३०.१६.२
सरब	२	२	सरब समान प. १०.५
			सरब तत्त प. १०२.२
सरबस	२	—	सरबस हारघो प. ६८.७
सारा	—	१	जग सारा र. १७.८

२.३.१० : सार्वनामिक विशेषण :

विशेषण के अन्तर्गत परिमाण, रीति और संख्या के द्योतक सार्वनामिक विशेषण तथा संज्ञा के पूर्व प्रयुक्त निश्चयवाचक, संबंधवाचक, प्रश्नवाचक और अनिश्चयवाचक सर्वनामों से प्राप्त सार्वनामिक विशेषण-रूपों पर विचार किया जा चुका है। यहाँ केवल सर्वनाम क्रम से दूसरे प्रकार के सार्वनामिक विशेषणों की पूरी संख्या दी गई है^१—

निकटवर्ती निश्चयवाचक से बने विशेष० रूप	१३२
दूरवर्ती निश्चयवाचक से " " " 	१३५
संबंधवाचक से " " " 	६६
प्रश्नवाचक से " " " 	३५
अनिश्चयवाचक से " " " 	१६२

२.३.११ : संयुक्त सर्वनाम :

२.३.११.१ : संबंधवाचक + अनिश्चयवाचक :

जे	+	कोइ	=	जे कोइ प. १३०.१७
जे	+	कोई	=	जे कोई सा. ११.१५.१, चौं. ३७.१
जो	+	कोई	=	जो कोई प. ३५.४, सा. २३.६.१
जो	+	कछु	=	जो कछु प. १४२.२, १५७.१०, सा. ३.८.२, ८.१.२

६.६.२

^१ पुरुषवाचक सर्वनामों से भी सार्वनामिक विशेषण बन सकते हैं, यथा—

मों गरीब की को गुदरावै प. ४२.१

मो मनि पाड़ी भोल सा. ३१.१६.१

किन्तु प्रस्तुत अध्ययन में पुरुषवाचक सर्वनामों को सार्वनामिक विशेषण का का आधार नहीं बनाया गया है।

जो + किछु = जो किछु प. ६३.८, सा. ६.२.१, २५.३.२

२.३.११.२ : निकटवर्ती निश्चयवाचक + अनिश्चयवाचक :

यहु + सब = यहु सब प. १६५.१०

ए + सभ = ए सभ प. ६६.७, चौं. १.२

२.३.११.३ : दूरवर्ती निश्चयवाचक + अनिश्चयवाचक :

सो + सभ = सो सभ प. १७७.१३

२.२.११.४ : अनिश्चयवाचक + अनिश्चयवाचक :

अवर + कोइ = अवर कोइ र. २.१

और + सकल = और सकल प. १७६.४, १७६.१०, १७६.१२, १७८.
८, सा. ३.१४.१

औरै + कोइ = औरै कोइ सा. ८.४.२

और + कोई = और कोई सा. २.१७.२

और + सबै = और सबै प. १७६.६

कछु + आन = कछु आन प. १७२.६

कछु + और = कछु और सा. ११.६.१

दुतिअ + कोइ = दुतिअ कोइ प. ६७.८

दूजा + कोइ = दूजा कोइ सा. ३२.११.२

दूजा + कोई = दूजा कोई सा. २८.३.१

सब + काहू = सब काहू सा. ३.२६.२, ६.४.२

सब + कोइ = सब कोइ प. १३.३, २६.१, सा. ३.२५.१, ४.४२.१,
८.८.१, १०.५.१, १०.११.१

सब + कोई = सब कोई प. १४.२, १७६.४, सा. १०.३.२

सभ + कछु = सब कछु चौं. १.१

सभ + कोइ = सभ कोइ प. ४७.७

सभै + कोई = सभै कोई प. १७३.७

२.३.११.५ : सर्वनाम + विशेषण :

कछु + इक = कछु इक सा. २६.१०.२

कछु + एक = कछु एक चौं. २.२

कोई + एक = कोई एक सा. २८.७.२, ३१.१७.२

२.३.११.६ : विशेषण + विशेषण :

एक + आध = एक आध सा. १.२६.२

२.३.१२ : संज्ञा के समान प्रयुक्त सर्वनाम :

क० ग्रं० में निम्नलिखित सर्वनाम रूप-रचना की दृष्टि से सर्वनाम हैं; किन्तु अर्थ अथवा स्थितिजन्य मूल्य के कारण संज्ञा के समान प्रतीत होते हैं—

- आप : जहां खिमां तहं आप सा. १५.३३.२
ताकै हिरदै आप सा. १५.१६.२
यौं आपा मांहैं आप सा. ६.१०.२
- तूं तूं, तूं : तूं तूं करता तूं भया सा. ३.६.१
मैं तैं : मैं तैं आपा दूरि न डारा प. १६५.६
मैं मैं : मैं मैं बड़ी बलाइ है सा. १५.७१.१
मैं मेरा : कहै कबीर छांड़ि मैं मेरा प. ६५.७
मैं मेरी : मैं मेरी ममता कै कारनि प. १४७.५
मैं मेरी करि बहुत बिगूता र. १७.३
मेरि : मेरि मिटी मुकता भया सा. ३२.११.१
मेरी मेरी : मेरी मेरी झूठी प. ६५.६
मेरी मेरी करै प. ७१.३
मेरी मेरी मिटि जाइ प. ७१.४
मेरी मेरी करता जनम गयौ प. ८३.१
- मोर तोर : मोर तोर महं जर जग सारा र. १७.८
मोर तोर की जेवरी सा. २१.३२.१
- सोहं : सोहं हंसा ताकौ जाप प. १३०.१४

क्रिया

२.४. क० ग्रं० में प्राप्त धातुओं तथा क्रियापदों पर विचार करने से पहले तत्संबंधी कुछ विशेष सूचनाएँ दे देना आवश्यक प्रतीत होता है। सूचनाएँ इस प्रकार हैं—

- (क) कुछ धातुओं में पदग्रामिक विकल्प (मार्फोमिक आल्टरनेण्ट्स) रूप भी प्राप्त होते हैं, जिन्हें किसी मूलधातु का सहपदग्राम (एलोफार्म) भी कह सकते हैं, जैसे—कर धातु के करी, कि, की; ले धातु के लि, ली

तथा दे धातु के दि, दी आदि विकल्प मिलते हैं। प्रस्तुत अध्ययन में संकेत के लिए इन्हें इस प्रकार रखा गया है—

कर००करी००कि००की यथा— करीजै, किया, कीजिए

ले ००लि ००ली यथा— लिया, लीजिए

दे ००दि ००दी यथा— दिया, दीजिए

- (ख) कुछ क्रियापदों में धातु तथा प्रत्यय के बीच संध्यक्षर (यूफोनिक ग्लाइड) का आगम भी हुआ है, जैसे—कीजिए में -ज-, लिया में -य-, पावा में -व- आदि। इन्हें इस प्रकार रखा गया है—

कर००कि + ज + इए = कीजिए अथवा कीज + इए भी संभव है।

ले००लि + य + आ = लिया अथवा लिय + आ भी संभव है।

पा + व + आ = पावा अथवा पाव + आ भी संभव है।

- (ग) कुछ क्रियापदों में -इअौ, -इयौ और -इया, -इआ मुक्त संपरिवर्तों (फ्री-वैरिएशन) रूप में प्रयुक्त हुए हैं। इन्हें इस प्रकार रखा गया है—

-इयौ ~ -इअौ अथवा -इअौ ~ -इयौ

-इया ~ -इआ अथवा -इआ ~ -इया

- (घ) कुछ धातुओं में एक प्रत्यय जुड़ जाने के बाद (उपधातु बन जाने के बाद) अन्य प्रत्यय संयुक्त हुए हैं, जैसे—

कर००की + ईन बन जाने के बाद -आ संयुक्त होने से—

कीन + आ = कीनां अथवा -ई जुड़ने से—

कीन + ई = कीनी रूप प्राप्त हुए हैं।

- (च) पहले दी गई सूचना के अनुसार धातुओं में कहीं भी हलन्त-चिह्न का प्रयोग नहीं किया गया है। अतएव व्यंजनांत धातुओं को हलन्त () से युक्त समझना चाहिए।

- (छ) प्रत्येक प्रत्यय से प्राप्त क्रियापद की पूरी आवृत्तियाँ कोष्ठक में दी गई हैं; किन्तु यदि मुख्य अथवा सहायक क्रिया संयुक्तक्रियापद रूप में प्रयुक्त हुई है तो उसकी आवृत्तियाँ संयुक्त क्रियापद के साथ ही दी गई हैं।

२.४.१ : धातु :

क० ग्रं० में साधारण और प्रेरणार्थक दो प्रकार की धातुएँ प्रयुक्त हुई हैं।

साधारण धातु में -अव-, -आ-, और -आव- जोड़कर प्रेरणार्थक (कर्त्ता को क्रिया करने की प्रेरणा) रूप प्राप्त किए गए हैं। प्रेरणार्थक धातुरूप में अन्य प्रत्ययों को जोड़कर अन्य क्रियापद निष्पन्न हुए हैं।

क्रिया की काल-रचना में प्राप्त विभिन्न क्रियापदों के विवेचन के साथ प्रेरणार्थक धातुओं का उल्लेख किया जाएगा। यहाँ कुछ उदाहरण मात्र प्रस्तुत किए गए हैं—

धातु + -अव-

दुख + अव + औ = दुखवौ सा. ४.१६.१ (इन्ह दुखवौ मति कोइ)

धातु + -आ-

बज + आ + इए = बजाइए सा. १.५.२ (बंसि बजाइए फूँकि)

चढ़ + आ + अइ = चढ़ाइ सा. १५.३०.१ (मादल कंध चढ़ाइ)

चढ़ + आ + अई = चढ़ाई प. १४२.७ (ग्यांन बिभूति चढ़ाई)

मूड़ + आ + अइ = मुड़ाइ सा. २५.१.२ (भावै घुरड़ि मुड़ाइ)

धातु + -आव-

पकड़ + आव + औ = पकड़ावौ सा. १५.८६.१ (मति पकड़ावौ ठौर)

समुझ + आव + आ = समुझावा चौं. ६.२ (औरनि समुझावा)

मूड़ + आव + अत = मुड़ावत सा. २५.१६.१ (मूड़ मुड़ावत दिन गए)

मिल + आव + अहिं-गे = मिलावहिंगे प. ५७.८ (हंसहिं हंस मिलावहिंगे)

२.४२ : वाच्य :

क्रिया में कर्त्ता अथवा कर्म अथवा भाव की प्रधानता को सूचित करने वाला वाच्य कहा जाता है। क० ग्रं० में कर्मवाच्य का प्रयोग कर्तृवाच्य की अपेक्षा कम मिलता है।

२.४.२.१ : कर्तृवाच्य :

कहै कबीर प. ४७.५

मैं अव प्रभु कहहुं काहि प. ४३.४

इस प्रकार के बहुत अधिक उदाहरण क० ग्रं० में प्राप्त हैं।

२.४.२.२ : कर्मवाच्य :

कर्मवाच्य वियोगात्मक और संयोगात्मक दोनों पद्धतियों में प्राप्त है—

• वियोगात्मक

२.४.२.२.१ : कृदन्ती रूपों में जाना क्रिया के रूप जोड़कर—

अव कछु कहा न जाइ सा. ६.६.२

दूजै सहा न जाइ सा. ४.२५.२
तब दरसन किया न जाई प. ७२.८
महिमां कही न जाइ सा. ६.१२.१

संयोगात्मक

२.४.२.२.२ : विभिन्न प्रत्ययों को जोड़कर—

कह+आव+आ=कहावा र. १.५ (भग भोगन कौं पुरिख कहावा)
कह+इए=कहिए र. १०.८ (काको कहिए बाभन सूदा)
चीर+इअ्रै=चीरिअ्रै सा. २४.२.२ (वा चीरिअ्रै)
सुन+इयतु=सुनियतु प. ४५.३ (सुनियतु सुजस तुम्हार)
कह+आव+ऐ=कहावै सा. ३४.२.२ (सहज कहावै सोइ)

२.४.२.३ : क० ग्रं० में यद्यपि कर्तृवाच्य की अपेक्षा कर्मवाच्य का प्रयोग कम मिलता है, फिर भी कर्मणि प्रयोग के उदाहरण अधिक मात्रा में मिलते हैं। पश्चिमी हिन्दी के मैंने रोटी खाई है में मैं कर्त्ता है अर्थात् कर्तृवाच्य हुआ; किन्तु प्रयोग कर्मणि है। इसी प्रकार के कर्मणि प्रयोग क० ग्रं० में अधिक देखे जा सकते हैं। किन्तु वाच्य और प्रयोग का निर्णय वाक्य के ही आधार पर संभव है—शब्दरूप के आधार पर सही निर्णय संभव नहीं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

दीपक दीया तेल भरि वाती दई अघट्ट सा. १.१५.१

पूरा किया बिसाहुनां सा. १.१५.२

जब गोबिंद किरपा करी सा. १.१६.२

लालच खेला डाव सा. १.१७.१

चौपड़ माड़ी चौहटै सा. १.३२.२

अंबरि कुंजां कुरलियां सा. २.३.१

नैनां नीभर लाइया सा. २.४८.१

मैं रे अबूभी बूभिया सा. ४.१२.१

गुरू दिखाई बाट सा. ६.१६.२

भगति बिगाड़ी कामियां सा. ३०.१४.१

जिनि तोड़ी कुल की कांनि सा. ३१.१७.२

इस प्रकार के प्रयोग अधिकतर साखियों में ही मिलते हैं।

२.४.३ : कृदंत :

क्रिया की काल-रचना में मुख्य क्रिया के अतिरिक्त सहायक क्रिया और कृदंत बहुत सहायक होते हैं। सहायक क्रिया, पूर्वकालिक क्रिया (कृदंत) तथा क्रियार्थक

संज्ञा का उल्लेख यथास्थान किया जाएगा। सर्वप्रथम कृदंतों का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है।

२.४.३.१ : वर्तमानकालिक कृदंत :

मुख्य प्रत्यय -अत और -अंत हैं। इन्हीं रूपों में अन्य प्रत्यय भी संयुक्त हुए हैं।

धातु + अत (७७)^१

घूम + अत = घूमत सा. १२.५.२

सूँघ + अत = सूँघत प. २.४

पी + व + अत = पीवत सा. १४.३३.१

दे + अत = देत सा. १४.४०.१

(प्रेरणा०) मूड़ + आव + अत = मुड़ावत सा. २५.१६.१

धातु + अत + आ, आं (१४ + २१)

कर + अत + आ = करता सा. ३.६.१

कर + अत + आं = करतां सा. ६.२.२

जा + अत + आ = जाता प. १२८.७

खेल + अत + आं = खेलतां सा. १.३२.२

फेर + अत + आं = फेरतां सा. २५.६.२

धातु + अत + ई (स्त्रीलिंग) (५)

चल + अत + ई = चलती सा. १६.५.१

बह + अत + ई = बहती सा. २.५१.२

दे + अत + ई = देती सा. २१.२२.२

धातु + अत + ए, एं^२ (५)

कर + अत + ए = करते प. ८०.४

बूड़ + अत + ए = बूड़ते सा. ५.३.२

पुकार + अत + एं = पुकारते सा. ३३.६.१

धातु + अंत (२) (केवल व्यंजनांत धातु के साथ संयुक्त)

कर + अंत = करंत सा. १६.१५.१

हस + अंत = हसंत सा. २३.२.१

^१ कोष्ठक की संख्या आवृत्तियों की सूचक है।

^२ 'पुकारते' में -एं पर संभवतः छापे की भूल से बिन्दी लग गई है। इसका इस प्रकार का केवल एक उदाहरण प्राप्त है।

धातु + अंत + आ (१४)

कर + अंत + आ = करंता प. ६२.४

भर + अंत + आ = भरंता सा. १६.३६.१

सुमिर + अंत + आ = सुमिरंता सा. ३.५.१

धातु + अंत + ई (स्त्री०) (३)

चढ़ + अंत + ई = चढ़ंती सा. ३१.१०.१

बल + अंत + ई = बलंती सा. ६.३०.२

दीप + अंत + ई = दीपंती प. ६२.३

धातु + अंत + ए (२)

संच + अंत + ए = संचंते प. ८५.७

चर + अंत + ए = चरंते सा. १५.६७.२

२.४.३.१.१ : तात्कालिक कृदंत :

-अत वाले रूपों के बाद अवधारणबोधक प्रत्यय संयुक्त होने से तात्कालिक कृदंत रूप प्राप्त होता है^१।

+ ही (१०)

देखत ही सा. १६.२१.१, ३३.४.२

जीवत ही प. ७१.७, ११८.६, १२३.१२

ढूँढ़त ही चौं. १६.१

लागत ही सा. १.६.२

छूवत ही सा. ४.१६.२

बोलत ही सा. १५.१७.१

+ ऐं (२)

जीवतैं सा. १५.८०.१ (कबीर अपनैं जीवतैं)

जनतैं प. १८२.२ (तौ जनतैं तीनि डांड़ि किन होई)

२.४.३.१.२ : वर्तमान किया-द्योतक कृदंत रूप :

कृदंत + ०

खात प. १६५.४

हसंत प. १६७.६

जागत प. १६८.७

रटत प. १५.२

खेलत प. १४६.१

कृदंत + आ

पड़ता सा. २५.२०.२

जीवता सा. २०.६.२

^१ परत सा. १४.२६.१ में अवधारणबोधक प्रत्यय संयुक्त नहीं है, फिर भी तात्कालिक अर्थ प्रकट होता है—

गगन दमांसां बाजिया परत निसानैं घाउ ।

कृदंत + ई भलकती सा. १६.२२.२
डरपती सा. १६.२६.२

कृदंत + ए (वि०रू०) करते सा. १६.२३.२

निम्नलिखित वर्तमान क्रिया-द्योतक रूप भूतकालिक अर्थ देते हैं :—

जानता सा. १६.३३.१ (पांनों की कल जानता गया सो सींचनहार)

बूढ़ता सा. १२.७.१ (जिहि सरि घड़ा न बूढ़ता अब मैंगल मलि मलि
न्हाइ)

बाजती सा. १५.४२.१ (जिनके नौबति बाजती)

बंधते सा. १५.४२.१ (मैंगल बंधते बारि)

२.४.३.२ : भूतकालिक कृदंत :

धातु + आ (८३)

पाक + आ = पाका सा. १२.१.२ (पाका कलस कुंभार का)

बांध + आ = बांधा सा. १२.६.२ (बारि जु बांधा प्रेम कै)

मोह + आ = मोहा र. ११.५ (मोहा बपुरा क्या करै)

बैठ + आ = बैठा प. ११४.५ (सिंघ जु बैठा पांन कातरै)

धातु + इया (१०)

पढ़ + इया = पढ़िया प. ११६.१ (पढ़िया पंडिता)

बंध + इया = बंधिया सा. १५.२५.१ (जिहि जेवरी जग बंधिया)

भर + इया = भरिया प. ६८.४ (उदक ज्यों भरिया)

समा + इया = समाइया सा. ७.३.१ (संपुट मांहि समाइया सो सगहिव नहि
होइ)

धातु + ई (६२)

चढ़ + ई = चढ़ी प. १६१.१ (माया रघुनाथ की खेलन चढ़ी अहेरै)

बैठ + ई = बैठी सा. २१.१०.२ (वह बैठी हरिजस सुनै)

भर + ई = भरी सा. ६.११.२ (बिख सौं भरी)

लाग + ई = लागी सा. २.७.२ (जाकै लागी सो लखै)

धातु + ए (६१)

ले०लि + ए = लिए प. ४.५ (लिए मुदगर)

बूझ + ए = बूझे प. ३.६ (सबद भेद बूझे विनां)

बांध + ए = बांधे प. १७६.१० (बांधे जमपुर जासी)

सूख + ए = सूखे प. ८३.५ (सूखे सरवरि पालि बंधाबै)

धातु+एं (८)

पकर+एं=पकरें सा. २५.७.१ (कर पकरें अंगुरी गिनै)
 बिछुर+एं=बिछुरें प. १०.२ (बहुतक दिन बिछुरें भए)
 बैठ+एं=बैठें प. ७.३ (भाग बड़े घर बैठें पाए)
 ले०लि+एं=लिए सा. २१.२०.२ (साथि लिए जजमान)

धातु+औ (७)

जीत+औ=जीतौ प. ७१.७ (जीतौ बूड़ै हारौ तिरै)
 हार+औ=हारौ प. ७१.७ (जीतौ बूड़ै हारौ तिरै)
 बो+य+औ=बोयौ सा. २२.७.२ (ऊसर बोयौ न नीपजै)
 कह+य+औ=कह्यौ प. २६.६ (कह्यौ मानि)

संस्कृत -क्त प्रत्ययांत (पठितः) की तरह प्रयोग भी क० ग्रं० में प्राप्त हैं—

कलित सा. २१.३२.२
 बंछित प. ४७.४
 मंडित प. १३०.७
 रचित चौ. ११.१
 खट्ट सा. १.७.२
 गत प. ११८.२, र. १८.४
 दीठ सा. ७.६.२, १६.३६.२
 बद्ध सा. २०.५.१, र. ६.२

२.४.४ : काल-रचना :

काल, अर्थ, पुरुष, लिंग, वचन, वाच्य, प्रयोग संबंधी विकारों से युक्त मुख्य क्रियापदों के मूल अथवा साधारण काल में क० ग्रं० में वर्तमान निश्चयार्थ, वर्तमान संभावनार्थ, वर्तमान आज्ञार्थ, भूत निश्चयार्थ, भूत संभावनार्थ और भविष्य निश्चयार्थ कालों के रूप प्राप्त होते हैं ।

उपर्युक्त के अतिरिक्त सहायक क्रिया की सहायता से भी अन्य कालों की रचना हुई है । इन्हें संयुक्त काल कह सकते हैं ।

२.४.४.१ : मूलकाल :

मूलकाल के अन्तर्गत सभी कालों के तीन प्रकार के प्रत्यय प्राप्त होते हैं—

- क- सामान्य प्रत्यय, जो किसी काल विशेष के प्रत्यय होते हैं ।
- ख- किसी काल विशेष के वे प्रत्यय जो दूसरे काल का भी अर्थ प्रकट करते हैं ।

ग- एक ही काल के वे प्रत्यय जो समान रूप से कई पुरुषों में प्रयुक्त होते हैं ।

इन सभी का उल्लेख यथास्थान किया जाएगा ।

२.४.४.१.१ : वर्तमान निश्चयार्थ :

२.४.४.१.१.१ : उत्तम पुरुष :

ए०व०

ब०व०

-अउं (-उं), -ऊं, -औं

-अहि

धातु + अउं (-उं) (२६)

-अउं का संयोग व्यंजनांत और स्वरांत दोनों प्रकार की धातुओं और प्रेरणा-र्थक धातु-रूप के साथ हुआ है—

कह + अउं = कहउं प. ४३.४

कर + आ + अउं = कराउं सा. ८.१२.२

जा + अउं = जाउं प. १६०.७, १६६.२, सा. ६.१.२

समा + आव + अउं = समावउं प. १०७.८

दे + अउं = देउं प. ५१.५

धातु + ऊं (१५)

रह + ऊं = रहूं प. १६.१, ५३.५

जी + ऊं = जीऊं प. १६.८

छू + व + आ + ऊं = छुवाऊं प. १६०.८

ला + ऊं = लाऊं प. १६०.७

रो + ऊं = रोऊं सा. २१.१४.१

धातु + औं (४५)

व्यंजनांत और स्वरांत दोनों प्रकार की धातुओं के साथ संयुक्त—

कात + औं = कातौं प. ११०.१

तर + औं = तरौं प. १०६.८

देख + औं = देखौं प. ४५.४

पा + व + औं = पावौं प. ८.३

बहुवचन—उत्तम पुरुष बहुवचन का केवल -अहि प्रत्यय और एक ही बार प्रयुक्त मिलता है । यह अन्य पुरुष बहुवचन के लिए अधिकांशतः प्रयुक्त हुआ है ।

-अहि जाहि सा. ५.८.१ (जग देखत हम जाहि)

२.४.४.१.१.२ : मध्यम पुरुष :

ए०व०

-असि, -अइ (-आइ), -अहि,
-अहु, -ए, -ऐ, -औ

ब०व०

अभाव है ।

धातु + असि (१५)

कथ + असि = कथसि प. १८०.२

(नाम धातु) गरब + असि = गरबसि प. ७३.१

चीन्ह + असि = चीन्हसि र. १२.३

रम + असि = रमसि प. १६७.१

(गर्वसी प. ६७.३ में छंद की सुविधा के कारण दीर्घरूप हो गया है)

धातु + अइ (-आइ) (५)

यह प्रत्यय अन्य पुरुष ए०व० के लिए अधिकांशतः संयुक्त मिलता है—

(प्रेरणा०) जर + आ + अइ = जराइ सा. १४.३०.१

(ना० धा०) खुर + आ + अइ = खुराइ सा. १५.१०.२

जा + अइ = जाइ सा. २१.७.१

धातु + अहि (१०)

यह प्रत्यय भी अन्यपुरुष ए०व० के लिए संयुक्त मिलता है—

चढ़ + अहि = चढ़हि सा. २६.३.१

सोच + अहि = सोचहि प. ७२.२

ढूढ़ + अहि = ढूढ़हि चौ. १६.१

जा + अहि = जाहि र. २०.२

धातु + अहु (२२)

जप + अहु = जपहु प. ६६.७

राख + अहु = राखहु प. ६६.८

बता + आव + अहु = बतावहु प. १२८.१

(प्रेरणा०) बूझ + आव + अहु = बुझावहु प. १६१.७

धातु + ए (१)

-ए का संयोग अन्यपुरुष के लिए तथा भूतकालिक रूप के लिए मिलता है,
किन्तु एक प्रयोग में वर्तमान निश्चयार्थ म० पु० ए०व० के लिए भी संयुक्त मिलता है—

-ए मारे प. १६.२ (करवट दै मोहि काहे कौ मारे)

धातु + ऐ (२३)

-ऐ क० ग्रं० में अन्यपुरुष ए०व० का सर्वाधिक प्रयुक्त प्रत्यय है, किन्तु २३ बार म० पु० ए०व० के लिए प्रयुक्त हुआ है—

बोल + ऐ = बोलै सा. २१.३०.१

(ता०धा०, प्रेरणा०) गरव + आव + ऐ = गरबावै प. ६२.१

फिर + ऐ = फिरै प. १६१.४

मिल + ऐ = मिलै सा. २.२५.२

धातु + औ (३)

फिर + औ = फिरौ सा. १६.७.२

भूल + औ = भूलौ प. ३.७

सींच + औ = सींचौ प. ३८.५

२.४.४.१.१.३ : अन्य पुरुष :

ए० व०

-Ø, -अइ(-आइ), -अई(-आई), -अति,
-अहि, -अही, -इए, -इअै (इऐ), -इयत,
-इयतु, -ए, -ऐ

व० व०

-अंत, -अहि, -अहीं, -आत,
ऐं

धातु + Ø (१२)

उपज + Ø = उपज सा. २२.१५.२

कर + Ø = कर सा. ६.३५.२

जांन + Ø = जांन प. १६५.२

देख + Ø = देख प. १५७.५

केवल एक स्थान पर Ø म० पु० ए०व० के लिए प्रयुक्त हुआ है—

दे + Ø = दे सा. २६.३.२ (जहि कारनि तूं बांग दे)

धातु + अइ^१ (-आइ) (६८)

^१ क० ग्रं० में दो प्रयोग ऐसे हैं जिनमें तुक साम्य के कारण रूप ही परिवर्तित हो गया है। 'जीम' सा. २०.१०.२ और 'जाव' सा. २.४६.२ क्रमशः 'जैइ' और 'जाइ' के रूप हैं। ऊपर की पंक्ति में 'रहीम' था तो नीचे की पंक्ति में तुक के कारण 'बैठि कबीरा जीम' बन गया। अन्तिम -इ का लोप हो गया और 'ज' के 'ए' और, उसके अनुनासिकत्व का 'म' बन गया। इसी प्रकार 'जाइ' के स्थान पर ऊपर के 'साव' के कारण 'जाव' बन गया। इस प्रकार के प्रयोग असंभव नहीं कहे जा सकते। 'जाव' के तो पाठान्तर भी मिलते हैं; किन्तु 'जीम' के पाठान्तर भी नहीं प्राप्त होते—दे० क०ग्रं० पृ० १४७, २१०.

कुम्हला + अइ = कुम्हलाइ सा. १३.२.१, १६.१६.१

उहर + आ + अइ = उहराइ सा. १०.८.१

१ + अइ = देइ प. १४८.६ (५ बार प्रयुक्त)

१ + अइ = लेइ सा. ३२.६.१

१ + अइ = रोइ सा. ३२.४.१

निम्न
अर्थ प्रकट होता है

धातु + अई (-आई) (५२)

१ + अई = चढ़ई सा. २४.१६.१

१ + अई = जानई सा. २.४२.१

१ + व + अई = आवई सा. २३.२.२

१ + अई = रोई प. १०४.१

इससे
(प्रेरणा)

धातु + अति (२)

१ + अति प. १०८.५ (पग बिनु निरति करां बिनु बाजा जिभ्या हीनां गावै)

१ + अति सा. ६.५.२ (जहां पाप पुनि नहि छोति)

(ना० धा०)

धातु + अहि (६)

१ + अहि = बसहि प. १८८.१

१ + अहि = भरहि र. १६६.५

१ + अहि = जाहि सा. ३०.१६.२

-इया

धातु + अही (४)

१ + अही = मानही सा. २६.१५.२

१ + अही = भाजही सा. १२.३.२

-ईले

१ + अही = चपेटही सा. ४.१३.२

१ + अही = खेलही प. ३४.८

धातु + इए (२२)

केवल ए
-ला

विाच्य के रूप प्राप्त हुए हैं। इस प्रत्यय का प्रयोग आदरार्थ (जए) भी हुआ है, किन्तु निम्नलिखित उदाहरणों में वर्तमान ना है। कोष्ठक में अर्थ भी दिए गए हैं। यह प्रत्यय स्वरांत, क धातुओं के साथ संयुक्त मिलता है।

१ + इए = कहिए प. १७८.५ (कहा जाता है)

१ + इए = छूटिए सा. १५.६१.२ (छूटा जाता है)

१ + इए = पूजिए सा. ४.६.१ (पूजा जाता है)

बहुवचन—

सर्वत्र व्यंज

(प्रेरणा०) बज + आ + इए = बजाइए सा. १.५.२ (बजाया जाता है)

रो + इए = रोइए = रोइए सा. १६.३.१ (रोया जाता है)

इस प्रकार के प्रयोग निर्वैयक्तिक (इम्परसनल) कहे जा सकते हैं।

धातु + इअँ (-इऐ) (२८)

-इअँ का प्रयोग भी -इए के समान ही हुआ है—

कर० की + ज + इअँ = कीजिअँ प. १७३.३ (किया जाता है)

पा + इअँ = पाइअँ प. १७३.१ (पाया जाता है)

रो + इअँ = रोइअँ प. ५५५ (रोया जाता है)

छंद की सुविधा के लिए कीजिअँ का कीजँ (प. ११८.१), छोइजिअँ का छोइजँ (प. ६८.२), पतीजिअँ का पतीजँ (प. ७२.१२) रूप कर लिया गया है। इस प्रकार के प्रयोगों की संख्या ८ है।

धातु + इयत, इयतु (१ + १)

इन प्रत्ययों के संयोग से भी कर्मवाच्य का रूप निष्पन्न हुआ है—

-इयत सुनियत प. ४३.३

-इयतु कहियतु प. ४७.४

धातु + ए (७)

यह प्रत्यय भूतकालिक -ए से भिन्न अर्थ देता है। वर्तमान निश्चयार्थ में प्राप्त अर्थ को कोष्ठक में दिया गया है—

बेध + ए = बेधे सा. ४.१.१ (बेधता है)

चेत + ए = चेते चौं. ४०.१ (चेतता है)

लूट + ए = लूटे प. १०२.२ (लूटता है)

चल + ए = चले प. ६६.७ (चलता है)

धातु + ऐ (६८७)

-ऐ क०ग्रं० में सबसे अधिक (किसी भी काल के किसी भी प्रत्यय की अपेक्षा)

प्रयुक्त प्रत्यय है—

एक प्रयोग में 'राखिअँ' के स्थान पर 'राखिहै' पाठ मिलता है (र. १७.७)

यह भविष्यकालिक (-इहै) रूप नहीं है, अपितु वर्तमानकालिक '-इअँ' वाला रूप है जो संभव है छापी की भूल अथवा भविष्यकालिक '-इहै' के सादृश्य के कारण इस रूप में रक्खा गया हो—

जिहि हित जीव राखिहै माई

बैठ+ऐ=बैठै प. १२२.४

देख+ऐ=देखै प. १२२.५

गा+व+ऐ=गावै प. ३५.१०

रो+व+ऐ=रोवै प. ५५.६

निम्नलिखित भूतकालिक तथा पूर्वकालिक क्रिया के प्रत्ययों से वर्तमानकालिक अर्थ प्रकट होता है। अर्थ कोष्ठक में दिया गया है।

धातु+आ (७) (भू०का०)

इससे कर्मवाच्य के रूप प्राप्त हुए हैं—

(प्रेरणा०) कह+आव+आ=कहावा र. १.५ (कहा जाता है)

समुझ+आव+आ=समुझावा चौ. ६.२ (समझाया जाता है)

धा+व+आ=धावा चौ. ६.२ (दौड़ा जाता है)

धातु+इ (१०) (पू०का०)

सर्वत्र व्यंजनांत धातु के साथ संयुक्त हुआ है—

जाग+इ=जागि सा. १४.२८.१ (जागता है)

(ना० धा०) विचार+इ=विचारि सा. ६.३८.२ (विचारता है)

काट+इ=काटि प. २५.११ (काटता है)

देख+इ=देखि प. १४४.८ (देखता है)

धातु+इया (२) (भू०का०)

-इया जागिया सा. ४.३६.१ (जागता है)

बोलिया सा. २८.४.२ (बोलता है)

धातु+ईले (२) (भू०का०)

-ईले जाईले प. १५६.४ (जाता है)

रहाईले प. १५६.३ (रहता है)

धातु+ला (भू०का०)

केवल एक प्रयोग—

-ला बोला सा. २५.२.२ (बोला है)

बहुवचन—

धातु+अंत (१०)

सर्वत्र व्यंजनांत धातु के साथ संयुक्त—

उबर + अंत = उबरंत सा. १.२६.२

पड़ + अंत = पड़ंत सा. १.२६.१

पर + अंत = परंत सा. १.६.२

तज + अंत = तजंत सा. ४.२.७

धातु + अहि (४७)

भज + अहि = भजहि प. ८८.७

भर + अहि = भरहि प. १५५.६

गा + व + अहि = गावहि प. १६७.३

सो + व + अहि + सोवहि प. १६५.५

धातु + अहीं (१२)

डोल + अहीं = डोलहीं र. १६.७

जा + अहीं = जाहीं चौ. १६.१

पा + व + अहीं = पावहीं सा. ६.२१.२

दे + अहीं = देहीं प. १६७.४

धातु + आत (२)

-आत मिलात प. ७३.८ ते सतसंगि मिलात

जपात प. ७३.७ हरि के संत सदा थिर पूजौ जो हरि नाम जपात

धातु + ऐं (७१)

बोल + ऐं = बोलैं प. १३६.४

पढ़ + ऐं = पढ़ैं प. १४६.६

कह + आव + ऐं = कहावैं प. १.५

पी० पि + व + ऐं = पिवैं प. ३८.५

२.४.४.१.२ : वर्तमान संभावनार्थ :

रूप-रचना की दृष्टि से वर्तमान निश्चयार्थ और संभावनार्थ में अन्तर नहीं पाया जाता। केवल अर्थ और प्रयोग की भिन्नता मिलती है। इस दृष्टि से वर्तमान संभावनार्थ के लिए क० ग्रं० में प्राप्त प्रत्ययों की प्रयोगावृत्तियों को नीचे उद्धृत किया गया है। उल्लेखनीय है कि उ० पु० के रूप प्राप्त नहीं होते।

२.४.४.१.२.१ : मध्यम पुरुष :

ए०, व० प्रत्यय आवृत्ति संदर्भ

-अहि १ प. १६६.७

-ऐ	६	सा. १.५.२ इत्या०
-औ	२	चौं. ४.१, चौं. ४.१
२.४.४.१.२.२ : अन्य पुरुष :		
-अइ	६	सा. ३१.८.२ इत्या०
-अई	१	प. १२७.२
-अहि	३	प. ६१.३ = १.४, २००.२
-इए	११	र. ४.७ इत्या०
-इअ	१६	प. १०५.६ इत्या०
-ए	१५५	चौं. ३६.२ इत्या०
ब० व० -अहि	५	प. ६१.४ इत्या०
शून्य प्रत्ययांत दे	२	प. १४०.३, सा. ५.३.१

२.४.४.१.३ : वर्तमान आज्ञार्थ :

क० व० में आज्ञार्थ क्रियापद दो रूपों में प्राप्त होते हैं—साधारण और आदरार्थ। रूप-रचना की दृष्टि से वर्तमान आज्ञार्थ के अनेक प्रत्यय वे ही हैं जिनका उल्लेख वर्तमान निश्चयार्थ में किया गया है; किन्तु अर्थ की दृष्टि से उनका पुनः उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है। लिंग-संबंधी विकार आज्ञार्थ में नहीं होता। वर्तमान आज्ञार्थ अधिकतर मध्यम पुरुष एक वचन में ही प्रयुक्त मिलता है, अन्य पुरुषों में कम प्रयोग मिलते हैं, अतएव पहले मध्यम पुरुष के रूपों पर विचार किया गया है।

२.४.४.१.३.१ : मध्यम पुरुष एक वचन :

धातु + ∅ (११)

जान + ∅ = जान सा. २९.२०.२

भूल + ∅ = भूल सा. १५.४६.२

सुन + ∅ = सुन प. १०४.२

ले + ∅ = ले सा. १४.१६.२

धातु + असि (२)

-असि जरसि र. २०.२ अब जिनि जरसि

बखसि प. ४१.८ अब की बेर बखसि

जासी र. २०.१ में तुक के कारण दीर्घरूप मिलता है अन्यथा जासि हो सकता था।

धातु + अइ (-आइ) (३०)

कह + अइ = कहइ प. १४०.१

- (प्रेरणा०) मूड़ + आ + अइ = मुड़ाइ सा. २५.१.२
गा + अइ = गाइ सा. ७.१०.२
रो + अइ प. ८२.६

धातु + अई (-आई) (५)

- धर + अई = धरई चौं. ८.१
(प्रेरणा०) चढ़ + आ + अई = चढ़ाई प. १४२.७
जा + अई = जाई चौं. ८.२
(प्रेरणा०) बज + आ + अई = बजाई प. १४२.८
खो + अई = खोई प. १४२.१०

धातु + अउ (११)

- भूल + अउ = भूलउ प. १६०.५
आ + अउ = आउ प. १३.१
खा + अउ = खाउ सा. २.२.२

धातु + अहु (४६)

- रह + अहु = रहहु प. ७१.८
बता + आव + अहु = बतावहु प. ५४.३
ला + व + अहु = लावहु प. १३२.१

दो प्रयोगों में -अहु (करहु र. १२.८) और -अही (लेही प. २०.६) भी प्राप्त हैं।

धातु + इ (१२६)

- बोल + इ = बोलि सा. १५.७७.१
खोल + इ = खोलि सा. १५.७७.२
सम्हाल + इ = सम्हालि सा. १५.७८.१
सुमिर + इ = सुमिरि प. २०.१

धातु + उ (३६)

- सुन + उ = सुनु प. १६.३
भज + उ = भजु प. १७८.६
कर + उ = करु सा. १५.३४.१

संभारु र. १७.१ में तुक्के कारण -ऊ संयुक्त मिलता है।

धातु + ऐ (३५)

- खो + व + ऐ = खोवै सा. २१.२२.१

रो + व + ऐ = रोवै सा. ३.१.१

ला + व + ऐ = लावै प. १२४.७

जप + ऐ = जपै सा. ३.२.१

धातु + औ (६५)

कर + औ = करौ सा. २८.५.२

कथ + औ = कथौ प. १६४.६

वस + औ = वसौ प. ७.५

आदरार्थ

धातु + इए (५१)

कह + इए = कहिए सा. २५.२३.१

चीन्ह + इए = चीन्हिए प. १०.४

पहिचान + इए = पहिचानिए सा. १५.१७.१

भज + इए = भजिए चौ. १०.२

लोड़ + इए = लोड़िए सा. ६.१०.२

धातु + इअै (३४)

कर००की + ज + इअै = कीजिअै सा. १५.२४.१

रह + इअै = रहिअै प. ६१.४

हरख + इअै = हरखिअै प. ८२.६

छंद की सुविधानुसार कीजै सा. १४.४०.१, करीजै प. १८८.६, दीजै सा. २३.५.१ तथा लीजै प. १७२.६ संक्षिप्त रूप बन गए हैं।

उपर्युक्त प्रत्ययों के अतिरिक्त वर्तमान आज्ञार्थ में निम्नलिखित रूप और प्राप्त होते हैं—

-आ पछांनां चौ. ८.१ गंगा गुरु के वचन पछांनां

-व + ∅ आव सा. २.४७.१, ११.१२.१ आव तूं

जाव सा. १४.२१.२ जौ सिर जाइ त जाव

२.४.४ १.३.२ : उत्तम पुरुष एक वचन :

धातु + अउं (१४)

कर + अउं = करउं प. ३६.१

तार + अउं = तारउं प. ८१.४

पठां + अउं = पठांउं सा. २.२१.२

भंप + ए + अउं = भंपेउं सा. ११.१२.१

जा + अउं = जाउं सा. १०.६.१

धातु + ऊं (२७)

मार + ऊं = माहं सा. २६.११.१

तिर + ऊं = तिरुं सा. २६.१८.२

उपार + ऊं = उपाहं सा. ३१.८.२

(प्रेरणा०) चढ़ + आ + ऊं = चढ़ाऊं प. ४.४

ला + ऊं = लाऊं प. ४.३

धातु + औ (५५)

कर + औ = करौं सा. २.२१.२

भर + औ = भरौं प. ४.४

देख + औ = देखौं सा. २.२२.२

सींच + औ = सींचौं सा. २.२२.२

२.४.४.१.३.३ : अन्य पुरुष एक वचन :

धातु + ऐ (४५)

तज + ऐ = तजै सा. २०.६.२

उतार + ऐ = उतारै सा. १४.३१.२

पूछ + ऐ = पूछै सा. १६.५.२

पा + व + ऐ = पावै सा. १६.११.२

अन्य पु० ए० व० में निम्नलिखित प्रयोग और पिलते हैं—

जाइ प. ७०.१ रैन गई मति दिनु भी जाइ

जाउ प. ८८.६ भगति जाउ पर भाव न जइयौ

जइयौ प. ८८.६ भगति जाउ पर भाव न जइयौ

(शून्य प्रत्ययांत) ले सा. १४.१६.२ जिहि भावै सो आइ ले

(आदरार्थ व० व०) करै सा. २.२०.२ मति वै रांम दया करै

२.४.४.१.४ : भूत निश्चयार्थ :

भूत निश्चयार्थ में अनेक भूतकालिक कृदंत के प्रत्यय क्रिया के रूप का द्योतन करने के लिए प्रयुक्त हुए हैं। भूत निश्चयार्थ में (कृदंतीय काल होने के कारण) कारक के लिंग परिवर्तन के साथ क्रिया का लिंग भी परिवर्तित मिलता है। -ई प्रत्यय स्त्रीलिंग का द्योतन करता है।

इस काल में -आ, -इया, -ई, -ईन, -ईन्ह और बहुवचन का -ए प्रत्यय अधिकांशतः अन्य पुरुष के लिए प्रयुक्त हैं; किन्तु उत्तम और मध्यम पुरुषों के लिए

भी इनका प्रयोग किया गया है। अन्य पुरुष के प्रत्ययों का उल्लेख करते समय ही उत्तम और मध्यम पुरुषों की प्रयोगावृत्तियों का उल्लेख कर दिया गया है। अलग से उन पुरुषों में उपर्युक्त प्रत्ययों का उल्लेख नहीं किया गया है। उत्तम और मध्यम पुरुष में उन्हीं प्रत्ययों का उल्लेख किया गया है जो केवल उन्हीं पुरुषों के लिए प्रयुक्त हुए हैं।

२.४.४.१.४.१ : उत्तम पुरुष :

ए०व०

-एउं, -औं

ब०व० (आदरार्थ)

-अल + ई

धातु + एउं (३)

कर ०० कि + एउं = किएउं प. ११.३

बरज + एउं = बरजेउं प. ७५.३

मेल + एउं = मेलेउं प. ५१.३

धातु + औं (६)

कह + य + औं = कहाँ प. ६३.१२

बिगर + य + औं = बिगरचौं प. १६०.२, १६०.५

बिसार + य + औं = बिसारचौं प. १३५.१

धातु + अल + ई (१)

ब०व० रहलीं प. १६.३ जब हंम रहलीं

२.४.४.१.४.२ : मध्यम पुरुष :

ब०व० रूप का अभाव है

धातु + एहु (२)

-एहु किएहु प. ८६.४

चराएहु प. १८८.८

२.४.४.१.४.३ : अन्य पुरुष :

ए०व०

-०, -अल, -आ, -आन, -इ, -इया, -इऔ,

-इले, -ई, -ईन, -ईन्ह, -उ, -एउ, -ऐला,

-ओ, -औ

ब०व०

-इयां, -ए

धातु + ० (६)

छूट + ० = छूट प. १८०.५

जाग + ∅ = जाग प. १६८.१

बाज + ∅ = बाज प. १३७.४

एक प्रयोग में यही रूप ब०व० के लिए प्रयुक्त मिलता है—

लाग प. १४६.७ कोटि इंद्र जहं गगन लाग

धातु + अल(२)

-अल कातल प. १३६.४

बांधल प. १०३.४

धातु + आ^१ (४६१ + ३५ + १२)

अ०पु० कह + आ = कहा प. १७३.६ (कई बार)

मिल + आ = मिला प. १८.६ (कई बार)

उ०पु० देख + आ = देखा प. ११६.१

आद० ब०व० जान + आ = जाना प. १५६.४

पहिर + आ = पहिरा प. १४३.६

म०पु० मार + आ = मारा सा. २.५५.१

जान + आ = जाना प. ८६.२

ब०व० पा + य + आ = पाया प. ६३.६ तिनहीं पाया निरंजनदेव

आ + य + आ = आया प. १६५.८ ते बाधिनि मुख आया

-आ का संयोग कुछ धातुओं में निम्न प्रकार से हुआ है—

मर०मु + आ = मुआ सा. १५.२८.१ (४ बार)

मर०मु + व + आ = मुवा सा. ३३.३.१ (११ बार)

मर०मू + व + आ = मूवा प. १०७.७ (६ बार)

चू + आ = चुआ प. ५६.५

(प्रेरणा०) चल + आ + य + आ = चलाया प. २५.७

बस + आ + य + आ = बसाया प. १७०.५

कर०कि + य + आ = किया सा. २५.३.२ (३५ बार)

कर०की + य + आ = कीया प. ४६.५ (४ बार)

कर०की + आ = कीआ^२ प. १८५.४

^१ -आ, कोष्ठक में उल्लिखित प्रयोगावृत्तियों के अनुसार क्रमशः अ०पु०, उ०पु० और म०पु० के लिए प्रयुक्त मिलता है। ब०व० के कर्त्ता के साथ भी यह संयुक्त मिलता है, जिसका उल्लेख यथा-स्थान किया गया है।

^२ -य और -आ को मुक्त-संपरिवर्ती (य ~ आ) मान सकते हैं।

दे०दि + य + आ = दिया सा. ३२.८.२ (६ बार)

दे०दी + य + आ = दीया प. ६५.७, १४४.६, सा. १.१४.२

पी०पि + य + आ = पिया सा. १२.१.१

पी + य + आ = पीया प. १३४.६ (४ बार)

पी + आ = पीआ प. ५५.१

ले०लि + य + आ = लिया सा. १६.१५.२

ले०ली + य + आ = लीया प. ५६.६, सा. २.४६.१

ले०ली + आ = लीआ सा. १५.३८.१

निम्नलिखित पद में कृदन्ती प्रत्यय के बाद भूतकालिक प्रत्यय संयुक्त है—

दीठ + आ = दीठा सा. ६.१५.२

धातु + आन (६)

भूल + आन = भुलान र. ११.१, १३.१, १५.१

समा + आन = समान सा. १७.१.२, र. १३.८

बिन + आन = बिनान प. १७३.७

-आन के संयुक्त हो जाने पर अर्थात् उपधातु बन जाने के बाद पुनः अन्य प्रत्यय संयुक्त हुए हैं—

धातु + आन + आ, इ, ई, औ, (२६, १, २५, ३)

अरुझ + आन + आ = अरुझानां प. १८०.५

विक + आन + आ = बिकानां प. ७६.६

भूल + आन + इ = भुलानि र. ६.५

उड़ + आन + ई = उड़ानीं प. ५२.२

लपट + आन + ई = लपटानीं प. १७०.४

खूट + आन + औ = खुटानीं प. १२६.७

बउरा + आन + औ = बउरानीं प. १६०.३

समा + आन + औ = समानीं प. १२६.८

धातु + इ (१०)

गह + इ = गहि प. १७५.८

घर + इ = घरि प. १८४.६

लाग + इ = लागि प. १३६.४

धातु + इया ~ इआ^१ (६६ + ७)

^१ इया, कोष्ठक में उल्लिखित आवृत्तियों में क्रमशः अन्य पुरुष और उत्तम पुरुष के लिए संयुक्त हुआ है।

- अ०पु० फर + इया = फरिया प. ११.२.६
 मथ + इया = मथिया प. १५५.१६
 पढ़ + इया = पढ़िया प. ११६.१
 उ०पु० देख + इया = देखिया सा. १६.१२.२
 ब्रू + इया = ब्रूभिया सा. ४.१२.२
 ब०व० मोह + इया = मोहिया प. १७३.८ जिनि लोइन — मोहिया

धातु + इयौ ~ इऔ (७)

- रच + इऔ = रचिऔ प. १३०.३
 बढ़ + इऔ = बढ़िऔ सा. ४.२.२
 मिल + इऔ = मिलिऔ प. २००.४
 सह + इयौ = सहियौ प. ६७.५

धातु + इले (२)

- इले गड़िले प. ८५.७, १००.२

धातु + ई^१ (१२० + ७ + ५) (स्त्री०)

- अ०पु० कर + ई = करी प. ८६.३
 पा + ई = पाई प. ८५.१०
 उ०पु० देख + ई = देखी सा. १५.३०.२
 जान + ई = जानी प. १६३.१
 म०पु० जर + ई = जरी सा. २.४१.२
 बखान + ई = बखानी प. १७८.१

धातु + ईन, ईन्ह

कर, दे, ले (की, दी, ली) धातुओं में -ईन और -ईन्ह संयुक्त हुए हैं और इनके संयोग के बाद (उपधातु बन जाने के बाद) अन्य प्रत्यय संयुक्त हुए हैं। इन प्रत्ययों का प्रयोग उत्तम पुरुष और अन्य पुरुष के लिए हुआ है। ऐसे प्रयोगों की संख्या कम है। पूरे प्रयोग नीचे दिए गए हैं—

- अ०पु० -ईन कीन प. १२६.५, सा. २६.३.२
 उ०पु० कीन सा. १४.१.१
 लीन प. १२६.५, सा. १४.१.२

१ -ई, कोष्ठक में दी गई आवृत्तियों के अनुसार क्रमशः अन्य, उत्तम और मध्यम पुरुषों के लिए संयुक्त हुआ है।

- अ०पु० -ईत + आ दीनां प. ८६.७
लीनां प. ८६.८, ११५.८, र. १८.५
- ईत + ई कीनीं प. १५६.५
दीनीं प. १६२.७
- ईत + उ कीनु प. १५६.५
दीनु प. १५६.६
- ईन्ह कीन्ह प. ८०.३, र. १०.२, ११.८
लीन्ह सा. २६.४.१
- उ०पु० कीन्ह सा. १४.१६.२
लीन्ह सा. १४.१६.१
- अ०पु० -ईन्ह + आ कीन्हां प. ५१.३ (१० बार)
दीन्हां प. ६.६ (८ बार)
लीन्हां प. २३.६, १६५.१२, सा. १८.६.१, र.
२०.३
- उ०पु० कीन्हां प. ६.६, १७५.७
- अ०पु० -ईन्ह + ई कीन्हीं प. १.७, ४४.२, ७४.६, ६४.५
दीन्हीं प. २.१, सा. १.११.१, १.२७.१
- उ०पु० -ईन्ह + औ कीन्हीं प. ५८.२, ८६.५

इनके अतिरिक्त पतीनां प. २३.६ में भी -ईत + आ संयुक्त हुआ है।

धातु + उ (२)

-उ बाजु प. १३८.४, लागु प. १११.४

धातु + एउ

-एउ नाचेउ प. ६७.७ नाचेउ घर घर बारि

धातु + ऐला (४)

कह + ऐला = कहैला प. १६६.६

छिवा + ऐला = छिवैला प. १६६.५

मिल + ऐला = मिलैला प. १६६.५

हो + ऐला = होवैला प. १६६.६

धातु + ओ

-ओ मुओ प. ६४.२ कस न मुओ अपराधी

धातु + औ^१ (८७ + ८)

- अ०पु० चल + औ = चलौ प. १२६.६
 थाक + औ = थाकौ प. १५४.३
 खा + य + औ = खायौ प. १३७.५
 (प्रेरणा०) जम + आ + य + औ = जमायौ प. १३१.७
 म०पु० पा + य + औ = पायौ प. ३६.३
 खो + य + औ = खोयौ प. ६०.१

अ०पु० व०व० धातु + इयां^२ (२)

- इयां जानियां सा. ३.१६.१
 कुरलियां सा. २.३.१

धातु + ए^३ (१५८ + ५ + ४)

- अ०पु० मिल + ए = मिले प. १६२.६
 मार + ए = मारे प. १६१.४
 म०पु० लजा + आन + ए = लजाने प. १६७.६
 चल + ए = चले प. १३६.३
 उ०पु० उवर + ए = उवरे प. १६६.८
 पा + ए = पाए प. ७.३

२.४.४.१.५ : भूत संभावनार्थ :

क०ग्र० में भूत संभावनार्थ के रूप अत्यन्त सीमित हैं। केवल उत्तम पुरुष और अन्य पुरुष के ही रूप मिलते हैं। सहायक क्रिया (जिसका उल्लेख यथास्थान किया जाएगा) के अतिरिक्त मुख्यक्रिया में कुल ५ प्रयोग मिलते हैं। रूप-रचना की दृष्टि से वे वर्तमानकालिक कृदंतों के ही रूप हैं जो वाक्य-स्तर पर भूत संभावनार्थ प्रतीत होते हैं।

^१ औ, कोष्ठक में दी गई आवृत्तियों के अनुसार क्रमशः अ०पु० और म०पु० के लिए संयुक्त हुआ है।

^२ 'जोन्हियां' सा. २८.३.२, 'जानियां' प. ८२.८, सा. ३३.५.२, 'पलानियां' सा. १५.३८.१ और 'मैइयां' सा. १६.३६.२ में अंतिम स्वर पर अनुस्वार का चिह्न भूल से लगा हुआ प्रतीत होता है क्योंकि ये सभी ए०व० के रूप हैं। 'रातड़ियांह' सा. २.२३.२, 'दूखड़ियांह' सा. २.२३.१ में बहुवचन रूप प्राप्त हैं; किन्तु -इयां के बाद का -ह, निरर्थक रूप से संयुक्त है।

^३ -ए, कोष्ठक में दी गई आवृत्तियों के अनुसार क्रमशः अ०पु०, म०पु० और उ०पु० के लिए संयुक्त हुआ है।

२.४.४.१.५.१ : उत्तम पुरुष :

ए०व०

ब०व०

कहता सा. ६.४.२ जासौं कहता और पूजते सा. २६.६.१ हंम भी पाहन पूजते

२.४.४.१.५.२ : अन्य पुरुष :

ए०व०

करता प. १७८.४ जौ.....करता

करती सा. ३१.७.२ नहि तर करती

पड़ता सा. १.२५.२ पड़ता पूरी जानि

२.४.१.६ : भविष्य निश्चयार्थ :

क० ग्रं० के भविष्य निश्चयार्थ के रूपों की रचना को हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं—(१) पहले वर्ग में स और ह वाले रूप आते हैं। स वाले रूप आधुनिक खड़ी बोली हिन्दी में नहीं मिलते। इन्हें पंजाबी के प्रभाव से प्राप्त रूप समझ सकते हैं अथवा कबीर के समय में यह रूप व्यवहृत होता रहा हो—ऐसा भी कह सकते हैं। ह वाले रूप तो ब्रजभाषा में प्राप्त होते ही हैं। (२) दूसरे वर्ग में ब और ग वाले रूप आते हैं जिनमें ब पूर्वी हिन्दी में और ग पश्चिमी हिन्दी में आज भी प्राप्त होते हैं।

भविष्य निश्चयार्थ में स्त्रीलिंग एक वचन के प्रयोग अत्यन्त सीमित हैं।

२.४.४.१.६.१ : उत्तम पुरुष :

ए०व०

ब०व०

-इहं, -इहाँ

-इहैं, -अहिं-गे, -ए-गे ~ ऐं-गे

-अउं-गा ~ औं-गा, -औं-गी, -ऊं-गा

धातु + इहं (२)

चढ़ + इहं = चढ़िहं प. १३५.६

खेल + इहं = खेलिहं सा. ७४.२

देहं प. ७.१ में देइहं भी संभव था।

धातु + इहाँ (७)

कर + इहाँ = करिहाँ प. ५.३, ५.५

मर + इहाँ = मरिहाँ प. १०६.८, सा. १४.२.२

बूढ़ + इहाँ = बूढ़िहाँ सा. २.११.२

ले + इहाँ = लेइहाँ प. ५.८

भेटह. १. १.२.२ में भेटिहाँ रूप अपेक्षित है।

धातु + अउं-गा ~ औं-गा, औं-गी (१ + १ + १)

- अउं-गा बदउंगा प. १७८.३
- औं-गा भजौंगा सा. १६.२४.१
- औं-गी जारौंगी सा. १६.३५.१ (स्त्री०)

धातु + ऊं-गा (५)

- आ + ऊं-गा = आऊंगा प. १६३.१
- जा + ऊं-गा = जाऊंगा प. १६३.१
- मर + ऊं-गा = मरूंगा प. १६३.१
- जी + ऊं-गा = जिऊंगा प. १६३.१
- पी + ऊं-गा = पिऊंगा प. १६३.२

बहुवचन

धातु + इहैं (३)

- इहैं मरिहैं प. १०६.४, १०६.४
- खैंहैं १६४.३ (खाइहैं भी संभव था)

धातु + अहि-गे (१०)

- कर + अहि-गे = करहिगे सा. ८.१.१
- आ + व + अहि-गे = आवहिगे प. ५७.१
- (प्रेरणा०) मिल + आव + अहि-गे = मिलावहिगे प. ५७.३
- लग + आव + अहि-गे = लगावहिगे प. ५७.४

धातु + एं-गे ~ ऐं-गे (१ + ३)

- बैठ + एं-गे = बैठेंगे सा. १०.५.२
- कर + ऐं-गे = करैंगे सा. १५.५६.१
- पड़ + ऐं-गे = पड़ेंगे सा. १६.३८.२
- मर + ऐं-गे = मरैंगे सा. १५.६६.१

२.४.४.१.६.२ : मध्यम पुरुष :

ए० व०

अहु, -इहौ, -ऐ-गा, -(अ)व + औ

ब० व०

-अहु-गे, -औ-गे, -(अ)व + आ,
-(अ)व + ए

धातु + अहु (२)

- अहु देखहु सा. १५.३.२ बहुरि न देखहु आइ
- छूटहु प. १६१.१ कहै कबीर रामै रमि छूटहु

धातु + इहौ (७)

कर + इहौ = करिहौ प. ३६.१

मिल + इहौ = मिलिहौ प. १५.१

दे + इहौ = देइहौ प. ५४.२

धातु + ऐ-गा (१)

-ऐ-गा सोवैगा सा. ३.१६.२

धातु + (अ)ब + औ (१)

-(अ)ब + औ कहिवौ प. ७८.१

बहुवचन

धातु + अहु-गे (६)

जा + अहु-गे = जाहुगे सा. १५.२२.२, प. ६२.१

बूढ़ + अहु-गे = बूड़हुगे प. १६१.२

दे + अहु-गे = देहुगे सा. २.४८.२

ले + अहु-गे = लेहुगे सा. २.३२.२

धातु + औ-गे (२)

-औ-गे पहुंचौगे सा. १०.१२.२

घरौगे सा. १.२४.२

धातु + (अ)ब + आ, ए (१ + १)

-(अ)ब + आ पहिरबा प. १८६.३

-(अ)ब + ए करिवे प. १६७.१

२.४.४.१.६.३ : अन्य पुरुष :

ए०व०

-इहै, -इहहि

-अहि-गा ~ अइगा, -एगा ~ ऐ-गा,

-ऐ-गी, -ऐ-गौ, -असी

ब०व०

-इहैं

-अहिं-गे

-(अ)ब + आ

धातु + इहै (२६)

काट + इहै = काटिहै सा. १५.६०.२

पर + इहै = परिहै सा. १५.३८.२

बकस + इहै = बकसिहै सा. ३०.१३.२

ले + इहै = लेइहै सा. २१.१२.२

धातु + इहहि (१)

-इहहि जैहहि सा. १५.२५.२ (जइहहि रूप भी संभव था)

धातु + अहि-गा ~ अइ-गा (१ + १०)

जा + अहि-गा = जाहिगा प. १८६.१

जा + अइ-गा = जाइगा प. ६२.५, ६२.६ (४ बार)

(प्रेरणा०) वस + आ + अइ-गा = वसाइगा प. ७४.५

पछिता + अइ-गा = पछिताइगा प. ७४.१

धातु + ए-गा ~ ऐ-गा (२ + १२)

गह + ए-गा = गहेगा सा. ३.२२.२

ले + ए-गा = लेगा सा. १५.६६.१

कर + ऐ-गा = करैगा सा. २.१४.२

जान + ऐ-गा = जानैगा चौं. ४२.२

धातु + ऐ-गी (६) (स्त्री०)

आ + व + ऐ-गी = आवैगी प. ६२.२

ऊदार + ऐ-गी = ऊदारैगी सा. १५.८४.२

दूट + ऐ-गी = दूटैगी सा. २८.५.२

जान + ऐ-गी = जानैगी सा. २.४२.२

पर + ऐ-गी = परैगी सा. २१.१५.२

सुन + ऐ-गी = सुनैगी सा. १५.८४.२

धातु + ऐ-गौ (१)

-ए-गौ बिनसैगौ प. ७६.६

धातु + असी (१४)

कह + असी = कहसी सा. १४.६ २

जा + असी = जासी प. १७६.१०

दे + असी = देसी सा. ४.२१.२

ले + असी = लेसी सा. १४.१८.२

बहुवचन धातु + इहैं (१)

-इहैं रचिहैं प. ३३.२

धातु + अहि-गे (४)

जा + अहि-गे = जाहिगे प. १०२.५, १०२.५

फिर + अहि-गे = फिरहिगे सा. १५.६७.२

मिल + अहि-गे = मिलहिगे सा. २.३१.२

२.४.५.१.२. मध्यम पुरुष

ए०व०	होहि	१	र. २०.२ तहं होहि पतंगा
ब०व०	हौ	३	प. ५४.३, १५४.१, २००.१

२.४.५.१.३ अन्य पुरुष

ए०व०	आहि	११	प. ३३.१ इत्या०
	अथि, अत्थि	१+१	र. १७.११, १७.११
	आथि	२	प. ४३.८, सा. २१.३४.१
	आसी	१	प. ६८.३ जरा मरन भव संकट आसी
	हहि	१	प. ३८.४ तीनि जाकै हहि भारा
	अहै	१	सा. २६.२.१
	है	१०१	सा. ३०.४.१ इत्या०
	रहै	२०	प. २५.६ इत्या०
	होवै	२	प. ८४.४ १६२.३
	बाटै	१	प. ६०.३
	होइ	६०	सा. ३३.३.२ इत्या०
	होई	२०	प. १६.५ इत्या०
	रहाई	१	प. ३४.३
ब०व०	हहि	१	प. १६७.६ आप हहि काने
	हैं	६	प. ४२.२, १३७.८, सा. १.२८.१, १५.४६.२, ३०.५.१, ३०.१२.२
	रहैं	४	प. ३७.३, १६४.८, सा. ४.७.२, ३०.२०.२

मुख्य क्रिया के समान प्रयुक्त रूप—

उ०पु०	हूं	३	प. १६०.३, १६०.३ सा. ११.८.१
म०पु०	हौ	१	प. २००.१
	होहि	१	र. २०.२
अ०पु०	आहि	११	प. ४३.४ इत्या०
	आथि	१	प. ४३.८
	आसी	१	प. ६३.३
	हहि	१	प. ३८.४
	अहै	१	सा. २६.२.१
	है	१०१	सा. ३०.४.१ इत्या०

धातु + इहौ (७)

कर + इहौ = करिहौ प. ३६.१

मिल + इहौ = मिलिहौ प. १५.१

दे + इहौ = देइहौ प. ५४.२

धातु + ऐ-गा (१)

-ऐ-गा सोवैगा सा. ३.१६.२

धातु + (अ)ब + औ (१)

-(अ)ब + औ कहिवौ प. ७८.१

बहुवचन

धातु + अहु-गे (६)

जा + अहु-गे = जाहुगे सा. १५.२२.२, प. ६२.१

बूढ़ + अहु-गे = बूढ़हुगे प. १६१.२

दे + अहु-गे = देहुगे सा. २.४८.२

ले + अहु-गे = लेहुगे सा. २.३२.२

धातु + औ-गे (२)

-औ-गे पहुंचौगे सा. १०.१२.२

धरौगे सा. १.२४.२

धातु + (अ)ब + आ, ए (१ + १)

-(अ)ब + आ पहिरबा प. १८६.३

-(अ)ब + ए करिवे प. १६७.१

२.४.४.१.६.३ : अन्य पुरुष :

ए०व०

-इहै, -इहहि

-अहि-गा ~ अइगा, -एगा ~ ऐ-गा,

-ऐ-गी, -ऐ-गौ, -असो

ब०व०

-इहैं

-अहि-गे

-(अ)ब + आ

धातु + इहै (२६)

काट + इहै = काटिहै सा. १५.६०.२

पर + इहै = परिहै सा. १५.३८.२

बकस + इहै = बकसिहै सा. ३०.१३.२

ले + इहै = लेइहै सा. २१.१२.२

धातु + इहहि (१)

-इहहि जैहहि सा. १५.२५.२ (जइहहि रूप भी संभव था)

धातु + अहि-गा ~ अइ-गा (१ + १०)

जा + अहि-गा = जाहिगा प. १८६.१

जा + अइ-गा = जाइगा प. ६२.५, ६२.६ (४ बार)

(प्रेरणा०) बस + आ + अइ-गा = बसाइगा प. ७४.५

पछिता + अइ-गा = पछिताइगा प. ७४.१

धातु + ए-गा ~ ऐ-गा (२ + १२)

गह + ए-गा = गहेगा सा. ३.२२.२

ले + ए-गा = लेगा सा. १५.६६.१

कर + ऐ-गा = करेगा सा. २.१४.२

जान + ऐ-गा = जानेंगा चौ. ४२.२

धातु + ऐ-गी (६) (स्त्री०)

आ + व + ऐ-गी = आवैगी प. ६२.२

ऊदार + ऐ-गी = ऊदारैगी सा. १५.८४.२

ढूट + ऐ-गी = ढूटैगी सा. २८.५.२

जान + ऐ-गी = जानैगी सा. २.४२.२

पर + ऐ-गी = परैगी सा. २१.१५.२

सुन + ऐ-गी = सुनैगी सा. १५.८४.२

धातु + ऐ-गौ (१)

-ऐ-गौ बिनसैगौ प. ७६.६

धातु + असी (१४)

कह + असी = कहसी सा. १४.६२

जा + असी = जासी प. १७६.१०

दे + असी = देसी सा. ४.२१.२

ले + असी = लेसी सा. १४.१८.२

बहुवचन धातु + इहैं (१)

-इहैं रचिहैं प. ३३.२

धातु + अहि-गे (४)

जा + अहि-गे = जाहिगे प. १०२.५, १०२.५

फिर + अहि-गे = फिरहिगे सा. १५.६७.२

मिल + अहि-गे = मिलहिगे सा. २.३१.२

धातु + (अ)व + आ (१)

- (अ)व + आ देवा सा. १५.२४.२ ते भी देवा गाड़

निम्नलिखित प्रयोगों में भविष्यकालिक अर्थ प्रकट होता है—

मरैं प. १०६.१ हम न मरैं मरिहै संभारा

मिलैं सा. १६.३६.२ अब के बिछूरें नां मिलैं

२.४.४.२ : संयुक्तकाल :

सहायक क्रियाओं की सहायता से संयुक्तकाल की रचना होती है। इनसे क्रिया की पूर्णता, अपूर्णता और शक्यता आदि के अर्थ प्रकट होते हैं। संयुक्तकाल को आ० आ० भाषाओं की विशेषता कह सकते हैं। इसका विवेचन संयुक्त-क्रिया के अन्तर्गत किया जाएगा। पहले सहायक क्रिया पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है।

२.४.५. : सहायक क्रिया

संयुक्तकाल-रचना में सहायक क्रियाओं में रूप-रचना की दृष्टि से कोई विशेष उल्लेखनीय बात नहीं दिखाई पड़ती; क्योंकि पुरुष, लिंग, वचन आदि के द्योतक प्रायः वे ही प्रत्यय इनमें संयुक्त मिलते हैं जो मुख्य क्रियापदों में प्राप्त होते हैं। इतना अवश्य उल्लेखनीय है कि इन क्रियाओं के तिङन्त रूपों में लिंग-परिवर्तन नहीं होता; किन्तु कृदन्तीय रूपों में होता है। क० अं० में अह-, ह-, हो-, अछ-, बाट- और रह- रूप (फार्मस्) वाली सहायक क्रियाएँ प्रयुक्त हुई हैं। इनके अतिरिक्त १७ अन्य क्रियाएँ भी सहायक क्रिया के समान प्रयुक्त हुई हैं जिनका उल्लेख संयुक्त क्रिया के विवेचन के साथ किया जाएगा। इन समस्त क्रियाओं के सहयोग से किसी भी काल में क्रिया की पूर्णता, अपूर्णता तथा शक्यता आदि के अर्थ (जिनका उल्लेख यथास्थान किया गया है) प्रकट हुए हैं। नीचे उपर्युक्त रूपों वाले सहायक क्रियापदों के आवृत्तियों सहित उदाहरण दिए गए हैं। ये आवृत्तियाँ संयुक्त क्रिया के रूप में प्रयुक्त सहायक क्रियाओं की प्रयोगावृत्तियों के अतिरिक्त हैं।

२.४.५.१ : वर्तमान निश्चयार्थ :

२.४.५.१.१ उत्तम पुरुष

	आवृत्ति	संदर्भ
ए०व० हैं	६	प. १६.३, १६०.३, १७०.१ सा. ११.८.१, ३०.१५.१ र. १६.५
हैं	२	प. ६०.२, सा. ११.६.१
ब०व० हैं	१	प. १५.१

२.४.५.१.२. मध्यम पुरुष

ए०व०	होहि	१	र. २०.२ तहं होहि पतंगा
ब०व०	हौ	३	प. ५४.३, १५४.१, २००.१

२.४.५.१.३ अन्य पुरुष

ए०व०	आहि	११	प. ३३.१ इत्या०
	अथि, अत्थि	१ + १	र. १७.११, १७.११
	आथि	२	प. ४३.८, सा. २१.३४.१
	आसी	१	प. ६८.३ जरा मरन भव संकट आसी
	हहि	१	प. ३८.४ तीनि जाकै हहि भारा
	अहै	१	सा. २६.२.१
	है	१०१	सा. ३०.४.१ इत्या०
	रहै	२०	प. २५.६ इत्या०
	होवै	२	प. ८४.४, १६२.३
	बाटै	१	प. ६०.३
	होइ	६०	सा. ३३.३.२ इत्या०
	होई	२०	प. १६.५ इत्या०
	रहाई	१	प. ३४.३
ब०व०	हहि	१	प. १६७.६ आप हहि कानि
	हैं	६	प. ४२.२, १३७.८, सा. १.२८.१, १५.४६.२, ३०.५.१, ३०.१२.२
	रहैं	४	प. ३७.३, १६४.८, सा. ४.७.२, ३०.२०.२

मुख्य क्रिया के समान प्रयुक्त रूप—

उ०पु०	हूं	३	प. १६०.३, १६०.३ सा. ११.८.१
म०पु०	हौ	१	प. २००.१
	होहि	१	र. २०.२
अ०पु०	आहि	११	प. ४३.४ इत्या०
	आथि	१	प. ४३.८
	आसी	१	प. ६३.३
	हहि	१	प. ३८.४
	अहै	१	सा. २६.२.१
	है	१०१	सा. ३०.४.१ इत्या०

रहै	२०	प. २५.६ इत्या०
होवै	२	प. ८४.४, १६२.३
वाटै	१	प. ६०.३
होइ	६०	सा. ३३.३.२ इत्या०
होई	२०	प. १६.५ इत्या०
रहाई	१	प. ३४.३
हहि	१	प. १६७.६
हैं	५	प. ४२.३ इत्या०
रहै	४	प. ३७.३ इत्या०

कृदन्तीय रूप —

अछत	१	सा. १०.११.२
अछित	१	प. ३६.७
अछता	१	सा. १५.८०.२
हंत	१	सा. २८.७.२
होत	६	प. १५.५ इत्या०
होतु	१	सा. ४.७.१
(वि०रू०) रहते	१	प. ८०.५

२.४.५.२ : वर्तमान संभावनार्थ :

अन्य पुरुष (सभी मुख्य क्रिया की भाँति प्रयुक्त)

ए०व०	होइ	४०	प. १०.६ इत्या०
	होई	१२	प. ७२.४ ,,
	रहै	३	प. ७७.६ ,,
	होवै	१	प. ८४.५

२.४.५.३ : वर्तमान आज्ञार्थ :

२.४.५.३.१ : मध्यम पुरुष : (सभी मुख्य क्रिया की भाँति प्रयुक्त)

ए०व०व०व०	होहु	१	प. ७.२
	रहहु	१	प. १७०.१
	रहु	३	सा. २.६.१. २२.७.१. ३२.५.१
	रहौ	१	सा. २४.६.१

२.४.५.३.२ : अन्य पुरुष :

ए०व०	रहै	६	सा. ५.१.२ रहै राम लौ लाइ, इत्या०
------	-----	---	----------------------------------

२.४.५.४ : भूत निश्चयार्थ :

२.४.५.४.१ : उत्तम पुरुष :

ए०व०	था	३	सा. ६.१.१, ६.२५.१, १५.५६.१
ब०व०	थे	१	सा. २१.६.२

२.४.५.४.२ अन्य पुरुष :

ए०व०	थी	१	सा. २.४१.१
(स्त्री०)			
(पु०)	था	७	प. ५०.३ इत्या०
	थौ	१	प. १५४.२ नंद कहां थौरे
ब०व०	थे	१	प. १५०.७ जे थे

मुख्य क्रिया के समान प्रयुक्त रूप—

	थी	१	सा. २.४१.१
	था	७	सा. ६.१.१ इत्या०
	थे	१	प. ५०.७
	थौ	१	प. १५४.२
	भइ	२	प. ६६.५, सा. ३१.१६.१
	भई	१८	प. १३४.२ इत्या०
	भया	६३	प. ६.४ इत्या०
	हुआ	५	सा. ३०.२२.१ इत्या०
	हुआ	२	प. ६०.५, सा. १५.६८.१
	हुवा	४	प. १०७.७ इत्या०
	रहा	७	प. ६४.५ इत्या०
	रहावा	१	चौ. ३.१ मन न रहावा
	रहि	१	सा. १.४.२ दिष्टि रहि मंद
	रही	११	सा. १.१.२ इत्या०
ब०व०	भए	१६	प. ८६.१० इत्या०
	हुए	१	प. १६२.६
	भयौ	७	प. १६.४ इत्या०
	भैला	१	प. १६६.३
	ह्वैला	४	प. १६६.६

२.४.५.५ : भूत संभावनार्थ :

अन्य पुरुष (सभी मुख्य क्रिया के समान प्रयुक्त) :

ए०व० होता	१	सा. ६.२७.१
हुता	२	सा. ६.२७.१, ६.२७.२
(स्त्री०) होती	४	प. १०७.३, १६०.५, सा. १.२५.१, २.४.१
व०व० होते	१६	प. ६८.२ इत्या०

२.४.५.६ : भविष्य निश्चयार्थ

अन्य पुरुष (केवल मुख्य क्रिया के समान प्रयुक्त रूप) :

ए०व० होइहै	१	प. ८२.३
होइगा	७	प. १५.१२.२ इत्या०
(स्त्री०) होइगी	२	प. १४.७, सा. २१.२२.२
होसी (होई ?)	१	सा. ४.१६.२ चंदन होसी बावनां

उपर्युक्त सहायक क्रियारूपों के अतिरिक्त सक—रूप वाली क्रिया के स्वतंत्र रूप भी क० ग्रं० में प्रयुक्त मिलते हैं। ऐसे रूपों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि केवल एक क्रियापद द्वारा पूरे वाक्य का बोध होता है—

सकै तौ ठाहर लाइ सा. १५.२०.१०

सकै तौ नीकसि भागि सा. १५.७१.१

सकै तौ समुंद समहालि सा. १६.१०.२

सकै तौ पाकड़ि तीर सा. १६.३८.१

सकहु त लेहु बहोरि सा. १५.२१.१

२.४.६ : पूर्वकालिक क्रिया :

क० ग्रं० में पूर्वकालिक क्रिया के रूप दो प्रकार से प्रयुक्त हैं:—

- (क) धातु+प्रत्यय—वे रूप जिनसे किसी कार्य को निकट भूत में सम्पन्न करके अन्य कार्य करने की ओर झुकाव दिखाई पड़ता है।
- (ख) धातु+प्रत्यय+कै, करि आदि परसर्ग अथवा अन्य क्रिया से, संयुक्त-क्रिया के रूप सम्पन्न हुए हैं जिनसे विभिन्न कालों का द्योतन हुआ है इनका विचार संयुक्तक्रिया के अन्तर्गत किया जाएगा।

(क) धातु+इ (३६० आष्ट०) (व्यंजनांत धातुओं के साथ संयुक्त)

अरुभ+इ=अरुभि प. ८६.७ इत्या०

उलट+इ=उलटि प. १३७.१

कर +इ=करि प. १४६.१

गह +इ=गहि प. १४६.५

मिल+इ=मिलि प. १३८.४

आकारांत और ओकारान्त धातुओं में -अइ संयुक्त होता है; किन्तु आकारान्त के साथ -अइ का अ- पूर्ववर्ती पद की अंतिम ध्वनि में मिल जाता है और ओकारान्त के साथ अ- का लोप हो जाता है अथवा छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार केवल -इ वचना है। केवल एक प्रयोग में -अइ अथवा -इ के स्थान पर -य मिलता है—

खा+य=खाय सा. १४.२८.१

-अइ अथवा -इ से संयुक्त रूपों की आवृत्तियां १०२ हैं।

उदा० गंवाइ सा. १५.५६.२

खोइ सा. १५.७५.१

घोइ सा. १५.६१.१

तुक अथवा छंद की सुविधा के कारण -इ का -ई हो गया है, ऐसे प्रयोग २२ हैं।

परिहरि : परिहरी प. १२३.२

पुकारि : पुकारी प. १७०.१

वजाइ : वजाई प. १६४.१०

विचारि : विचारी प. १०८.३, १७०.१, १७१.५

संभारि : संभारी प. १७०.१

हो- सहायक क्रिया के होइ (१२ आवृ०) और ह्वै (४ आवृ०) दो पूर्वकालिक रूप बनते हैं—

होइ प. १४.१, ८६.८, ९७.२, सा. १६.७.१, १७.७.२, २०.७.२,

२४.३.२, २. ३.५, ३.६, १३.४, चौं. २८.२

ह्वै प. १३.४ ३४.८, २. १.५, ३.७

दे धातु के भी दो रूप प्राप्त हैं—

देइ प. १७३.१, सा. १.८.१, १४.३२.२

दै प. ८.३, १६.२, १११.४, १८७.५, १८७.८

सा. ४.३६.२, १०.१२.१, १२.४.२, ३१.२४.२

ले धातु के भी दो रूप प्राप्त हैं—

ले प. ११८.४, सा. १५.२८.२, २५.१६.१

लै (२४ बार) सा. ३१.१.४ इत्यादि

विशिष्ट प्रयोग—

(अ) एक प्रयोग में -यौ से पूर्वकालिक रूप निष्पन्न हुआ है—

आप गोप भयौ आगम बूझै र. १३.३

(आ) -इया ~ इआ द्वारा भी दो प्रयोग पूर्वकालिक रूप में मिलते हैं—

नटवत साज साजिया साजी र. ११.४

कहै कबीर चित चेतिया रांम सुमिरि वैराग प. ५५.८

(इ) धातु प्रत्ययांत (धातु के समान) पूर्वकालिक रूप के ४ प्रयोग मिलते हैं—

जिनहि निवाज साज सब साजी प. ४४.४

उनमनि चड़ा मगन रस पीवै प. ५६.२

रंक निवाज करै राजेसुर प. १५७.२

कबीर भूल विगड़िया सा. ६१०.१

२.४.७ : क्रियार्थक संज्ञा :

क० ग्रं० में क्रियार्थक संज्ञाओं का प्रयोग अन्य संज्ञाओं के समान हुआ है; किन्तु मुख्य संज्ञाओं की भाँति इनमें लिंग और वचन का स्पष्ट भेद नहीं मिलता। संज्ञाओं में कारकीय रूपों के विवेचन से स्पष्ट हो गया है कि स्थान विशेष (पोजिशनल वैल्यू) के कारण एक ही प्रत्यय विभिन्न कारकीय अर्थों का द्योतन करता है। क्रियार्थक संज्ञारूप इसके अपवाद नहीं हैं।

क्रियार्थक संज्ञाओं की रचना विभिन्न प्रत्ययों के संयोग से हुई है। इस प्रक्रिया में एक प्रत्यय संयुक्त हो जाने के बाद (उपधातु बन जाने के बाद) भी अन्य प्रत्यय संयुक्त हुए हैं—

धातु + अन^१ (७६ आबु०)

—अन जब स्वरांत धातुओं में जुड़ता है तब उसका अ- विलीन हो जाता है। इसका संयोग प्रेरणार्थक धातुरूप में भी होता है। कहीं-कहीं क्रियार्थक संज्ञारूपों के बाद परसर्गों का भी प्रयोग हुआ है—

ओढ़ + अन = ओढ़न प. ५३.६ ओढ़न हमरै एक पिछेवरा

चल + अन = चलन प. २६.१ चलन चलन सब कोइ कहै

चरा + व + अन = चरावन प. ११६.५ भैंस चरावन जाई

(प्रेरणा०) समुझ + आव + अन = समुझावन चौ. २.२ समुझावन कारनै

ले + अन = लेन सा. १५.६.२ जागै तौ लेन न देन

^१ 'जीवहि' र. ८.६ (जीवहि मरन न होइ) का पाठ अर्थ और प्रसंग दोनों दृष्टियों से उपयुक्त नहीं प्रतीत होता। यहाँ 'जीव को' अर्थ संगत नहीं है। प्रसंग जीवन-मरण का है ('मन्मथ का जीवन-मरण नहीं होता,' अर्थ है) जीव के 'न मरने' का प्रसंग नहीं है। दा० और नि० अष्टपदी ६ में 'जीवन' पाठ है। यह पाठ संगत प्रतीत होता है।

धातु + अन् + आ, इ, ई, उ, ऐ, औ (४०, ७, ११, ५, ६, १)
 दौर + अन् + आ = दौरनां सा. १५.६३.१ डागल ऊपरि दौरनां
 हो + अन् + आ = होनां प. ८२.३ होनां है सो होइगा
 दाभ + अन् + इ = दाभनि सा. ३.३२.२ दाभनि बारंवार
 खा + अन् + इ = खानि सा. ३०.१.१ ज्यों लहसुन की खानि
 कह + अन् + ई = कहनीं प. १६५.१० सब झूठी कहनीं
 हो + अन् + ई = होनीं प. ६०.५ होनीं सो हुआ
 छूट + अन् + उ = छूटनु प. ६७.११ छूटनु हरि की सेव
 रह + अन् + उ = रहनु प. ११५.१ उनमनि रहनु खरा
 कूक + अन् + ऐ = कूकनै सा. ३.४.२ राति दिवस कै कूकनै
 राच + अन् + ऐ = राचनै सा. ३०.४.१ नारी केरै राचनै
 राच + अन् + औ = राचनौ सा. ३०.१.१ परनारी कौ राचनौ

धातु + अले, इले, ईले (८)

इन रूपों का के होने से या के करने से अथवा ने से अर्थ है—
 मुस + अले = मुसले र. ६.५ मन मुसले की जुगुति
 (प्रेरणा०) वज + आ + इले = वजाइले प. ११७.५ कंसा नाद वजाइले
 तज + इले = तजिले प. ४६.२ तजिले बनारन मति भई थोरी
 चूक + ईले = चूकीले प. ११५.७ चूकीले मोह पियासं
 वेघ + ईले = वेघीले प. ११५.६ वेघीले चक्र भुअंगा

धातु + आं (१४) (इससे भी उपर्युक्त अर्थ प्रकट होता है)

जूझ + आं = जूझां सा. १४.२५.१ अब तो जूझां ही वनै
 परस + आं = परसां सा. ३०.१०.२ परसां ह्वै पैमाल
 कह + य + आं = कहां सा. २८.२.१ आगि कहां दाभै नहीं
 कर०कि + य + आं = कियां सा. १५.२६.२ जतन कियां जीवै नहीं

धातु + आ (१८)

भूतकालिक क्रियारूप भी क्रियार्थक संज्ञारूप में प्रयुक्त मिलते हैं। इनका अर्थ कहना, करना इत्यादि है। अवधी में इस प्रकार के प्रयोग बहुत मिलते हैं—

'-आं से युक्त 'गयांह' सा. २.१६.२ और 'कहियांह' सा. २.१६.१ दो क्रिया-
 र्थक संज्ञा के प्रयोग और मिलते हैं; किन्तु -ह का संयोग निरर्थक है। सा० १६.११,
 सांसी० १६.३६ में 'कहियाय' और 'गयाय' पाठ है। साबे० १४.२५ में 'बुलाय'
 पाठ है।

कह+आ=कहा र. १६.८ कहा हमार मानैं नहीं

कहा र. १३.८ कहा कोई मानैं नहीं

कर०कि+य+आ=किया सा. २६.५.१ तेरा किया न होइ

मांग+य+आ=मांग्या प. १५६.३ तातैं सुख मांग्या नहिं भावै

मिल+आव+आ=मिलावा सा. १०.१४.२ सबद मिलावा होइ रहा

धातु+इ (१५)

छाक+इ=छाकि (छकना) सा. १२.१.१ वाक्री रही न छाकि

तोल+इ=तोलि (तोलने में) प. १११.५ तोलि न तुलिअै

मर+इ=मरि (मरना) सा. १६.१३.१ जौ मरि जानैं कोइ

रो+ल+इ=रोलि (रोना) सा. १५.८३.२ एकैं हरि के नांम बिनु जम

पाड़ैगा रोलि

धातु+ई, ई, अई (१०)

(भख) मार+ई=(भख) मारी (भख मारना) प. ६१.५

मूरिख सौं बोलै भखमारी

सींच+ई=सींचीं (सींचने से) सा. ३१.१३.१ बिरनां सींचीं नां बुझै

दुरा+अई=दुराई (दुराने से) प. १८.३ कैसे दुरत दुराई

(प्रेरणा०)सींच+आ+अई=सिचाई (सिंचाने से) प. १६८.५ अंघ्रित लै लै नींव

सिचाई

धातु+ए, एं (३५+८८)

इन प्रत्ययों के संयोग से होने से आदि भूतकालिक अर्थ का द्योतन होता है—

जा+ए=जाए सा. १६.४०.१ बेटा जाए क्या हुआ

गा+एं=गाएं सा. ३३.५.१ पद गाएं मन हरखिया

पड़+ए=पड़े सा. २४.१६.२ बिपति पड़े यौ छाड़िहै

राख+एं=राखें सा. १६.१२.१ घर राखें घर जाइ

धातु+पूर्वकालिक रूप (-इ)+एं (३)

गुन+इ+एं=गुनिएं प. ७२.६ का पढ़िएं का गुनिएं

पढ़+इ+एं=पढ़िएं प. ७२.६ का पढ़िएं का गुनिएं

सुन+इ+एं=सुनिएं प. ७२.६ का वेद पुरांनां सुनिएं

धातु+ऐ, ऐं (५+३)

टालटूल+ऐ=टालैटूलै सा. १६.१५ १ टाले टूलै दिन गया

सांट+ऐ=सांटै सा. १४.४०.२ सिर के सांटै हरि मिलै

मांग+ऐं=मांगैं प. १४८.६ बिनुं मांगैं ही बस्तु देइ

लाग+ऐं=लागैं सा. २२.१.२ फल लागैं ते दूरि

धातु + औ (३)

रुत + औ = रुतौ चौं. २०.१ रुत रुतौ नर नांहीं करै
 टार + य + औ = टारचौ प. १३०.१६ टारचौ टरै न
 हो० भ + य + औ = भयौ प. ८३.४ फिर पछितांनां विरिध भयौ
 धातु + पूर्वकालिक रूप + (अ)व + आ, ए, ओ, औ (३, ४, १, ४)
 पढ़ + इ + (अ)व + आ = पढ़िवा सा. २१, ३४.१ कवीर पढ़िवा हूरि करि

अन्यत्र — सा. ३३.१.१, ३३.२.१

तिर + इ + (अ)व + ए = तिरिखे र. २०.४ तिरिखे का करहु विचारा
 बक + इ + (अ)व + ओ = बकियो प. २३.२ काजी बकियो हस्ती तोर
 कह + इ + (अ)व + औ = कहिबौ सा. ६.२.२ कहिबौ कौ सोभा नहीं
 नाच + इ + (अ)व + औ = नाचिबौ प. ५०.१ अब मोहि नाचिबौ न आवै
 पढ़ + इ + (अ)व + औ = पढ़िबौ सा. ३३.२.१ मैं जानौं पढ़िबौ भलो
 शून्य प्रत्ययांत रूप के १५ प्रयोग प्राप्त हैं। कुछ इस प्रकार हैं—

खोदखाद धरती सहै काटकूट बनराइ सा. ४.२५.१

डगमग छांड़ि दे मन वौरा प. ५८.१

तब लै निरखै निरख मिलावा चौं. २५.२

गावन ही मैं रोज है रोवन ही मैं राग सा. ३२.१३.१

निम्नलिखित प्रयोग भी क्रियार्थक संज्ञा के समान हैं—

तहां ससिहर सूर गरासं प. ११५.७

उलटीले सकति सहारं प. ११५.५

२.४.८ : संयुक्त क्रियाएँ :

संयुक्तकाल की रचना मुख्य क्रिया के साथ कृदंत और सहायक क्रिया की सहायता से होती है। संयुक्तकाल की रचना आ०आ० भाषाओं की विशेषता कही जा सकती है। संयुक्तक्रिया की रचना भी आ०आ० भाषाओं की एक प्रमुख विशेषता कही जा सकती है। क० अं० में संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ है। इनमें अधिकतर दो क्रियाएँ एक साथ एक ही अर्थ के द्योतन के लिए प्रयुक्त हुई हैं। इस प्रकार अनेक अर्थों के द्योतन के लिए अनेक संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं तीन क्रियाओं का एक साथ प्रयोग भी मिलता है। इन समस्त क्रियाओं की रचना दो प्रकार से हुई है—

२.४.८.१ : शब्दद्वय द्वारा अथवा वीप्सा

२.४.८.२ : भिन्न-क्रियाओं के संयोग से— जिनमें पूर्वपद के रूप में किसी भी क्रिया के पूर्वकालिक, कृदंतीय तथा क्रियार्थक संज्ञारूप + उत्तरपद के रूप में कुछ अन्य

क्रियाएँ हैं। संयुक्त क्रिया के इन रूपों में उत्तरपद के रूप में आना, उठना, करना, चलना, जाना, डालना, देना, पड़ना, पाना, बनना, मेलहना, रहना, राखना, लगना, लेना, सकना, होना आदि १७ क्रियाएँ विभिन्न रूपों में प्रयुक्त हुई हैं। डालना क्रिया के स्थान पर घालना और नाना (डालना) क्रियाओं का प्रयोग हुआ है। रचनाक्रम में पूर्वपद की क्रिया के पूर्वकालिक, कृदन्तीय और क्रियार्थक संज्ञारूप मिलते हैं। रहना और होना क्रियाएँ जहाँ (मुख्य क्रिया के रूप में) पूर्वपद में प्रयुक्त हुई हैं वहाँ इनके भी उपर्युक्त रूप ही मिलते हैं। कविता की भाषा में यद्यपि संयुक्त क्रियाओं के दोनों क्रम सदैव एक समान नहीं मिलते फिर भी अर्थ की दृष्टि से ऊपर गिनाई गई क्रियाएँ सर्वत्र उत्तरपद के रूप में प्रयुक्त हुई हैं और विभिन्न क्रियाओं से संयुक्त हुई हैं।

उदाहरण

२-४-८.१.१ शब्दद्वैत— इसमें एक क्रिया के समकक्ष उसके दूसरे रूप के संयोग से अर्थ में विशिष्टता आ गई है—

उरभि पुरभि सा. २१.४.२, चौ. १४.१

काछि कूछि प. ८६.७

जानि बूझि (६ बार) सा. ४.१७.१ इत्यादि

जरि बरि सा. ३०.१७.२

ठोंकि बजाइ सा. १५.३०.२

निरखि देखि प. १२३.१०

पढ़ि गुनि प. १८१.६, र. ७.१

फटकि पछोरि सा. १७.७.१

फूटमफूट सा. २.५.१ खपरा फूटमफूट

फूलै फलै सा. १५.१४.२, २७.५.१

बकतै बकि प. ११५.६

भरे भरि सा. ६.२६.१, १४.२०.२

मरे मरि सा. ३१.१२.१

सोचि बिचारि प. १०१.६, १३५.७. सा. २८.३.१

हाजिर हुजूर प. ८७.४

हिलमिलि प. ३३.२

२-४-८.१.२ : पुनरावृत्ति :

२-४-८.१.२.१ : कृदन्तीय पुनरावृत्ति—

चलत चलत र. १३.१

चलते चलते सा. १०.६.२

जरत जरत र. १८.६, १८.७
 निरखत निरखत चौं. २५.२
 फूला फूला प. ६३.४
 फूली फूली सा. १६.३४.२
 फूले फूले फूले प. ६८.१ फिरहु कत फूले फूले फूले
 बोलत बोलत प. ६१.२, ६१.३
 भ्रंमत भ्रंमत प. १५४.३
 मरतां मरतां सा. १६.१.१.
 हसंत हसंत सा. २३.२.१, ३०.१२.२
 हेरत हेरत सा. ८.६.१, ८.७.१

उपर्युक्त कृदन्तीय पुनरावृत्तियों से सामान्य कृदन्तीय अर्थों में अधिक तीव्रता का भाव प्रकट हुआ है।

२.४.८.१ २.२ : पूर्वकालिक रूप की पुनरावृत्ति —

उठि उठि प. ५६.३, सा. २.६.१
 उड़ि उड़ि सा. २.३०.२, १६.८.१, २४.३.१
 ऊजड़ि ऊजड़ि सा. ४.३३.१
 करि करि सा. ८.५.२, २१.१६.१, २६.१७.१, ३३.८.१
 कसि कसि प. १६५.३
 कहि कहि सा. ३.४.१
 काटि काटि प. ५१.४
 खिरि खिरि चौं. १.२ ए सभ खिरि खिरि जांहिमे
 गढ़ि गढ़ि सा. १५.६४.१
 चुनि चुनि प. १६१.२, सा. १.७.२, १८.५.२
 जरि जरि सा. २४.१८.२
 जोरि जोरि प. ६८.५, १६४.३
 भखि भखि चौं. ४.२
 तपाइ तपाइ सा. २.३२.२
 देखि देखि प. ८५.८
 दै दै सा. १६.१६.२
 धारि धारि प. ८५.४
 नइ नइ सा. ८.३.२ सोई नइ नइ जाइ
 निहारि निहारि सा. २.३६.१

पढ़ि पढ़ि प. ८७.५, १६०.६ सा. ३३.३.१
 पुकारि पुकारि प. ६३.१२, सा. २-३६.२
 पूजि पूजि प. ८५.३
 फिरि फिरि सा. ७.६.२
 बहि बहि सा. ३०.४.२
 विगारि विगारि प. १६४.४, १६६.३, १६६.५, १६६.६
 विचारि विचारि सा. २.१३.२
 बुझाइ बुझाइ सा. २.३७.२
 भरि भरि प. ६५.२, १०६.३, सा. ३१.४.२
 भ्रमि भ्रमि सा. १.२६.१
 मरि मरि सा. ३१.२७.१
 मलि मलि प. १०४.३, सा. ६.३३.१, १२.७.१
 मुचि मुचि प. ६४.४ मुचि मुचि गरभ भई किन बांझ
 मुसि मुसि प. १२.३, १२६.५
 रचि रचि प. ६२.४
 रुचि रुचि प. १२१.२, १६६.६
 रोइ रोइ सा. २.२३.२
 लदाइ लदाइ सा. १०.३.२
 लिखि लिखि प. ६६.६, सा. ६.२१.२
 लूचि लूचि प. ८५.६ केस लूचि लूचि मुए वरतिया
 लै लै प. १६८.५ सा. १८.१.१
 सुमिरि सुमिरि सा. ३१.५.२ सुमिरि सुमिरि जगदीस
 सुनि सुनि प. १४४.६
 हंसि हंसि सा. २.३८.१
 हरखि हरखि सा. ७.१०.२
 होइ होइ सा. २६.१३.२

पूर्वकालिक क्रियारूपों की पुनरावृत्ति द्वारा क्रिया का बार-बार होना व्योक्त होता है।

२.४.८.१.२.३ : आज्ञार्थक पुनरावृत्ति—

चलि चलि प. ७५.१ चलि चलि रे भंवरा कंवल पास
 रहि रहि सा. २.४१.२ रहि रहि मुगध गहेलड़ी
 राखि राखि प. ३६.२ राखि राखि मेरै बीठुला

लेहु लेहु प. ६८.६ लेहु लेहु करे

२.४.८.१.२.४ : भूतकालिक क्रियारूप की पुनरावृत्ति—

जानीं जानीं प. ११२.१ जानीं जानीं रे राम की कहानीं

२.४.८.२ : भिन्न क्रियाओं के संयोग से प्राप्त रूप :

२.४.८.२.१ : दो क्रियाओं के संयोग से प्राप्त संयुक्त क्रियारूप—

इस प्रकार के रूप निम्नलिखित स्थितियों में प्राप्त हैं—

(अ) पूर्वकालिक क्रियारूप + अन्य क्रिया

(आ) कृदन्तीय रूप + अन्य क्रिया

(इ) क्रियार्थक संज्ञारूप + अन्य क्रिया

अन्य क्रिया उत्तरपद वाली (पहले बताई गई) क्रियाओं में से ही है। इन क्रियाओं द्वारा जो अर्थ द्योतित हुआ है अथवा जो किसी प्रकार की अर्थ में विशिष्टता आई है उसका उल्लेख यथास्थान (कोष्ठक) में किया गया है। एक-एक क्रिया के रूपों से बने हुए सभी संयोगों की आवृत्तियाँ रूप-रचना के साथ ही कोष्ठक में दी गई हैं। नीचे विभिन्न रूपों पर विचार किया गया है—

१. आना (१७)

वर्तमानकालिक रूप (आवै ७), आज्ञार्थक (आवौ १), भूतकालिक रूप (आया ~ आवा, आइ, आई, आए, आयौ ६)

पूर्वकालिक क्रियारूप + आया ~ आवा, आइ, आई, आए, आयौ, आवै, आवौ (११)

ऊपरि आए सा. १५.६.१ ऊपरि आए नैन (नेत्र उपरि आए)

ऊनइ आई सा. २.५३.१ ऊनइ आई वादरी (वदली घिर आई)

जीति आया प. १४३.७ जीति अमरगढ़ आया (अमरगढ़ को जीतकर आया)

ढूढ़ि आवा चौ. १६.२ चढ़ि सुमेर ढूढ़ि जब आवा

(सुमेर पर चढ़कर जब ढूढ़ कर आया)

लै आइ प. ११०.५ बर उत्तिम लै आइ (उत्तम बर लेकर आया)

लै आयौ प. ७३.५ नां कोऊ लै आयौ यह धनु

(कोई इस धन को लेकर नहीं आया)

हारि आवै सा. १०.३२.२ कबहुं न आवै हारि (कभी हार कर नहीं आता है)

चलि आवौ प. ४७.५ तुम चलि आवौ (तुम चले आओ)

कृदन्तीय रूप + आवै (३)

कहत आवै प. २.२ कछु कहत न आवै (कुछ कहते नहीं बनता)

तेरी आवै सा. १६.१८.२ तेरी आवै नीत (तैरती हुई नित्य आती है)

नेरा आवै सा. १५.६६.१ नेरा आवै छोरि (किनारे नियराता आ रहा है)

क्रियार्थक संज्ञा रूप + आवै (३)

बनि आवै प. १८४.१ बनि नहि आवै (बनने में नहीं आता)

बोला आवै र. २.३ रूप अरूप न आवै बोला (रूप-अरूप कहने में नहीं आता)
आना के संयोग से पूर्वकालिक रूप में भूतकाल से वर्तमान काल में क्रिया का सम्पन्न होना द्योतित होता है तथा कृदन्तीय और क्रियार्थक रूप में भूतकाल से वर्तमान काल में क्रिया का होते रहना लक्षित होता है।

२. उठना (१)

इस क्रिया का संयोग केवल एक ही स्थान पर पूर्वकालिक रूप के साथ हुआ है। इसके जुड़ने से क्रिया का अचानक प्रारंभ हो जाना सूचित होता है—

मेलि ऊठी सा. १६.१७.२ जारन आनीं लाकरी ऊठी कौपल मेलि

(लकड़ी जलाने के लिए लाई गई किन्तु उसमें से कौपल निकल आई)

३. करना (६५)

भूतकालिक रूप (किया, कीन्हां २), पूर्वकालिक रूप (करि, कै ६३)

इसके संयोग से पूर्वपद वाली क्रिया के अर्थ में कोई विशिष्टता नहीं आई है—
केवल संयुक्त अर्थ ही प्रकट हुआ है। पूर्वकालिक क्रियारूप के साथ पूर्वकालिक रूप का संयोग व्यर्थ ही हुआ है। बिना इसके संयोग के भी अर्थ प्रकट हो सकता था।

पूर्वकालिक क्रियारूप + करि, कै (६३)

आइ करि सा. १५.५६.१ कहा किया हंम आइ करि (आकर)

कमाइ करि सा. ३.१०.१ पहिलै बुरा कमाइ करि (कमाकर)

पहिरि करि सा. १.२६.२ स्वांग जती का पहिरि करि (पहन कर)

आइ कै सा. २.४५.२ तुम आइ कै (आकर)

उड़ि कै सा. २६.१६.१ उड़ि कै चढ़ा अकासि (उड़कर)

पारि कै सा. १४.१०.२ पंच पियादै पारि कै (पार करके)

कृदन्तीय रूप + किया, कीन्हां (२)

पूरा किया सा. १.१५.२ पूरा किया बिसाहुनां (पूरा कर लिया)

पैदा कीन्हां प. १०२.३ मीरां पैदा कीन्हां (पैदा किया)

क्रियार्थक रूप के साथ कोई संयोग नहीं मिलता।

४. चलना (६)

भूतकालिक रूप (चला, चले, चली, चली ५), क्रियार्थक संज्ञारूप (चालां १)

इस क्रिया के संयोग से क्रिया को आगे अग्रसर होने का संकेत मिलता है।

पूर्वकालिक किरुवरूप + चला, चले, चली, चली, चालां (६)

डारि चला सा. २२.४.२ चला कमानहि डारि (कमान को छोड़ चला)
छांड़ि चले प. १२१.८ कहै कबीर छांड़ि चले (छोड़कर चल दिए)
लै चली प. ७५.६ तब भंवरी लै चली सिर चढ़ाइ (लेकर चल दिया)
छांड़ि चली प. ८३.१० मंदिर मंदिर छांड़ि चली (छोड़कर चले)
मुड़ि चालां सा. १४.२५.१ मुड़ि चालां घर दूरि (मुड़ चलने से घर दूर)

५. जाना (१८२)

वर्तमानकालिक रूप (जाइ, जाई, जाहि, जाहि, जाहीं, जावै, जात ७७)
आज्ञार्थक रूप (जइए, जाइए, जाउ, जाहु ४)
संभावनार्थक रूप (जाइयौ १)
भूतकालिक रूप (गया, गई, गई, गइया, गए, गयौ, गा, गौ ८२)
भविष्यकालिक रूप (जाइगा, जाइगी, जाइंगे, जाहिंगे, जइहौ, जैहौ, जैहै,
जैवे, जासी १८)

जाना के संयोग से संयुक्त अर्थ—अविच्छिन्नता अथवा संभाव्यता— का द्योतन हुआ है।

पूर्वकालिक रूप + जाइ, जाई, जाहि, जाहि, जावै, जात, गया, गई, गई, गइया, गए,
गयौ, गा, गौ, जइए, जाइए, जाउ, जाहु, जाइयौ, जाइगा, जाइगी,
जाइंगे, जाहिंगे, जइहौ, जैहै, जैवे, जासी (१३६)

तजि जाइ चौं. १५.१ कहां तजि जाइ (कहां छोड़कर जाता है)
लै जाइ प. १६४.४ लै जाइ जंवाई (जामाता ले जाता है)
छलि जाई प. १६४.६ देखत छलि जाई (देखते ही छला जाता है)
तजि जाहि चौं. २०.२ तजि जाहि घनै (बहुतों को छोड़ देता है)
बहि बहि जाहि सा. ३०.४.२ केती बहि बहि जाहि (कितनी बह जाती हैं)
लै जावै प. १६४.४ मूसि लै जावै (छुरा ले जाता है)
चुगि जात प. १२४.६ चुगि जात मिरगवा (मृग चुग जाता है)
रहि गया सा. २१.१३.१ काठै रहि गया रांम (राम किनारे रह गया)
रूठि गया सा. ३१.२६.२ गया कबीरा रूठि (कबीर रूठ गया)
भूलि गई सा. ६.३.१ गई दसा सब भूलि (सब दशा भूल गई)
परि गई प. १३१.७ दुसरी परि गई साढ़ी (दोहरी साढ़ी पड़ गई)
चुनि गई सा. १६.३४.२ फूली फूली चुनि गई (फूली हुई चुन गई)
डर गइया प. १४०.२ दोऊ डर गइया (दोनों डर गए)
तिरि गए सा. १५.२७.२ हरए हरए तिरि गए (हल्के तर गए)

तिरछी जाई चौं. २१.१ अतिर तिरछी नहि जाई (अतिर तैरा नहीं जाता)
 सह्यौ जाई प. ४३.१ दुख सह्यौ न जाई (दुख सहा नहीं जाता)
 भज्यौ जाई प. ६३.७ भज्यौ नहि जाई (भजा नहीं जाता)
 गहा जावै प. १४६.३ अगह गहा नहि जावै (अगह नहीं गहा जाता)
 कथे जाहीं र. ११.३ कथे नहि जाहीं (कहे नहीं जाते)
 क्रियार्थक रूपों के साथ जाना के रूप संभाव्यता का अर्थ सूचित करते हैं।

६. डालना ~ घालना ~ नाना (न)

वर्तमानकालिक रूप (घालै १), आज्ञार्थक (डारि, घालि, घालहु ३), संभावनार्थक (डारउं, नांऊं २), भूतकालिक (डारचौ, घाला २)

इस क्रिया के संयोग से संयुक्त अर्थ का द्योतन हुआ है। कहीं-कहीं तो बिना इसके संयोग के ही अर्थ निकल सकता था।

पूर्वकालिक रूप + घालै, डारि, घालि, घालहु, डारउं, नांऊं, डारचौ, घाला (न)

खाई (खाइ) घालै प. ११८.५ मिलै त घालै खाई (मिले तो खा डालता है)
 मारि डारि प. २६.८ भावै मारि डारि (चाहो तो मार डालो)
 जारि घालि प. २६.८ मोकउं घालि जारि (मुझे जला डालो)
 सांठि घालहु प. २३.५ तुरावहु घालहु सांठि (मारकर तेजी से चलाओ)
 काटि डारउं प. २३.५ तुभ डारउं काटि (तुझे काट डालूँ)
 बिन नांऊं सा. ३१.२८.२ यौ बिन नांऊं सूत (इस प्रकार सूत बिन डालूँ)
 करि डारचौ प. २३.३ भिला करि डारचौ (पिंड बना डाला)
 घानि घाला सा. ३१.१७.१ जगु घाला घानि (संसार को नष्ट कर डाला)

७. देना (२६)

वर्तमानकालिक रूप (देइ, देई ६), आज्ञार्थक (दे, दै, देहु ६), संभावनार्थक (देउं १)

भूतकालिक (दिया ~ दीया, दीन्हां, दीन्हीं, दियौ १२)

भविष्यकालिक (देइहौं, दैहूं, देवा, देसी ४)

इस क्रिया के संयोग से क्रिया के स्वतः होने अथवा होने देने का अर्थ प्रकट होता है। आज्ञार्थक रूपों के संयोग के बिना भी अर्थ प्रकट हो सकता था। आज्ञार्थक रूपों का संयोग (अर्थ की दृष्टि से) आज्ञार्थक रूप के साथ ही प्रतीत होता है।

पूर्वकालिक रूप + देइ, दे, दै, देहु, दीन्हां, दीन्हीं, दीया, दियौ, देवा, देसी (२२)

जगाइ देइ सा. ८.१३.२ सूतां देइ जगाइ (सोते से जगा देती है)
 छांड़ि दे प. ५८.१ छांड़ि दे मन बौरा (हे बौरा मन! छोड़ दो)

छाड़ि दै सा. २६.५.१ मनोरथ छाड़ि दै (मनोरथ छोड़ दो)
 लिखि देहु प. २६.४ मेरी पटिया लिखि देहु स्त्रीगोपाल (मेरी पट्टी पर श्रीगोपाल
 लिख दो)
 बांति दीन्हां र. १४.४ बांति करम संगि दीन्हां (कर्मों के साथ बाँट दिया)
 छोरि दीन्हीं सा. १२.१०.१ बहु बिधि दीन्हीं छोरि (कई प्रकार से छोड़ दिया)
 भरि दीया सा. १.१५.१ दीपक दीया तेल भरि (दीपक में तेल भर दिया)
 तोरि दियौ प. १६.७ तोरि दियौ जस धागा (धागे के समान तोड़ दिया)
 बताइ देसी सा. ४.२२.२ देसी सुमति बताइ (सुमति बता देगी)
 गाड़ देवा सा. १५.२४.२ ते भी देवा गाड़ (ते भी गाड़ दिए जाएंगे)

क्रियार्थक संज्ञा रूप + देई, दे, देउं, देइहौं, दैहूं (७)

कहन देई सा. ३१.११.२ कहन न देई रांम (राम नहीं कहने देती)
 भरनां देई प. १२८.६ बिंदु न देई भरनां (बिन्दु नहीं भरने देती)
 होन देई प. १५६.२ होन न देई हरि के चरन निवासा (हरि के चरणों में
 निवास नहीं होने देती)
 बाजन दे सा. १५.१३.१ बाजन दे बाजंतरी (बाजंतरी बजने दो)
 देखन देउं सा. ११.१२.२ नां तुभ देखन देउं (तुम्हें नहीं देखने दूँ)
 चरन देइहौं प. ६१.६ चरन न देइहौं (चरने नहीं दूंगा)
 जान दैहूं प. ७.१ जान न दैहूं रांम पियारे (हे राम प्यारे ! जाने नहीं दूंगी)

७. पड़ना ~ परना (२५)

वर्तमानकालिक रूप (पड़ै ~ परै १२), भूतकालिक (पड़ा ~ परा, परी,
 परे १३)

इस क्रिया के संयोग से संयुक्त अर्थ प्राप्त हुआ है।

पूर्वकालिक रूप + परै, पड़ै, परा, पड़ा, परी, परे (२५)

जाइ परै सा. १५.६.२ जाइ परै भवचक्र मैं (भव-चक्र में जा पड़ता है)
 छूटि पड़ै सा. २.८.२ छूटि पड़ै या बिरह तैं (इस बिरह से छूट पड़ता है)
 उतरि परा सा. १.१०.२ उतरि परा फरंकि (उतर कर दूर पड़ा)
 गिरि पड़ा सा. २६.१६.२ फुनि गिरि पड़ा (फिर गिर पड़ा)
 ह्वै परी सा. १६.१७.१ ऐसी ह्वै परी (इस प्रकार हो पड़ी)
 हारि परे र. १३.१ हारि परे तहां (वहाँ हार गए)

६. मेलहना (३)

भूतकालिक रूप (मेलो, मेलहा, मेलही ३)

मेल्हना क्रिया के केवल तीन संयोग पूर्वकालिक रूप के साथ संयुक्त अर्थ में प्राप्त हैं।

मारि मेला सा. १.२२.१ चंचल मेला मारि (चंचलता को मारकर छोड़ दिया)
छाड़ मेल्हा सा. २६.५.१ सब जग मेल्हा छाड़ (सारे संसार में छा गई है)
मूँदि मेल्ही सा. २५.१२.२ जेहिं सेरी साधू गए सो ती मेल्ही मूँदि (जिस गली से साधू लोग गए उसे तो बंद कर दिया है)

१०. रहना (८२)

वर्तमानकालिक रूप (रहा, रही, रहे, रहै ४४), आज्ञार्थक (रहिए, रहिअँ, रहु, रहौ ८), संभावनार्थक (रहिए, रहै १०), भूतकालिक (रहा, रह्यौ १८)
भविष्यकालिक (रहसी, रहिबौ २)

इस क्रिया के संयोग से क्रिया की निरन्तरता अथवा संभाव्यता का अर्थ प्रकट हुआ है।

पूर्वकालिक रूप + रहा, रही, रहे, रहै, रहिए, रहु, रहौ, रहिए, रहै, रहा, रह्यौ,
रहसी (६६)

रमि रहा सा. ६.३७.२ बाहरि भीतरि रमि रहा (बाहर भीतर रम रहा है)
ह्वै रहा सा. १०.१४.२ सबद मिलावा ह्वै रहा (सबद का मिलान हो रहा है)
होइ रही प. १७.४ मगन दिवांनीं होइ रही (मगन और दीवानी हो रही)
लपटि रही प. १११.६ लपटि रही उरभाई (उलझ कर लिपट रही है)
भूलि रहे सा. १५.५८.२ रहे अरध मुखि भूलि (अर्ध मुख होकर भूल रहे हैं)
भरि रहे प. ३.४ काम क्रोध मल भरि रहे (काम क्रोध मल भर रहे हैं)
होइ रहै सा. ४.१७.१ जड़ होइ रहै (जड़ हो रहती है)
रमि रहिए प. १६८.१ राम राम राम रमि रहिए (राम में रम रहिए)
होइ रहु प. ८०.६ मुचेत चित्त होइ रहु (मुचित चित्त होकर रहो)
छकि रहौ चौं. १२.१ छकि किन रहौ (छक कर क्यों न रहो ?)
लागि रहिए सा. ५.२.१ जासौं रहिए लागि (जिससे लगे रहें)
जरि बरि रहै चौं. १३.२ जौ जरि बरि रहै (यदि जल-बल कर रहे)
मिलि रहा सा. ३४.३.२ एकमेक होइ मिलि रहा (एक होकर मिल गया)
भभकि रह्यौ चौं. १४.१ रह्यौ भभकि नाहीं परवानां (बिना विद्वानों के वह भिभक कर रहा गया)

नमि रह्यौ प. ५४.४ एकमेक रमि रह्यौ (एक ही तत्व रमा हुआ है)

रंग रहसी सा. ६.६.२ कैसे रहसी रंग (किस प्रकार रंगकर रहेगी)

कृदन्तीय रूप + रहै, रहिए, रहिअँ, रहु, रहै, रहिबौ (१२)

डरता रहै सा. ३०.२५.२ मन मैं रहै डरता (मन में डरता रहता है)

बांधी रहै प. ५२.२ माया रहै न बांधी (माया बांधी नहीं रहती)
 डरानै रहिए प. १६७.२ सदा डरानै रहिए (सदा डरे रहें)
 मांजत रहिअै प. ७२.७ दरपन मांजत रहिअै (दर्पण मांजते रहिए)
 जागत रहु प. ८०.१ जागत रहु रे भाई (जागते रहो)
 माता रहै सा. १२४.२ राम अमलि माता रहै (राम के नशे में भूमा रहे)
 भरमत रहिबौ प. ७८.१ तो—भरमत रहिबौ (भ्रमते हुए रहोगे)

क्रियार्थक संज्ञारूप + रहै (१)

राखा रहै सा. १४.२६.१ राखा रहै न ओट (राखने से ओट में नहीं रहता)

११. रखना' (राखना) (७)

वर्तमानकालिक रूप (राखै २), आज्ञार्थक (राखौ १) भूतकालिक (राखा, राखे, राखल ४)

इस क्रिया के संयोग से संयुक्त अर्थ के साथ क्रिया में प्रेरणार्थक भाव भी द्योतित होता है।

पूर्वकालिक रूप + राखै, राखौ, राखा, राखे, राखल (६)

बौराई राखै प. १६४.५ मद पियाइ राखै बौराई (मदिरा पिलाकर पागल बना कर रखता है)

भरि राखै प. १२२.१३ नदी नीर भरि राखै (नदी पानी भर रखती है)

लै राखौ प. १२३.१२ जीवत ही लै राखौ (जिंदा ही ले रखो)

संचारि राखा सा. २८.४.१ राखा पवन संचारि (वायु को संचालित कर रक्खा)

लगाइ राखे सा. १६.३७.१ राखे पोख लगाइ (घोसले लगा रखे हैं)

रमि राखल प. ५३.८ रमि हम राखल (हमने रम रक्खा है)

कृदन्तीय रूप + राखा (१)

जीवता राखा प. १२४.७ मारा अंगिगा जीवता राखा (मारे मृग को जिन्दा रक्खा)

१२. लगना (१२)

भूतकालिक रूप (लगा, लाग, लागा, लागी, लागे (१२))

इस क्रिया के संयोग से किसी क्रिया का प्रारंभ होना सूचित होता है। इसके सभी संयोग क्रियार्थक संज्ञारूपों के साथ हुए हैं।

बरखन लगा सा. २.५३.१ बरखन लगा अंगार (अंगार बरसने लगा)

सा. ४.४०.१ में 'जौ कोइ जानै राखि' पाठ है। इसे इस प्रकार होना चाहिए—'जौ कोइ जानि राखै' अथवा 'जौ कोइ राखै जानि' क्योंकि 'राखि' संभावनार्थ में नहीं आ सकता। अतएव निर्धारितपाठ विचारणीय है ?

सूसन लाग प. १६८.२ घर सूसन लाग (घर सूसने लगा)
 बाहन लाग सा. १.२१.१ बाहन लाग तीर (तीर छोड़ने लगा)
 लरनै लाग प. २५.६ संतोषु लै लरनै लाग (संतोष के साथ लड़ने लगा)
 भाजन लागी सा. २५.२४.२ भाजन लागी सूल (पीड़ा भागने लगी)
 डोलै लागी सा. ३१.१८.२ तव लागी डोलै साथि (तव साथ डोलने लगी)
 कंपन लागे प. १३८.४ कर कंपन लागे (हाथ कांपने लगे)
 खेलन लागे प. १४४.४ आतम ब्रह्म जो खेलन लागे (आत्मब्रह्म जो खेलने लगे)

१३. लेना (४४)

वर्तमानकालिक (लेइ, लेहि ३), आज्ञार्थक (लीजै, लीजौ, ले, लेहु, लै २३), संभावनार्थक (लेइ, लावै ३), भूतकालिक (लिया, लई, लिए, लियौ, लीन, लीन्ह, लीन्हां, लीन्हीं १४), भविष्यकालिक (लेइगा १),

इस क्रिया के संयोग से कहीं आज्ञा और कहीं शक्यता अथवा सामर्थ्य के अर्थ प्रकट हुए हैं और सभी संयोग पूर्वकालिक रूपों के साथ ही हुए हैं।

करि लेइ सा. १.८.२ चित दरपन करि लेइ (चित्त को दर्पण कर लेता है)
 विचारि लेहि र. १०.१० चित्रवंतहि लेहि विचारि (चित्रकार को विचार लेते हैं)
 धरि लीजै प. ८१.२ पगु धरि लीजै (पैर रख लीजिए)
 चेत लीजौ प. ११६.१० मु चेत लीजौ (चेत लीजिए)
 मूड़ि ले सा. २५.३.१ मन —मूड़ि ले (मन को मूड़ लो)
 गहि लेहु सा. १५.८८.२ सबद गहि लेहु (सबद ग्रहण कर लो)
 लूटि लै सा. ३.३.१ लूटि सकै तो लूटि लै (लूट सको तो लूटो)
 पिछांनि लेइ सा. ५.५.१ हमकौं लेइ पिछांनि (हमें पहचान ले)
 फेरि लावै सा. १५.५१.२ है कोई लावै फेरि (कोई है (जो) लौटा लावे)
 भरि लिया सा. १२.३.१ कमंडल भरि लिया (कमंडल भर लिया)
 मांगि लई सा. २१.२१.२ लख चौरासी मांगि लई

(चौरासि लाख को मांग लिया)

करि लिए सा. ४.१.२ आप सरीखे करि लिए (अपने समान कर लिया)
 लिखि लियौ प. १२.२ राम नाम लिखि लियौ (राम नाम लिख लिया)
 हरि लीन प. ४३.३ रतनु हरि लीन मोर (मेरा रतन हर लिया)
 हरि लीन्ह प. ६७.२ ग्यान रतनु हरि लीन्ह (ज्ञान रूपी रतन हर लिया)
 हरि लीन्हां प. १०२.२ सरब तत्त हरि लीन्हां (सभी तत्त्व हर लिया)
 पंसारि लीन्हीं प. ६७.६ लीन्हीं हाथ पसारि (हाथ फैला लिया)
 राखि लेइगा प. २१.५ होइगा राम त लेइगा राखि (राम होगा तो रख लेगा)

१४. होना (६६)

वर्तमानकालिक (हूं, है, हैं, होइ, होई, हौ, हौं ५८), भूतकालिक (था, थे, भया, भए १०), भविष्यकालिक (होइगा १)

इस क्रिया के विभिन्न रूपों के संयोग से क्रिया के होने की स्थिति का चयन हुआ है ।

कृदन्तीय रूप + हूं, है, हैं, हौ, हौं, था, थे, भया, भए (६२)

कहता हूं प. १७०.१ कहता हूं ज पुकारि (पुकार कर कहता हूं)

सुमिरत हूं र. १६.५ सुमिरत हूं (स्मरण करता हूं)

चहत है सा. २५.१८.२ होन चहत है दास (दास होना चाहता है)

पड़ी है सा. १५.७०.१ बीच पड़ी है राति (बीच में रात पड़ी है)

भया है सा. ४.८.१ कबीर भया है केतकी (कबीर केतकी हो गया है)

चले हैं प. ५.८ व्याहि चले हैं (व्याह कर चल दिए हैं)

तजत हैं प. १५.१० हंम प्रांन तजत हैं (हम प्राण छोड़ रहे हैं)

कहत हौ प. १५६.६ तुम जीव कहत हौ (तुम जीव कहते हो)

कहतु हौं प. ६०.२ बात कहतु हौं (बात कहता हूं)

आया था सा. ६.२५.१ आया था संसार में (संसार में आया हुआ था)

चाले थे सा. २१.६.२ चाले थे हरि मिलन कौं (हरि से मिलने को चले थे)

मुकता भया सा. ३२.११.१ मेरि मिटी मुकता भया (मेरि मिट गई, मुक्त हो गया)

उदै भए सा. १.४.२ अति उदै भए (अति उदित हुए)

क्रियार्थक संज्ञारूप + होइ, होई, होइगा (७)

रहनि होइ सा. १०.१५.२ रहनि कहां तैं होइ (कैसे रहना हो ?)

किया होइ सा. २.१४.१ तेरा किया न होइ (तेरे करने से नहीं होता)

आवागमन होई प. १०३.६ आवागमन न होई (आवागमन नहीं होता)

सोवन होइगा सा. ३.२.२ इक दिन सोवन होइगा (एक दिन सोना होगा)

१५. सकना (२३)

वर्तमानकालिक (सकई, सकत, सकै, सकै, सकौं १४), संभावनार्थक (सकै ७), भूतकालिक (सका २)

इस क्रिया के सभी संयोग पूर्वकालिक रूपों के साथ हुए हैं और शक्यता का अर्थ प्रकट हुआ है ।

काढ़ि सकई सा. १५.८५.२ काढ़ि न सकई कोइ (कोई निकाल नहीं सकता)

पैसि सकई सा. ३०.७.२ पैसि न सकई (बैठ नहीं सकता)
 उड़ि सकत प. ७५.८ उड़ि न सकत (उड़ नहीं सकता)
 लूटि सकै प. ७२.४ लूटि सकै नां (लूट नहीं सकता)
 सुनि सकै सा. २.१७.२ न सुनि सकै (नहीं सुन सकता)
 सम्हालि सकै सा. १६.१०.२ सकै तौ समुंद सम्हालि (यदि संभाल सके तो समुद्र संभाले)
 मेटि सकै सा. ८.८.२ मेटि न सकै (मिट नहीं सकता)
 आइ सकै सा. २.३२.१ आइ न सकै (आ नहीं सकता)
 पिछांनि सका चौ. ४१.१ सका न—पिछांनि (पहचान नहीं सका)

१६. पाना (४)

वर्तमानकालिक (पावै १); भूतकालिक (पावा, पाई ३)
 इस क्रिया के संयोग पूर्वकालिक रूप के साथ तथा क्रियार्थक संज्ञारूप के साथ हुए हैं। र. १६.४ में पावा के स्थान पर पारा का प्रयोग हुआ है—छोरि नहि पारा (छोड़ नहीं पाया)

इस क्रिया से सामर्थ्य बोधक अर्थ प्रकट हुआ है।

पूर्वकालिक रूप + पावै, पावा, पाई (३)

पकरि पावै प. ३४.१३ पकरि न पावै (पकड़ नहीं पाता)
 खोजि पावा र. ६.१ कुदरति खोजि नहि पावा (कुदरत को खोज नहीं पाए)
 जानि पाई सा. २.३५.१ मैं पाई जानि (मैं जान सकी)

क्रियार्थक संज्ञारूप + पावा (१)

बिछुरन पावा चौ. २८.१ न बिछुरन पावा (छूटने नहीं पाया)

१७. बनना (१)

इस क्रिया का एक स्थान पर पूर्वकालिक रूप के साथ संयोग हुआ है।

आइ बन्यौ प. १३५.७ औसर आइ बन्यौ (अवसर आ बना)

२.४.८.२ : तीन क्रियाओं के संयोग से प्राप्त रूप (६) :

कहता जात है सा. ३.२५.१ कबीर कहता जात है
 कहता जात हूं सा. ३०.१५.१ कबीर कहता जात हूं
 चाला जाइ था सा. ४.१४.१ कबीर चाला जाइ था
 लागा जाइ था सा. १.१४.१ पाछै लागा जाइ था
 लियौ है भोग प. ७५.४ पुहुप का लियौ है भोग
 लाइ दिए हैं प. ३६.४ लाइ दिए हैं

होन चहत है सा. २५.१८.२ होन चहत है दास
 उड़ाइ लै गयौ सा. १६.३७.२ लै गयौ सभै उड़ाइ
 बहि जान दे सा. १५.८६.१ बहते को बहि जान दे

२.४.८.३ : उपर्युक्त संयुक्त रूपों के अतिरिक्त कुछ संयुक्त क्रियारूप ऐसे भी हैं जिन्हें रूप-रचना की दृष्टि से उपर्युक्त वर्गों में रक्खा जा सकता है; किन्तु अर्थ की दृष्टि से उनमें बिलकुल भिन्नता है। इन्हें मुहावरेदार प्रयोग कह सकते हैं। इस प्रकार का अध्ययन शैलीगत अध्ययन (स्टाइलिस्टिक स्टडी) के अन्तर्गत आता है। यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

भड़ि बांधी सा. २२.१०.१ पारब्रह्म बड़ मोतियां भड़ि बांधी सिखरांह
 भख मारि सा. १५.१२.२ पीवैगा भखमारि (अवश्य पिएगा)
 डूबि मरहि प. १६६.८ पांडे डूबि मरहि
 धरि मूंदे प. ६६.२ नऊं दुवार नरक धरि मूंदे (बंद कर दिया)
 बूड़ि मुएहु प. ६६.६ बूड़ि मुएहु विनु पानीं
 लै उतरै सा. ५.५.२ किरपा करै लै उतरै मैदानि
 लै बांध्यौ प. ४१.६ लै बांध्यौ जीव दरबारी (साथ रख लिया)
 लै बूड़ै सा. ४.३१.२ यौ लै बूड़ै ग्यान

२.४.८.४ : क० ग्रं० में उत्तरपद वाली क्रियाएँ संज्ञा तथा विशेषण के साथ भी संयुक्त हुई हैं। इस प्रकार बने हुए नवीन क्रियारूपों की अपनी अर्थविशिष्टता पाई जाती है, यद्यपि इन नवीन संयुक्त रूपों के स्थान पर एक ही क्रिया के रूप से काम चल सकता था। जैसे—बारि करै के स्थान पर सींचै, सेवा करै के स्थान पर सेवै, भूख लागी के स्थान पर भुखायौ आदि रूप बन सकते थे और इस प्रकार के संयुक्तरूपों का अर्थ देने वाले एक ही क्रियारूप का प्रयोग भी क० ग्रं० में हुआ है; किन्तु संज्ञा और विशेषण के साथ संयुक्त रूप भी प्राप्त हुए हैं। संज्ञा के साथ २३८ और विशेषण के साथ ८५ संयोग प्राप्त हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

(संज्ञा) असीस देइ सा. ३१.५.१
 आगि लाई सा. २.५०.१
 आदर करै सा. ४.४२.२
 परा काम सा. २५.२३.२
 केलि कराहि सा. ६.३४.१
 क्रिपा करी सा. १.१६.२
 खुसी होइ सा. ११.५.२
 खिमां करि चौ. ७.२

चोरी करी सा. १५.५८.१

भगव किं चों. १४.२

डर लागै चों. १८.२

ताड़ी लागी प. १४५.५

दरसन दीजै चों. २३.२

घाह दै सा. २.५३.२

नेह करि चों. १०.१

परचा भया सा. ६.२४.२

करै पुकार सा. १६.३४.१

पुनि करै सा. ३.११.२

बंदन करै प. २३.८

विचार करि र. २.६

चारि करै प. ८३.५

भूख लागी प. ७५.७

पाड़ी भोल सा. १.१८.१

मानि करै सा. १५.८१.२

रुसवां होइ र. १७.१०

लज्जा करै सा. ३०.२३.१०

लालच करिया र. १८.२

लौ लाइ सा. ५.१.२

लौ लावै चों. ३४.१

सदकै किया सा. १.२०.१

करि सनमान र. १६.५

करइ सहाइ सा. ८.३.१

सुधि लहै चों. २८.२

सेवा करै प. ८२.६

(विशे०) भया उदास सा. १५.७.२

होइ खीन चों. ७.२

जरजर होइ सा. ३.४.१

कियौ घीरा चों. १७.१

किया नीका प. ३६.७

भारी होइ सा. १५.७६.२

भला करैगा सा. २.१४.२

विसवा	सरसा रहै सा. ३०.१६.२
विस्तार	सीतल करै सा. १५.७५.२
विसुष	सीतल भया सा. १७.१.१
व्याह	सांचा भया सा. १४.८.२
व्यौसाइ	हींन पड़ै प. ६३.६
व्यौहार	हरियर होइ सा. १३.१.१
भरम	: दो क्रियाओं के साथ संयोग—
मौन	उतरि पारि गए प. २०.६
लुबध	गुसल करदन बूद प. ८७.७
संतोष	काजर दिया जाइ सा. ११.१३.१
हठ	थिर रहा है प. १०४.६
	न्यारा होइ रहु प. १४.४
	लेखा करता जाइ सा. २१.१६.२
क	रहा सिर कूटि सा. १७.६.२
(१२), -ह	लेत है सींचा र. ७.४
-हारौ (२), -ह	: दोहरे पदों से युक्त संयोग—
इनमें -ई	दूक दूक होइ जाइ सा. २६.११.१
का	नन्हं करि करि सा. २६.१७.१
हा	पुरिजा पुरिजा होइ रहा सा. १४.१२.२
	लीर लीर लोई भई सा. २४.१७.२

नमूनलखित उदाहरणों में संयुक्त क्रिया के रूप संभव थे, किन्तु केवल क्रिया का अर्थ सम्पन्न हुआ है :—

-हा लहाड़ी मारिआ गाफिल अपनै हाथि सा. १५.२६.२ में गाफिल के हाथ का पूर्वकालिक रूप संभव था, जिस प्रकार गाफिल होइ कै प. -हा मुक्त हुआ है। इसी प्रकार जीवन मुकुत अतीत सा. १२.८.७ में मुकुत का पूर्वकालिक रूप (होइ) और कदली कंवल प्रकास सा. ६.३५.१ में हुआ अथवा भए रूप संभव थे।

-हार -हार २.४.६ : नामधातु :

-हार में कुछ संज्ञा और विशेषण पदों का (क्रियापद बनाने के लिए) प्रयोग हुआ है। इन्हें नामधातु कह सकते हैं। रूप-रचना की दृष्टि से इन प्रयोग किए क्रियापदों का विवेचन यहाँ नहीं किया गया है, क्योंकि जो रूप क्रियाओं के प्रत्ययों से प्राप्त हुए हैं, जिनका उल्लेख विभिन्न प्रकार

को क्रियाओं के साथ किया जा चुका है। यहाँ केवल संज्ञा और विशेषण से बने हुए क्रियारूपों का उल्लेख किया गया है—

संज्ञा और विशेष०

अथवा नामधातु	क्रियारूप	संदर्भ	अर्थ
अनुराग	अनुरागी	प. १३४.३	अनुरक्त हो गई
अधिक	अधिकाइ	प. ६.२	बढ़कर
आराधना	आराधा	र. १.६	आराधना किया
आदर	आदरै	सा. ११.१५.२	आदर करता है
खीन	खीनां	प. १०२.७	धीरा हो गया
गरब	गरवानां	प. ७६.५	गर्ब किया
ध्यान	ध्याया	प. १४७.७	ध्यान किया
नांग	नांगें	प. १७४.१	नग्न रहने से
निंदा	निंदउ	सा. ३३.२.२	निन्दा करें
	निंदाहि	प. १६७.४	निन्दा करते हैं
	निंदई	सा. २३.१.१	निन्दा करता है
	निंदा	सा. ३३.७.२	निन्दा किया
	निदिण	सा. २३.३.१	निन्दा कीजिए
		२३.७.१, ४.११.१	निन्दा करते हो
निस्तार	निस्तरिया	प. १२२.८	निस्तार किया
न्यौता	न्यौति	प. १३१.८	न्यौता देकर
पियार	पियारी	सा. ४.३०.१	प्यार किया
	पियारै	सा. ११.१६.२	प्यार करता है
परकास	परकासै	प. ११२.२	प्रकाशित करता है
प्रकास	प्रकासै	प. १५७.८	प्रकाशित करता है
	प्रकासिया (४ बार)	सा. ६.७.१	प्रकाशित किया
	प्रकासी	सा. १.१६.१	प्रकाशित हुआ
प्रगट	प्रगटा	सा. ६.२८.२	प्रकट हुआ
बनिज	बनजिया	सा. १.११.२	खरीदा
वरन	वरनिण	सा. ८.५.१	वर्णन कीजिए
बिलंब	बिलंबा	सा. २.३७.१	विलंब किया
	बिलंबिया	प. ११६.७	विलंब किया
		सा. ६.१३.२	

विसवास	विसवासा	प. ११३.८	विश्वास किया
विस्तार	विस्तरहि	प. १५५.७	विस्तार करते हैं
विसूध	विसूधा	र. १२.७	विशुद्ध किया
व्याह	व्याहि	प. ११०.६	विवाह कर लो
	व्याही	प. ११०.४	विवाह किया
व्यौसाइ	व्यौसाई	प. १६४.३	व्यवसाय करेंगे
व्यौहार	व्यौहारै	प. १५५.१०	व्यवहार करते हैं
भरम	भरमैं	प. १५३.५	भ्रमते हैं
मौन	मौनां	र. ६.२	मौन साधे हैं
लुब्ध	लुब्धिया	सा. ६.१७.२	लुब्ध हो गया
संतोष	संतोखिए	सा. १.१.२	संतुष्ट करें
हठ	हठि	प. ८३.५	हठ करके

२.४.१० : कर्तृवाचक संज्ञा :

क० ग्रं० में कर्तृवाचक संज्ञा बनाने वाले -काजा (१), -हार (१५), -हारा (१२), -हारि (१), -हारी (२), -हारु (१), -हारे (१), -हारै (४), -हारो (१), -हारौ (२), -वार (१), -वारे (३) प्रत्यय संयुक्त हुए हैं। इनमें -ई रूप स्त्रीलिंग और -ए विकृतरूप के हैं।

-काज+आ	पुरवन काजा	प. ४७.४
-हार	ढोलन हार	सा. १२.६.१
	पूजन हार	सा. ६.१४.२
	रचन हार	सा. ३२.४.१
-हार+आ	गावन हारा	प. १२२.६
	जियावन हारा	प. १०६.२
-हार+इ	पनिहारि	सा. ४.१०.२
-हार+ई	जनमावन हारी	प. १६०.३
	पोतन हारी	प. ५१.६
-हार+उ	बोलन हारु	प. १२६.३
-हार+ए	रोवन हारे	सा. १६.२३.१
-हार+ऐ	परखन हारै	सा. १८.२.२
	राखन हारै	सा. १५.५४.१
-हार+ओ	जोड़न हारो	प. ११३.६
-हार+औ	जानन हारौ	प. १७६.२

	राखन	हारौ	प. २६.६
-वार	रखवार		प. १६२.३
-वार + ए	रखवारे		प. २१.५, १६२.४, १८८.७

उपर्युक्त प्रत्ययों के बिना भी केवल क्रियार्थक संज्ञारूप से कर्तृवाचक संज्ञा के दो उदाहरण प्राप्त हैं—

नरक उधारन नाउं आहि प. १४६.१० (उधार करने वाला)

मोड गजराज राजकुल मंडन प. १७३.३ (मंडन करने वाला)

संस्कृत के तत्सम रूप के समान कर्तृवाचक संज्ञारूप भी प्राप्त हैं—

-ता करता (करने वाला) प. ८७.७, ११५.१०, १५८.१ १५८.१०, १६१.७,
१८२.१, सा. ६.५.१, ८.४.२, १०.१२.१, २१.३१.
१ २६.६.२, ३०.७५.१, र. १०.१

ग्याता (जानने वाला) प. १३८.७

चीता (चेतने वाला) प. १०७.५

दाता (देने वाला) प. ३.१, ४२.७, ४५.६, ११८.३, १३६.५, १६५.७,

१६६.५, सा. ४.५.२

वेता (जानने वाला) प. १४४.१०

भावता (अच्छा लगने वाला) सा. २.२६.२, २.२८.१, ४.२६.१

मिलता (मिलने वाला) सा. २४.१८.१ (अनमिलता कौ संग)

रमता (रमने वाला) प. १४२.१० (कहै कबीर रमता सौ रमनां)

हरता (हरण करने वाला) प. १६१.७

क्रियाविशेषण तथा अव्यय

२.५.१ : क० ग्रं० के सभी क्रियाविशेषण वस्तुतः संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया में थोड़े परिवर्तन के साथ अथवा कभी-कभी उसी रूप में अपनी स्थिति अथवा वितरण (डिस्ट्रीब्यूशन) के कारण क्रियाविशेषण बच गए हैं। इन क्रिया-विशेषणों का वर्गीकरण अर्थ की दृष्टि से किया गया है।

२.५.१.१ : एक पद वाले क्रियाविशेषण :

२.५.१.१.१ : कालवाचक क्रियाविशेषण :

अंत प. २२.५, अंति (१२ बार) सा. १५.४.२ इत्या०

अगमन सा. १५.१०.२ अगमन कस न खुराइ

अव (४५ बार) प. ७१.१ इत्या०, अवहि प. १६०.७

अवलि प. १८४.३, अव्वलि प. १८५.३ अव्वलि अल्लह नूर उपाया

असरार सा. ३.४.१, असराल प. ८३.७, असरारा र. ६.६

अजहुं (२ बार) प. ६२.६ इत्या०, अजहुं (१३ बार) प. २३.६ इत्या०

आज प. ७.५, आजि (२ बार) सा. १६.२७.१ इत्या०, आजु (५ बार) सा.

१६.२४.१ इत्या०, आजुहि सा. १६.२४.२

आगां सा. ३१.२०.१

आदि प. १८.३, सा. २०.१.२ रहौं अति अरु आदि

कदे (६ बार) सा. २४.१६.१ इत्या०

कव (८ बार) प. १५.१ इत्या०, कवहुं (१२ बार) प. १६६.५ इत्या०, कवहुं

(२ बार) सा. ३.४.२ इत्या०, कवहुं (१२ बार) सा. ११.१४.२ इत्या०

काल्हि (१५ बार) सा. १५.१०.२ इत्या०

कोइ (विशिष्ट प्रयोग) सा. १५.७६.१ पर कौ नवै न कोइ (कभी)

जद सा. ६.६.१

जब (१६ बार) सा. १५.३७.२ इत्या०, जबहीं (२ बार) प. १६६.६ इत्या०

जनमि (विशिष्ट प्रयोग) सा. २६.८.१ जो जनमि न देइ जबाब (जन्मभर)

तब (३६ बार) प. ३८.२ इत्या०

तुरत प. २.४, २६.६

दाइम प. ८७.८ करि फिकिर दाइम लाइ चसमैं

नित (१० बार) प. १२२.६ इत्या०, नित्त (२ बार) सा. २.१७.१ इत्या०

नीत सा. ११.२.२, १६.१८.२

निदांन सा. १४.३२, निदांनि सा. ३०.१.२

निरंतर सा. ६.१६.१, २०.८.१

निसहिं (वि० प्र०) सा. १६.२७.१ आजि कि काल्हि कि निसहिं मैं

पलक सा. ११.१४.२ पलक न छाड़ै पास

परौ सा. १५.२३.२ काल्हि परौ भुइं लोटनां

पहिले (४ बार) र. २.१ इत्या०, पहिलै (२ बार) सा. ३.१०.१ इत्या०

पिछै प. ११६.३, पीछै (३ बार) सा. १५.३८.२ इत्या०

पुनि र. १७.६, फुनि सा. २६.१६.२, र. १८.१

फिर प. ३०.४, फिर (११ बार) सा. ६.३०.२ इत्या०

बहुरि (१५ बार) सा. १५.५.२ इत्या०, बहोरि सा. १५.१८.२

बेगि सा. २.४५.२, बेगै सा. ३.२३.२

संतति प. ४०.७

सदा (१३ बार) प. ३३.५ इत्या०, सरवदा प. ३४.२

निम्नलिखित कालवाचक क्रियाविशेषण (एक दूसरे के साथ आकर) दो वाक्यों अथवा वाक्यांशों को जोड़ते हैं। कभी-कभी उनमें से एक क्रियाविशेषण लुप्त भी रहता है। कहीं-कहीं सार्वनामिक विशेषण क्रियाविशेषण के स्थान पर प्रयुक्त हुआ है। कोष्ठक में पूरी आवृत्तियाँ और एक उदाहरण देकर नीचे इनके प्रयोग उल्लिखित हैं—

कब.....कब (२) सा. १४.२.२

कब.....जब (१) प. १२३.६

जब.....कदे (१) सा. ६.६.१

जब..... (८) सा. ६.३१.१

तब..... (१७) र. ५.२

जब.....तब (२६) सा. ३२.६.२

तब.....जब (३) सा. १५.८७.२

जब.....तौ (३) सा. ४.२६.२

तौ (२) प. १०७.६

तब.....जौ (२) सा. १७.२.१

जब(लग)...तब(लग) (१२) सा. २५.

२०.२

जब(लगि)... (६) प. ८२.५

तब(लगि)...जब(लगि) (१) प. ८८.५

तबै(लगि)...जब(लगि) (१) प. ५४.५

जब.....सो (१) प. ६८.२

जब.....ता (१) प. ७४.५

कब मरिहौ कब भेटहौ

तन नाहीं कब जब मन नाहीं

जद का नाई जनमिया कदे न पाया
सुख

जब मन धरिया ध्यान

तब नहि होते तुलक न हिंदू

जब मांगै तब देइ

कहै कबीर तब पाइए जब भेदी लीजै
साथि

जाइ परै जब गंग मैं तौ सब गंगोदिक
होइ

तौ नाहीं व्यापै तीन्यू ताप

सीतलता तब जानिए जौ समता रहै
समाइ

जब लग हरि प्रगटै नहीं तब लग
पतड़ा हाथि

जब लगि जुगुति न जानिअै

तब लगि प्रांनौ तिसै सरेबहु जब लगि
घट मंहि सांसा

तबै लगि कहिए जब लगि तत्त न जानां

जब दस मास... ..सो दिन काहे भूले...

जब जम आइ.....ता दिन कछु न
बसाइगा

जबै (१) प. १४३.४
 जबहि..... (१) सा. ३१.२३.२
 जबहीं.....तब (२) सा. २.३५.१
 जबहीं.....तबै (१) चौं. ३६.१
 तबहीं.....जौ (१) सा. १५.११.२
 तउ..... (२) प. १३२.८

सिव सकती कै.....जबै जोग हम सीखा
 ए सबहीं.....जबहि कहा कछु देहु
 जबहीं मारा.....तब मैं पाई जानि
 जबहीं होइ तबै मन मानां
 मुख तौ तबहीं देखिए जौ दिल की
 दुविधा जाइ
 तउ सदा सहजि लिव लीनां

२.५.१.१.२ : स्थानवाचक क्रियाविशेषण :

अंतरि (३ बार) प. ११२.२ इत्या०
 अनत (४ बार) सा. ६.३४.२ इत्या०
 आनां (१) चौं. १६.१ ढढा ढिग ढूढ़हि कत आनां
 आगां सा. १४.१७.२, आगे सा. २०.२.१, आगें (६ बार) सा. ८.१५.१ इत्या०
 इत सा. १०.३.२, १५.५६.२
 इहई प. १७७.१२, इहां प. ६६.६, १६२.४
 उत सा. १०.३.१, ऊत सा. १५.५६.२
 उपरि प. ११६.६, ऊपरि सा. १५.२३.२, ऊपरै प. ३४.५
 उहवां प. १२५.४, ऊहां प. १३०.१२, सा. २६.१६.२
 कतहुं (३ बार) चौं. ८.२ इत्या०, कतहूं (३ बार) प. १०.७ इत्या०
 कहं (५ बार) सा. १०.६.१ इत्या०, कहां (२६ बार) सा. ११.१३.२ इत्या०
 कहूं सा. २८.५.२, कहूं (२ बार) सा. १६.३६.२ इत्या०
 जहं (१३ बार) सा. ६.१७.२ इत्या०, जहां (६ बार) प. १३०.१० इत्या०
 ढिग चौं. १६.१ ढढा ढिग ढूढ़हि कत आनां
 तले प. ३४.५, तलि (७ बार) प. ११६.६ इत्या०
 तहं (४ बार) प. ४.१ इत्या०, तहां (२४ बार) सा. ६.२१.२ इत्या०,
 तहियां प. ११३.५
 दूर (३ बार) सा. २०.२.२ इत्या०, दूरि (१४ बार) सा. २३.५.१ इत्या०,
 दूरी प. ६६.७, दूरहि सा. ४.२६.१
 निकटि (५ बार) सा. १४.१५.२ इत्या०
 नियरा चौं. १७.१, नियरे र. ६.८, नियरै प. १३४.५, नेरा (२ बार) र. १४.३
 इत्या०, नेरै (३ बार) सा. २३.४.१ इत्या०
 पाछें (७ बार) सा. १३.१.१ इत्या०, पीछें सा. १४.८.१
 पार प. १२४.५ पैली पार का पारधी

पासा चौं. १२.१, पासै सा. ३०.७.१

परतखि सा. ३०.३.२, प्रतखि प. १८७.१०

फरंकि सा. १.१०.२ उतरि परा फरंकि

बाहर (२ बार) प. ८६.६ इत्या०, बाहरि (१५ बार) सा. ६.३७.२ इत्या०

बीचि प. ३.५ कागद की नौका बनीं बीचि लोहा भारा

भीतर (२ बार) र. १०.४ इत्या०, भीतरि (६ बार) सा. २५.२३.१ इत्या०

माहिं (वि० प्र०) प. ८६.६ पहरचौं काल...माहिं लिखे भ्रम ग्यानीं

यहीं प. ६४.६

सनमुख सा. ८.२६.१

हजूर (२ बार) सा. १४.८.२ इत्या०, हजूरि (३ बार) सा. ३२.१४.२ इत्या०

दो वाक्यों या वाक्यांशों को जोड़ने वाले स्थानवाचक क्रियाविशेषण—

कहीं.....कहीं (१) सा. १५.८.१

जहं.....तहं (५) सा. २७.३.२

जहं.....तहंई (१) प. १६६.६

जहं जहं.....तहीं (१) प. ३१.५

जहं.....तहां (१) चौं. ३.१

जहांतहं (६) सा. १५.३३.१

जहां.....तिहिं (१) सा. १७.४.१

जित.....तित (२) सा. ३.६.२

तहं.....जहं (१) सा. २०.११.१

तहां.....जहं (१) सा. १८.१२.१

तहां.....जहां (६) सा. ६.५.२

जिहिंतहां (१) सा. १०.४.२

तिहिं.....जहं (१) सा. १७.४.२

वस्तु कहीं खोजै कहीं

जहं विगंध तहं जाइ

जहं ते उपजे तहंई समानें

जहं जहं जाइ तहीं सचु पावै

जहं अबोल तहां मन न रहावा

जहां लोभ तहं पाप

जहां जुरा...चलि कबीर तिहिं देस कौं

जित देखौं तित तूं

मरनां तहं भला जहं आपनां न कोइ

हीरा तहां न खोलिए जहं कुजड़न की हाटि

तहां कबीरा बंदगी जहां.....

जिहिं बन.....तहां रहा कबीरा...

चलि कबीर तिहिं देस कौं जहं...

२.५.१.१.२.१. : संज्ञा के समान प्रयुक्त स्थानवाचक क्रियाविशेषण :

अरघै उरध (नीचे, ऊपर) चौं. २४.१

अरघै उरध (नीचे, ऊपर) चौं. २४.२

अरघै उरधै (नीचे का ऊपर में) चौं. २४.१ अरघै उरधै मांझि वसेरा

अरधहिं उरध (नीचे में ऊपर) चौं. २४.२ तौ अरधहिं उरध मिला मुख पावा

२.५.१.१.३. रीतिवाचक क्रियाविशेषण :

सामान्य रीतिवाचक क्रियाविशेषणों के अतिरिक्त निषेधात्मक, कारणवाचक

आदि इसके अन्य उपभेद भी प्राप्त होते हैं—

२.५.१.१.३.१ सामान्य रीतिवाचक :

- अकारथ प. ७३.१०, १००.६ जनम अकारथ जाइ
 अचानक सा. १५.२.२
 अस प. १३१.२
 आदर (वि० प्र०) सा. १६.१५.२ हरि आदर आगैं लिया
 उलटि प. ७१.६, उलटी प. १२२.३, उलटै प. १२२.६
 असा (७ बार) सा. १५.५२.१ इत्या०, असी सा. १४.१.१., १६.१७.१
 असें प. १२७.२, असें चौं. ३४.१, असें सा. ७.१.२.
 ऐंड़ौ प. ७३.२ ऐंड़ौ टेढ़ौ जात
 औंचितांह सा. १६.२७.२ औंभड़ औंचितांह (मारगि)
 कस र. ७.६, किमि र. १६.८, कैसे (४ बार) प. १२.३ इत्या०, कैसे प. १२०.१,
 कैसे (६ बार) प. २६.५ इत्या०
 खार सा. २१.२२.१ तूं जनि खोवै खार
 गाढ़ी प. १६५.३ कसि कसि बांधै गाढ़ी
 जस (८ बार) प. ७८.३ इत्या०, जैसा प. १३४.५, जैसी सा. १५.८.१, जैसै
 (४ बार) प. १५.५ इत्या०, जैसै (७ बार) प. १८.५ इत्या०
 ज्यूं (४ बार) प. २२.६ इत्या०, ज्यों (२४ बार) प. ४६.३ इत्या०
 जिहि (वि० प्र०) सा. ३४.१.२. जिहि सहजैं बिखिया तजै
 सा. ३४.२.२ जिहि सहजैं साहिब मिलै
 झूठा प. ८६.१, झूठे (२ बार) र. १४.१ इत्या०, झूठे (२ बार) प. १७१.३ इत्या०
 टेढ़े (३ बार) प. ६६.१ चलत कत टेढ़े टेढ़े टेढ़े, टेढ़ौ प. ७३.२ ऐंड़ौ टेढ़ौ जात
 ठौर (वि० प्र०) सा. १५.३६.२ बिगरी बात न बाहुरै कर छूटनि की ठौर
 तैसी सा. १५.८.१ तैसी निबहै ओरि
 तुरावा र. १५.४ दिन आइ तुरावा
 दुहस प. १७२.४ दुहस रहै
 धोरै सा. ४.३१.२ धोरै बैठि
 नितारै प. १३६.३ छांड़ि चले नितारै
 निहचै प. ६६.८, १६५.८ निहचै भगति निवासा
 नेक प. १४६.२ नेक निचोइ
 बलाइ प. ५५.६ दुख करि रोवै बलाइ
 बादि (५ बार) सा. २६.१५.२ इत्या०, बादु प. ८७.५ बेखबर बादु बकार्हि
 बिरथा प. ८८.२ बिरथा जनम गंवाया
 बेगि (३ बार) प. २६.५, १२७.४. सा. २.४५.२ बेगि मिलौ, बेगे सा. ३.२३.२

वेगे लेहु बुभाइ

भल प. १३६.४, १८६.६ भल जानां, भनी प. २१.३, सा. ६.३.१ भली भई
मांनों प. ३१.२ सा. ४.३६.२, ६.१५.१

माल्हंतांह सा. १६.२७.१ मारगि माल्हंतांह
यूं सा. २०.३.२, यों (१६ बार) प. १३२.२ इत्या०

सहज प. ८६.८, १८१.५, सहजहि प. ४.७, सहजि प. ५३.५, सहजै
सा. १८.१२.२, सहजै (६ बार) प. ३४.१४ इत्या०

सही प. १२४.७, चौं. ३८.१, ३६.२

मुभाइ प. ७७.६, सा. २१.२५.१

सूभर प. ५०.३, १२२.७

दो वाक्यों या वाक्यांशों को जोड़ने वाले रूप—

असै.....जस (१) प. १६.६ हरिजन हरि साँ असै मिलिया जस सोनै संग
सुहागा

कसै.....जसै (१) प. १८.१ लागी कसै छूटै जसै हीरा फोरे न फूटै

जैसा.....त्यौं (१) प. ६७.६ जैसा रंग कुसुंभ.....त्यौं पसरयौ पामार

जैसी.....तैसी (१) सा. ३३.६.१ जैसी मुख तै.....तैसी चालै नाहि

जैसै.....असै (३) प. ५७.७ जैसै जलहि.....असै हम दिखलावहिगे

जैसै.....असै (१) प. १८.४ जैसै कंवल पत्र.....असै तुम साहेब हम दासा

जैसै.....तस (१) प. ३४.७ जैसै सीप.....तस साहेब दासा

जैसै.....यूं (१) प. १४१.४ फूलनि मैं जैनै रहत वास यूं घटि घटि गोविंद है...

जैसै.....यौं (१) सा. ३.२१.१ जैसै मायायौं जे रांम रमाइ

जैसै.....त्यौं (१) प. २००.४ जैसै जल.....त्यौं दुरि मिल्यौ जुलाहो

ज्यौं.....ज्यौं (१) प. १३.६ ज्यौं.....कांमिनि.....ज्यौं प्यासे कौ नीर रे

यौं.....जैसै (१) प. ६४.८ कहै कबीर काल यौं मारै जैनै मृग कौ.....

ज्यौं.....त्यौं (६) प. ७.२ ज्यौं भावै त्यौं होहु हमारे

ज्यौं.....यौं (१) सा. ६.८.१ ज्यौं मेरा मन.....यौं जो तेरा होइ

ज्यौं.....यहु (१) प. ६७.८ ज्यौं ललनीं.....यहु व्योहार

यौं.....ज्यौं (२) सा. १६.१.२ दास कबीरा यौं मुवा ज्यौं बहुरि न

ज्यौं ज्यौं.....त्यौं त्यौं (३) सा. १४.२२.१ ज्यौं ज्यौं हरि गुन..... त्यौं त्यौं...

त्यौं.....ज्यौं (१) सा. १.५.२ भावै त्यौं परमोधिण ज्यौं बांमि वजाइए फूंक

२.५.१.१.३.२ निषेधवाचक :

जन प. १३६.५, जनि (१० बार) सा. १५.२५.१ इत्या०, जिनि (८ बार) -

सा. १५.३१.१ इत्या०

न (५७४ बार) प. ६४.३ इत्या०, नहिं (१२८ बार) सा. १५.४८.२ इत्या०,
 नहीं (१०४ बार) प. १०.१६ इत्या०, नां (५१ बार) सा. १५.४४.२ इत्या०,
 नांहि (३६ बार) सा. १५.१५.१ इत्या०, नांहिन प. ७६.२, नांहीं (४३ बार)

सा. १६.१७.२ इत्या०

म प. १०.६, सा. २.६.१, १५.२१.१, २२.७.१ हिया म खीज

मत प. ४४.६, ७०.१, १८३.५, सा. १४.४०.२

मति (२० बार) प. १२४.२ इत्या०

सा. २१.७.२ में 'कहां' का प्रयोग नकारात्मक भाव प्रकट करता है—

जाकी दिल साबित नहीं ताकौं कहां खुदाइ

दो वाक्यों या वाक्यांशों को जोड़ने वाले रूप—

.....न..... (देहरी दीपक) (३०) प. ६६.५ आवत संग न जात संगीती

.....नहिं... („) (७) प. १३४.४ मरै नहिं जीवै

.....नहीं... („) (२) प. १२३.७ माय नहीं बाप

.....नां... („) (१) सा. २.१५.१ बासुरि सुख नां रैन सुख

न... ..न (८) प. १०७.८ आप न डरउं न और डरावउं

न... ..नां (१) सा. १०.८.१ जहां न चिउंटी...राई नां ठहराइ

न... ..नहिं (२) सा. ३.६.१ जिहि घटि प्रीति न प्रेमरस...रसनां नहिं राम

नहिं.....नहिं.....नहिं (२) प. १८०.३ नहिं तन नहिं मन नहिं हंकार

नहिं.....न (१) र. १४.७ नहिं गमि सुभै बार न पारा

नहीं.....नांहीं (२) सा. ७.७.१ जाकै मुंह माथा नहीं नांहीं रूप कुरूप

नां.....न (७) सा. १.१७.१ नां गुर मिला न सिख मिला

नां.....नां (७) प. ७३.५ नां कोऊ...नां कोऊ लै जात

नां.....न...नां (१) सा. ६.६.१ नां परतीति न प्रेम रस नां इस तन में ढंग

नां.....नांहीं...नां (१) प. ५३.४ नां हम बार बूढ़ नांहीं हम नां हमरै...

२.५.१.१.३.३ : कारणवाचक :

कत (११ बार) प. ३८.३ इत्या०, कहा (२४ बार) प. ३.४ इत्या०, काहे
 (१६ बार) प. २०.८ इत्या०,

काइ सा. ३२.१२.१ सो जन कलपै काइ

काइ सा. २५.३.१ केसौ मूडै काइ

काइ सा. २८.२.२, ३०.६.२ राम कहा तौ काइ, काई गंवावै देह

किन (६ बार) प. २१.१ इत्या०

क्यूं (१२ बार) प. ६८.५ इत्या०, क्यौं (१३ बार) प. २५.१ इत्या०

क्यों.....क्यों (१) सा. ४.११.१ क्यों त्रिपनारी निंदिए क्यों पनिहारी को मान

२.५.१.१.३.४ : परिमाणवाचक क्रियाविशेषण :

अगाध सा. २७.५.१ फूलै फलै अगाध

अति (५ बार) र. १३.१ इत्या०

अधिक र. १३.४ अधिक डेराई, अधिकई प. २०.२ बूझत अधिकई

अपार प. १५५.११ खिअत अपार

आकुल प. ६६.४ आकुल किन्हुं न जानां (पूर्णतः)

आधा प. ५८.६ आधा चलकरि

एकसर प. १६७.४ एकसर दुख पावै

और सा. १४.४.१ पीर पुकारै और

कछु (५ बार) प. ७४.५ इत्या०, कछू सा. २५.६.१, किछु प. १३३.३

खूब सा. २१.३.१ खूब खान है खीचरी

घनेरै प. १३८.४ बाजन बाजु घनेरै

टुक (२ बार) सा. २६.११.१ टुक टुक चोघतां

थोरा सा. ३१.२२.१, थोरी प. ४६.२

बहु सा. (३ बार) १५.५७.१ इत्या०, बहुत (३ बार) र. १७.३ इत्या०,

बहुतक सा. २५.२२.१

पूर प. ६३.३, पूरा प. ५६.२

रंचक सा. १२.२.२, सा. १३.११.१

लेस प. ३४.१२ जिभ्या लेस लागै नहीं

सब प. ११६.८ सब जरिया

२.५.१.२ : क्रियाविशेषण के समान प्रयुक्त संयुक्त रूप :

क० ग्रं० में दो पदों के मेल से क्रियाविशेषण अथवा उसका अर्थ देने वाले वाक्यांश प्राप्त हुए हैं ।

२.५.१.२.१ : कालवाचक :

अंतकाल प. १६७.३ अंत काल मुख फांकै छारा

अंतकालि सा. १५.४१.२ अंत कालि सूखा परै

अंतिकाल र. १५.४ अंतिकाल दिन आइ तुरावा

अंत समय (४ बार) प. ६४.६ अंत समय चलि रीता रे

अह निसि प. १२८.३ अह निसि कालचक्र सौं भिरै

आठ पहर सा. २.४०.२ आठ पहर का दाभनां

आठौं पहर सा. २४.१०.२ आठौं पहर उपाधि

इक दिन सा. ३.२.२, १६.३५.२ इक दिन ऐसा होइगा
 इक निमिख प. ४०.४ इक निमिख न यह मन लाया
 खिन महि (५ बार) प. ६५.८ खिन महि करै निवेरा इत्या०
 घरी घरी प. ४१.२ घरी घरी का लेखा मांगै
 चारि दिन प. १००.१ चारि दिन.....चले बजाइ
 चारि दिवस सा. १६.१४.२ चारि दिवस के पाहुने
 छिन छिन (२ बार) सा. २.२५.१, चौं. १२.२ छिन छिन समुभावा
 छिन महि प. ६६.६ छिन महि बिलांनी रे
 जदि तदि सा. २.२८.१ जदि तदि मिलिहै आइ
 जनम जनम प. १८८.७ जनम जनम रखवारे
 जनमि जनमि र. ८६.७ जनमि जनमि उरभेरा
 जुग जुग प. १६०.६ मैं जुग जुग जीऊं
 जुगन जुगन प. १४५.७ जुगन जुगन की त्रिखा बुझांनीं
 दिन दिन सा. २६.१०.२, ३१.१३.१ दिन दिन अघिकी लाइ
 दिन ही दिन प. ८६.१ जाइ रे दिन ही दिन देहा
 दिन दस सा. १५.३.१, १५.४६.२ दिन दस लेहु बजाइ
 दिन राति सा. ३.१६.२ तब सोवैगा दिन राति
 दिनां चारि प. ७५.५ दिनां चारि के सुरंग फूल
 दिवसहु संभा प. ७२.३ गढ़ लूटहि दिवसहु संभा
 दिवस दोइ सा. १५.४५.२ टेसू फूले दिवस दोइ
 दिवस चारि (४ बार) सा. १५.५५.२ दिवस चारि का पेखनां इत्या०
 दूजी बार सा. २६.२१.२ मिला न दूजी बार
 नित नित र. ८४.५ नित नित मेडुक न्हावै
 नित प्रति सा. ४.२२.१ नित प्रति कीजै जाइ
 निस घांम सा. २.४८.१ रहट बहै निस घांम
 निसि जांम सा. २४.२४.१ जग जांचा निसि जांम
 निस दिन (३ बार) सा. २.४७.१ निस दिन निरखूं तोहि इत्या०
 निसि बासुर (३ बार) सा. ६.२८.२ निसि बासुर सुखनिधि लहा इत्या०
 पचे दिन सा. १५.६७.१ आजु कि काल्हि कि पचे दिन
 पल पल (३ बार) प. ६८.५ पल पल आउ घटै इत्या०
 पल मैं (३ बार) सा. ३.१०.२ कोटि करम फिल पलक मैं इत्या०
 पल भरि प. ६२.२ पल भरि रहन न पावै
 फिर फिर प. १४७.६ फिर फिर भटका खाया

फिरि फिरि प. ३६६ फिरि फिरि लपटाई
 फुनि फुनि प. ४०.६ आवागमन होत है फुनि फुनि
 बार बार (५ बार) सा. १५.४८.२ बार बार नहिं पाइए इत्या०
 बारंबार (४ बार) सा. १२.६.२ प्रेमरस पीवै बारंबार इत्या०
 बारंबारा प. ७२.२ क्या सोचहि बारंबारा
 राति दिवस सा. ३.४.२, २७.६.२ राति दिवस कै कूकनै
 रैन दिन प. १४.२ वजाइ रैन दिन
 हर रोज प. ८७.१ वंदे खोज दिल हर रोज

२.५.१.२.२ : स्थानवाचक :

अभि अंतरि प. ४६.३ अभि अंतरि लेहु विचारी
 अभि अंतर प. १६५.४ चरै अभि अंतर
 अरध उरध प. १३०.११, सा. १.३२.१ अरध उरध बाजारि
 अंगहि अंग प. १६०.८ अंगहि अंग मिलावा
 आगै आगै सा. १३.१.१ आगै आगै दौं जरै
 आसि पासि प. १३१.११ आसि पासि घन तुरसी का विरवा
 ऊपरि ऊपरि सा. १५.६७.२ ऊपरि ऊपरि फिरिहिंगे
 घर घर (६ बार) प. ६७.७ नाचेउ घर घर वारि इत्या०
 घरि घरि (३ बार) सा. १.२६.२ घरि घरि मांगै भीख इत्या०
 घट घट (३ बार) प. १५५.१७ घट घट भीतरि मनसा हरै इत्या०
 घटि घटि (२ बार) सा. ७.१.२ असै घटि घटि रांम है इत्या०
 चहुं ओर सा. २५.७.१ मन धावै चहुं ओर
 जत जत प. १८६.२ जत जत देखउं
 जहं जहं प. ३१.५ जहं जहं जाइ सा. ४.८.२
 जहं तहं प. १४५.४ जहं तहं हंसा नजरि परै
 जहां तहां प. ८७.८ जहां तहां मौजूद
 ठाएं ठांइ सा. ४.४.१ आनंद ठाएं ठांइ
 ठावै ठांउं सा. ६.३६.२ फिरता ठावै ठांउं
 डार डार प. ७५.३ तैं वन वन सोध्यौ डार डार
 डारी डारी सा. ६.६.२ डारी डारी मैं फिरौं
 पाती पाती प. १८७.३ पाती पाती जीउ
 पातैं पातैं सा. ६.६.२ पातैं पातैं दुख
 तहं तहं सा. ४.८.२ तहं तहं रांम निवास

दह दिसि (५ बार) प. ७५.६ दह दिसि जोवै मधुपराइ इत्या०
 दहं दिसि सा. ३.२३.१ दहं दिसि लागी
 दहं दिसि चौं ७.१ दहं दिसि धावा
 दसहं दिसा प. १५२.१०, १५७.५ दसहं दिसा रोकै द्वारा
 नगरी नगरी प. १५५.११ नगरी नगरी खिअत अपार
 परबति परबति सा. २.२४.१ परबति परबति मै फिरा
 बन बन प. ७५.३ तैं बन बन सोध्यौ, सा. ४.४३.१
 बावै दाहिनै प. १६६.७ तजि बावै दाहिनै विकारा
 मन ही मन (३ बार) चौं. ३०.२ मन ही मन सौं इत्या०
 रोम रोम सा. २२.१६.२ रोम रोम बिख भरि रहा

२.५.१.२.३ : रीतिवाचक :

२.५.१.२.३.१ : सामान्य रीतिवाचक :

अचित सा. ३२.५.१ चिंता छांड़ि अचित रहू
 अचेत सा. २५.२२.१ फिरै अचेत
 अनभै चौं. ४१.२ पंडित होइ सु अनभै रहै
 अबिरथा प. १६१.८ जनम अबिरथा जाई
 आपहि आप प. १०.४ आपहि आप बंधाइया
 इकतार सा. १५.७४.१ प्रीति रहै इकतार
 एक एक प. ७६.१ एक एक करि जानां
 किहि बिधि (४ बार) सा. ३१.२.२ किहि बिधि राखिए
 कहां तैं प. १३२.३, सा. १०.१५.२ रहनि कहां तैं होइ
 गिरत परत प. ५८.८ गिरत परत चढ़ि ऊंचा
 क्यूं करि सा. २६.१.२ क्यूं करि सकै समाइ
 क्यों करि (३ बार) सा. १५.८७.१ क्यों करि आवै हाथि इत्या०
 खिरत खपत चौं. ४०.१ खिरत खपत गए केने
 भिरमिर भिरमिर सा. २२.६.१ भिरमिर भिरमिर बरखिया
 थर थर प. ७०.३ थर थर कपै
 थिर थिर सा. १६.२५.१ थिर थिर काम करंत
 दरहाला र. १०.१ सिष्टि रची दरहाला
 दुहंघा प. १०२.२ दुहंघा लूटे
 धीरै धीरै सा. १०.१२.२ धीरै धीरै पांव दै
 धूमां धांम सा. २१.१३.२ आइ परे...धूमां धांम

निर्चित सा. १५.१.२ सोबै निर्चित

निचीता प. ६४.७ फिरै निचीता

निबड़क सा. ६.२५.२ निबड़क फिरै, सा. १६.१७.१

निरभै (३ बार) सा. ३.१६.१ कबीर निरभै रांम जपि इत्या०

निसंक (३ बार) सा. १.२७.२ निसंक भजि इत्या०

निहचल सा. १.३१.१ निहचल.....मिलाइ

नीठि नीठि चौं. १७.१ नीठि नीठि मन कीयौ धीरा

बारी बारी सा. १६.१८.१ बारी बारी ... चले

वे कांम सा. ३.६.२ उपजि खए वेकांम

वे खबर प. ८७.५ वेखबर वादु वकाहि

सहजै सहजै सा. ३४.३.१ सहजै सहजै सब गए

हिलि मिलि कै सा. ७.४.२ हिलिमिलि कै गावैं

प. १४७.२ में कहौ न रूप प्राप्त हुआ है जिसमें एक क्रियापद और दूसरा निषेध-वाचक क्रियाविशेषण है। इसमें न का नकारात्मक अर्थ नहीं है, अपितु, निश्चयात्मकता का अर्थ प्रकट होता है—

कहौ न कहां समाया हो

२.५.१.२.३.२ : कारणवाचक :

कस न (३ बार) सा. १५.१०.२ अगमन कस न खुराई इत्या०

काहे कै प. ६०.१ प्रांनीं काहे कै ...जनम खोयौ

काहे कौ (६ बार) प. १४२.२ काहे कौ भरमैं बाहरि

किस लागै प. १६४.८ करम किस लागै

२.५.१.२.३.३ : परिमाणवाचक :

भर पूरा प. १०२.६ रहै रांम भरपूरा रे

भर पूरि प. ३०.४ जिहि घटि रांम रहा भरपुरि

भरिपुरि प. ११५.८ जब कुंभक भरिपुरि लीनां

२.५.२ : अव्यय :

२.५.२.१ : सामान्य अव्यय :

२.५.२.१.१ : समुच्चयबोधक अव्यय :

• क० ग्रं० में समुच्चयबोधक अव्यय दो वाक्यों, वाक्यांशों, शब्दों अथवा शब्द-समूहों को किसी न किसी प्रकार से जोड़ने का कार्य करता है। अर्थ की दृष्टि से उसे संयोजक, विभाजक, विरोधवाचक, परिणामवाचक, उद्देश्यवाचक, संकेतवाचक और स्वरूपवाचक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

२.५.२.१.१.१ : संयोजक :

अरु (२७ बार) प. २५.१० साध की संगति अरु गुर की क्रिपा तैं इत्या०
 (अ)रु प. १८१.५ नाद (अ)रु विंद समानां
 औ (६ बार) प. १०५.४ सूबा बैद औ रोगी इत्या०
 और प. १६५.११, र. ६.४, १४.७, १६.४ लागे लोभन और हंकारा
 पुनि (५ बार) प. ११३.३ नहिं ब्रह्म'ड पिंड पुनि नाहीं इत्या०
 फुनि सा. ३.६.१ जिहि घटि प्रीति न प्रेमरस फुनि रसनां नहिं रांम चौ. २०.१
 फेरि प. १३२.२ जनम मरन दुख फेरि करम सुख
 संग (वि० प्र०) प. १६८.२ सभै मदि माते कोऊ न जाग संग ही चोर घर मूसन
 लाग

२.५.२.१.१.२ : विभाजक :

किंबा प. १०.६ सिधि पाइए किंबा होइ म होइ प. १०.११
 कि (१२ बार) सा. १५.६७.१ आजु कि काल्हि कि पचे दिन इत्या०
 ...कै... (७ बार) प. २८.४ मौन गहै कै हरि गुन गावै इत्या०
 कै...कै (७ बार) सा. १५.२०.२ कै सेवा करि साध की कै हरि के गुन गाइ इत्या०
 नहिं तर (४ बार) सा. ३१.७.२ सतगुर की किरपा भई नहिंतर करती भांड इत्या०
 नाहीं त प. १६१.१० जौ ग्रिह करहि त धरम करु नाहीं त करु वैराग, सा.
 १५.३४.१

नातर सा. ३.२५.२, सा. १४.३४.२ सिर सौपै...नातर पिया न जाइ
 नातर प. १३४.२ गुर परसादि अकिलि भइ अवरै नातर था बेगांनां
 भावै . भावै (३ बार) सा. २५.१.२ भावै लावे केस करि भावै घुरड़ि मुड़ाइ इत्या०

२.५.२.१.१.३ : विरोधवाचक :

तऊ (१६ बार) प. १५५.१४ विद्या कोटि...तऊ पारब्रह्म का अंतु न लहै इत्या०
 पर प. ८८.६ भगति जाउ पर भाउ न जइयौ, प. १२४.८, सा. ३१.१०.२
 परि प. ८३.२ जनम गयौ परि हरि न कह्यौ, र. १२.५
 पै प. ११.४ सेज एक पै मिलन दुहेरा, प. १४६.१, सा. १.१०.१, १४.३०.२

२.५.२.१.१.४ : परिणामवाचक :

तातैं (६ बार) सा. १६.६.२ पांसा परा करीम का तातैं पहिरा जाल इत्या०
 यातैं प. १५७.३ यातैं लौंगहिं फर नहिं लागै
 याही तैं प. १५३.३ याही तैं मोहिं प्यारी लागी

२.५.२.१.१.५ : उद्देश्यवाचक :

जातैं प. ८२.१ रमइया गुन गाइअै जातैं पाइअै परम निधान, प. १४४.२

२.५.२.१.१.१ : संयोजक :

अरु (२७ बार) प. २५.१० साध की संगति अरु गुर की क्रिपा तैं इत्या०
 (अ)रु प. १८१.५ नाद (अ)रु बिंद समानां
 औ (६ बार) प. १०५.४ सूवा वैद औ रोगी इत्या०
 और प. १६५.११, र. ६.४, १४.७, १६.४ लागे लोभन और हंकारा
 पुनि (५ बार) प. ११३.३ नहिं ब्रह्मंड पिंड पुनि नाहीं इत्या०
 फुनि सा. ३.६.१ जिहि घटि प्रीति न प्रेमरस फुनि रसनां नहिं राम चौ. २०.१
 फेरि प. १३२.२ जनम मरन दुख फेरि करम सुख
 संग (वि० प्र०) प. १६८.२ सभै मदि माते कोऊ न जाग संग ही चोर घर मूसन
 लाग

२.५.२.१.१.२ : विभाजक :

किवा प. १०.६ सिधि पाइए किवा होइ म होइ प. १०.११
 कि (१२ बार) सा. १५.६७.१ आजु कि काल्हि कि पचे दिन इत्या०
 ...कै... (७ बार) प. २८.४ मौन गहै कै हरि गुन गावै इत्या०
 कै...कै (७ बार) सा. १५.२०.२ कै सेवा करि साध की कै हरि के गुन गाइ इत्या०
 नहिं तर (४ बार) सा. ३१.७.२ सतगुर की किरपा भई नहितर करती भांड इत्या०
 नाहीं त प. १६१.१० जौ ग्रिह करहि त धरम कर नाहीं त कर वैराग, सा.

१५.३४.१

नातर सा. ३.२५.२, सा. १४.३४.२ सिर सौपै...नातर पिया न जाइ
 नातर प. १३४.२ गुर परसावि अकिलि भइ अवरै नातर था वेगानां
 भावै . भावै (३ बार) सा. २५.१.२ भावै लावे केस करि भावै घुरड़ि मुड़ाइ इत्या०

२.५.२.१.१.३ : विरोधवाचक :

तऊ (१६ बार) प. १५५.१४ विद्या कोटि...तऊ पारब्रह्म का अंतु न लहैं इत्या०
 पर प. ८८.६ भगति जाउ पर भाउ न जइयौ, प. १२४.८, सा. ३१.१०.२
 परि प. ८३.२ जनम गयौ परि हरि न कह्यौ, र. १२.५
 पै प. ११.४ सेज एक पै मिलन दुहेरा, प. १४६.१, सा. १.१०.१, १४.३०.२

२.५.२.१.१.४ : परिणामवाचक :

तातैं (६ बार) सा. १६.६.२ पांसा परा करीम का तातैं पहिरा जाल इत्या०
 यातैं प. १५७.३ यातैं लौंगहिं फर नहिं लागै
 याही तैं प. १५३.३ याही तैं मोहिं प्यारी लागी

२.५.२.१.१.५ : उद्देश्यवाचक :

जातैं प. ८२.१ रमइया गुन गाइऔ जातैं पाइऔ परम निधान, प. १४४.२

जितु प. १३२.१ देव करहु दाया.....जितु बंधन छूटै
ज्यौ प. ८६.८ एक रांम भजहु ज्यौ सहज होइ सुरमेरा
जामैं प. १२७.२ अैसें विलोइ जामैं तत्त न जाई

२.५.२.१.१.६ : संकेतवाचक :

ज...तौ प. ६६.३ ज जरै तौ होइ भसम तन
जउ...प. ५५.५, ७२.१०, ८७.४ टुक दम करारी जउ
जउ...तउ प. १८६.१ जउ मैं वउरा तउ रांम तोरा
जउ...तौ प. ५४.३, ७२.४, २००.२ जउ कासी तनु तजहि कबीरा तौ रांमहि
कॉन निहोरा
जौ...तऊ प. ३७.४ कर गहि केस करै जौ धाता तऊ न हेत उतारै माता
जौ...तव चौं. १३.२ जुगुति जांनि जौ जरिवरि रहै तव जाइ जोनि उजारा लहै
जौ...तौ (२६ बार) सा. १५.४७.२ जौ जागूं तौ एक इत्या०
तौ...जौ सा. ३३.४.१ कथनी कथी तौ क्या भया जौ करनीं तां ठहराइ
जे...(१६ बार) सा. ३३.७.१ ऊंचे कुल क्या.....जे करनीं ऊंच न होइ इत्या०
जे...तौ (८ बार) चौं. २१.२ जे त्रिभुवन...तौ तत्तहि तत्त मिलै मुख पावै इत्या०
जो... (३ बार) प. १५८.५ रांम को पिता जो जसरथ कहिअै इत्या०
जो...तौ(४ बार) सा.११.१०.२ जो वो एक न जानियां तौ सबहो जाण...इत्या०
जौ पै...तौ (४ बार) प.७८.१ जौ पै रसनां रांम न कहिबौ तौ उपजत...इत्या०
जौ... (४३ बार) सा.२३.३.१ कबीर घास न निदिए जौ पावां तलि होइ इत्या०
.....त (१८ बार) प. २१.५ होइगा रांम त लेइगा राखि इत्या०
.....तो (३ बार) सा. ३.३.१ लूटि सकै तो लूटि इत्या०
.....तौ (६२ बार) सा. १५.७४.२ कबीर हरि के नांव सौं...तौ मुख तैं इत्या०
.....सु प. ११६.१०, १६०.७ अवहि न माता सु कबहुं न माता
.....सो सा. १५.७६.१ कबीर नवै सो आपकीं

२.५.२.१.१.७ : स्वरूपवाचक :

जे सा. २५.४.१ केसौ कहा विगारिया जे मूडै सौ बार
जो सा. १.२५.१ भली भई जो गुरु मिले, सा. ६.३.१

२.५.२.१.२ : विस्मयसूचक अव्यय :

क० ग्रं० में विस्मयसूचक अव्यय का अभाव सा है, केवल एक प्रयोग मिलता है और वह भी संज्ञा के समान प्रयुक्त है —

हा हा करते ते मुए सा. १६.२३.२

विस्मयसूचक के समान कुछ प्रयोग इस प्रकार हैं—

ध्रिग सा. १५.४०.१ ध्रिग जीवन संसार
 कहा ही प. ११८.६ सो जीवन भला कहा ही
 का (१० बार) सा. १५.१२.१ नीर पियावत का फिरै इत्या०
 क्या (१६ बार) प. ६२.१ झूठे तन कौं क्या गरबावै इत्या०
 का...का (६ बार) प. १७४.१ का नांगें का बांधें चांम इत्या०
 क्या...क्या (७ बार) प. २००.६ क्या कासी क्या मगहर ऊसर इत्या०
 जे सा. २५.१६.२ रांम नांम कहु क्या करै जे मन के औरै कांम (क्या अर्थ)

२.५.२.२ : परसर्गों के रूप में प्रयुक्त अव्यय पदावली :

भरि सा. १६.२८.१ नींद भरि
 लग (११ बार) सा. ६.२६.२ जब लग इत्या०
 लगि (२३ बार) प. १३.४ तब लगि इत्या०
 लौं प. ६८. ७, सा. ८.१६.१, १५.७१.२ कब लौं
 सा प. ३८.३ हरि सा ठाकुर
 सी सा. १६.२२.१ दीवा की सी जोति
 सु प. १७५.७ कौन सु माला
 सौं सा. २.४२.१ बिरह अग्नि सौं लागि

२.५.२.३ : पादपूरक पदावली :

ज प. ११४.५, १५४.१, १७०.१, सा. १.२१.२, ६.१६.२, २१.२६.१ कहता
 हूं ज धरंम
 जी (१३ बार) सा. १.२.२ हरि जी सवां न को (इ) हित् इत्या०
 जु (२३ बार) सा. १२.६.२ बारि जु बांधा प्रेम कै इत्या०
 जो प. १४४.४, सा. ३.१५.१, ३१.१०.२ भई जो बाचाबंध
 धूं प. १५४.१ नंद कहौ धूं काकौ रे
 धौं प. ५४.२, १८०.५, सा. ३१.२.२ कहु धौं

निम्नलिखित उदाहरणों में अर, कछु, कोई और भला निरर्थक रूप में पाद-
 पूरक के समान प्रयुक्त हुए हैं—

अर प. १६५.७ अर इंद्रादिक बर ब्रह्मादिक
 कछु सा. १४.७.१, २२.११.२ नीर निवानैं ठाहरै नां कछु छापड़हं
 कोई प. ८७.२ कोई दस्तगीरी नांहि
 भला प. ११८.६ सो जीवन भला कहा ही

२.५.२.४ : अवधारणबोधक प्रयोग :

क० ग्रं० में अवधारणबोधक प्रयोग पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। विभिन्न

स्थानों पर अर्थ में चमत्कार लाने के लिए अथवा किसी वस्तु विशेष पर बल देने के लिए अथवा उसी को द्योतित करने के लिए कुछ निपातों (पार्टिकल्स) के प्रयोग प्राप्त हुए हैं। इनके प्रयोग, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रियाविशेषण और परसर्ग सभी के साथ स्वतंत्र रूप में अथवा परसर्ग की भाँति अथवा प्रत्यय की भाँति हुए हैं। प्रत्ययों की भाँति प्रयुक्त रूपों में अवधारणबोधक अर्थ के अतिरिक्त प्रत्यय का तत्संबंधी अर्थ, दोनों साथ-साथ प्रकट हुए हैं। इनका उल्लेख संज्ञा, सर्वनाम आदि के विभिन्न विवेचनों के साथ किया जा चुका है। यहाँ उनकी सूची देना पुनरावृत्ति-मात्र होगी। यहाँ केवल स्वतंत्र रूप से परसर्ग की भाँति प्रयुक्त रूपों के उदाहरण उनकी आवृत्तियों के सहित दिए गए हैं—

तो प. १५.८ मैं तो तुम्हारी दासी, चों. ३६.२ है तो सही
तो (२४ बार) प. १५.११ अब तो दरसन देहु इत्या०
भी (१७ बार) सा. २६.६.१ हम भी पाहन पूजते इत्या०
हीं (१० बार) प. १४२.३ घट हीं सात समुंदा इत्या०
ही (७२ बार) प. ३.८ घट ही मैं बोलै इत्या०
हूं प. ७३.६, १३७.७, सा. २४.४.१, ३१.४.२ भागां हूं छांडै नहीं
हू (१० बार) सा. ४.२८.२ सुपिनै हू जनि देहु इत्या०

तत्सम रूप का प्रयोग—

एव प. १६८.४ संन्यासी माते अहंमेव

केवल भी अवधारण का अर्थ प्रकट करता है—

प. १०.१४ केवल कहि समझाइया
सा. १.२७.२ भजि केवल कहै कबीर

रचनात्मक उपसर्ग तथा प्रत्यय

२.६ : क० अं० में रचनात्मक अथवा व्युत्पादक उपसर्ग तथा प्रत्यय क्रमशः विभिन्न प्रातिपदिकों के पहले और बाद में संयुक्त हुए हैं। इनके संयोग से प्रातिपदिकों के प्रकृत्यर्थ में भिन्नता आ गई है। प्रत्ययों के संयुक्त होने से अनेक प्रकार के अन्य संज्ञा, विशेषण, धातुरूप तथा क्रियाविशेषण प्रातिपदिक व्युत्पन्न हुए हैं। क० अं०

में केवल परस्परताबोधक आपस^१ और निजवाचक आपुन^२ को छोड़कर कोई भी सर्वनाम व्युत्पन्नसर्वनाम प्रातिपदिक के रूप में प्राप्त नहीं है; किन्तु मूल सर्वनाम प्रातिपदिकों से संज्ञा, विशेषण और क्रियाविशेषण प्रातिपदिक अवश्य प्राप्त हुए हैं जिनका उल्लेख उदाहरण-सहित यथास्थान किया जाएगा।

क०ग्रं० में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग हुआ है, अतएव उपसर्गों और प्रत्ययों में इन सभी तत्त्वों का समावेश मिलता है। इन पर अलग-अलग विचार नहीं किया गया है। तद्भव प्रत्ययों के ऐतिहासिक विकास पर भी विचार नहीं किया गया है।

अध्ययन की सुविधा के लिए प्रकृति-प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न रूपों को संज्ञा-प्रातिपदिक, विशेषणप्रातिपदिक, सर्वनामप्रातिपदिक, क्रियाविशेषणप्रातिपदिक आदि श्रेणियों में विभाजित किया गया है, किन्तु उपसर्गों का विवेचन परम्परागत पद्धति पर ही किया गया है, क्योंकि एक तो उपसर्गों की संख्या अत्यंत सीमित है, दूसरे उपसर्गों और प्रत्ययों की प्रकृति में भी अन्तर है।

नीचे उपसर्गों और प्रत्ययों पर अलग-अलग विचार किया गया है। अधिक विस्तार को बचाने के लिए प्रत्येक संदर्भ की केवल एक छंद-संख्या दी गई है।

२.६.१ : उपसर्ग :

उपसर्गों के संयोग से प्राप्त अर्थों को कोष्ठक में दिया गया है।

अ- : इसका अर्थ न अथवा अभाव है और इसका संयोग संज्ञा, विशेषण तथा क्रिया के पूर्व हुआ है। यह उपसर्ग मूलशब्द के पूर्व तथा उपसर्ग सहित शब्द के पूर्व भी संयुक्त मिलता है—

कह	:	अकह	(अकथनीय) चौं. ६.२
कथ	:	अकथ	(„) प. १२२.११
खंड	:	अखंड	(खंडरहित) प. १४८.७
गोचर	:	अगोचर	(अदृश्य) प. १३०.८
मिलन	:	अमिलन	(न मिलना) प. १३०.१५
मोल	:	अमोल	(अमूल्य) सा. २.२५.२

उपसर्ग सहित शब्द के साथ :

^१ 'आपस' प. १६१.६ सामान्यतः परस्परताबोधक सर्वनाम है, किन्तु क०ग्रं० में इसका प्रयोग निजवाचक सर्वनाम की तरह किया गया है जिसका उल्लेख सर्वनाम के विवेचन के साथ किया जा चुका है।

^२ सा. ३१.२४.२

अपरवल (अप्रवल) सा. २.५१.१

अविगत (अविगत) प. १५३.२

अविनाशी (अविनाशी) प. १५.१

अन- : इसका अर्थ अभाव अथवा निषेध है तथा इसका संयोग संज्ञा, विशेषण, क्रिया और क्रियाविशेषण के पूर्व हुआ है—

हित : अनहित (बुरा) र. १७.७

भै : अनभै (निडर) चौं. ४१.२

हृद : अनहृद (असीम) सा. ६.३६.२

व्यावर : अनव्यावर (विना व्याई हुई) सा. १३.३.१

अंत : अनंत (असीम) प. ११६.६

एक : अनेक (एकाधिक) सा. १.१३.१

इक : अनिक (, ,) प. २६.११

कीयां : अनकीयां (न करने से) सा. ८.४.१

जानें : अनजानें (न जानने वाले) सा. ४.२७.१

चीन्हें : अनचीन्हें (नहीं चीन्हां) र. ११.६

अप- : इसके संयोग से शब्द के पूर्वरूप का उलटा अर्थ हो गया है और एक प्रयोग में उसका अर्थ अपकर्षत्व है। इसका संयोग संज्ञा के पूर्व हुआ है—

रोगी : अपरोगी (रोगी) प. १६१.४ (प्रकृत्यर्थ में अपकर्षत्व)

सर : अपसर^१ (पीछे हटना) सा. ४.२७.२

अभि- : इसका अर्थ ओर अथवा में है तथा इसका संयोग संज्ञा के पूर्व हुआ है—

अंतर : अभिअंतर (भीतर) प. १६५.४

अंतरि : अभिअंतरि (, ,) प. ४६.३

मान : अभिमान (गर्व) प. ३२.८

आ- : इसका अर्थ समेत है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—

^१ 'अपसर' का अर्थ डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने 'अनुचित' (सर=किस ओर अपसर हुआ जाए और अपसर=किस ओर अपसर न हुआ जाए) किया है (दे० 'कबीर ग्रंथावली में अर्थ की दृष्टि से कुछ विचारणीय स्थल', ना० प्र० पत्रिका, वर्ष ६८, सं० २०२०, अंक १-२)।

- कुल : आकुल (कुल समेत, पूर्णतः) प. ६६.४
 अव~औ- : इसका हीनता अर्थ है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—
 गुन : अवगुन (अवगुण) प. ३७.२
 गुन : औगुन (,) सा. ८.१७.२
 घड़ : औघड़ (कापालिक) सा. २६.६.१
 भड़ : औभड़ (भटका) सा. १६.२७.२

(औघट सा. ६.१६.१ का विचित्र घट अर्थ है)

- कु- : इसका अर्थ बुरा है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—
 संग : कुसंग (बुरा साथ) सा. २४.२.१
 सेवग : कुसेवग (बुरा सेवक) प. ४७.३
 रूप : कुरूप (बुरा रूप) प. ६४.५
 बुधि : कुबुधि (बुरी बुद्धि) प. ६३.२
 मति : कुमति (बुरी मति) सा. ३१.११.२
 दर- : इसका निश्चय अर्थ है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है।
 केवल एक उदाहरण प्राप्त है—
 हाला : दरहाला (वास्तव में) र. १०.१
 दु- : इसका बुरा अर्थ है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—
 चिते : दुचिते (बुरे चित्त की) प. ५२.३
 हागिनि : दुहागिनि (बुरे भाग्य वाली) सा. २.३८.२
 दुर- : इसका भी बुरा अर्थ है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—
 गंधि : दुरगंधि (दुर्गन्धि) प. ८६.२
 आचारी : दुराचारी (बुरा आचरण करने वाला) सा. १५.१३.२
 मति : दुरमति (बुरी मति) प. ५२.४
 नि- : इसके संयोग से मात्र अर्थ में विशिष्टता आ गई है। यह अभाव
 सूचक नि- उपसर्ग से भिन्न है। केवल क्रिया के पूर्व संयुक्त मिलता है—
 वारै : निवारै (दूर करता है) चौं. ३८.१
 (नि- के बाद -रू- का आगम भी हुआ है—निरुवारै) (निवारण करता है) चौं. १०.१
 नि~नी-, निर-, निह- : इन सभी उपसर्गों का अर्थ अभाव है। इनसे बिना का
 अर्थ प्राप्त किया जा सकता है। इनका संयोग संज्ञा के
 पूर्व हुआ है—
 घड़क : निघड़क (निडर) सा. १६.२५.२

- कुल : निकुल (कुलरहित) सा. १५.३७.८
- डर : निडर (निडर) चौ. १८.२
- डर : नीडर (,,) सा. ३०. २४.१
- गुसांवां : निगुसांवां (स्वामीरहित) सा. ६.३.१
- संक : निसंक (शंका रहित) सा. ४.७.१
- दावै : निरदावै (धन रहित) सा. ४.७.२
- तत्त : निहतत्त (तत्त्व रहित) प. १.८

प्र~पर~प- : इनसे व्याप्ति का अर्थ प्रकट हुआ है और ये संज्ञा तथा क्रिया के पूर्व संयुक्त हैं—

- ताप : प्रताप (प्रताप) प. ७३.४
- ताप : परताप(,,) प. १६४.१०
- जलै : परजलै (प्रज्वलित होती है) सा. ३०.१०.२
- संग : परसंग (प्रसंग) प. ४०.६
- सारा : पसारा (फैलाया) प. १५२.२

प्रति- : इससे अर्थ में विशिष्टता आ गई है और इसका संयोग संज्ञा तथा क्रिया के पूर्व हुआ है—

- बिब : प्रतिबिब (छाया, परछाहीं) प. १३२.६
- पाल : प्रतिपाल (पालनकर्त्ता) प. १५.१
- पारा : प्रतिपारा (पालन) प. ३८.४
- पाली : प्रतिपाली (पालन) र. १०.३
- पारै : प्रतिपारै (पालन करता है) र. ८.२

पर- : इसका अन्यताबोधक अर्थ है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—

- दास : परदास (दास का दास) सा. १६.१४.१
- नारी : परनारी (दूसरे की स्त्री) सा. ३० २.१

परि- : इसके संयोग से अर्थ में तीव्रता का द्योतन हुआ है और क्रिया के पूर्व संयुक्त है—

- हरिया : परिहरिया (छोड़ दिया) र. १८.३
- हरै : परिहरै (छोड़ता है) सा. २७.३.२

बि- : इसका विशिष्ट और कहीं-कहीं प्रकृत्यर्थ से विपरीत अर्थ भी, प्रकट होता है। यह संज्ञा, विशेषण तथा क्रिया के पूर्व संयुक्त है—

विशिष्ट अर्थ :

- भूति : विभूति (ऐश्वर्य) र. १४.३

हूनां	:	बिहूनां (विहीन) सा. ६.१३.१
मुध	:	विसूधा (विशुद्ध) र. १२.७
कराल	:	विकराल (विकराल) प. १५५.१२
छोहिया	:	बिछोहिया (छूट गया) सा. २.६.१
बरजित	:	बिवरजित (रहित) र. १४.३

विपरीत अर्थ :

योग	:	बियोग (वियोग) चौं. ११.२
खम	:	बिखम (विषम) सा. २७.५.२

वे- : इसका रहित अर्थ है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—

कांम	:	बेकांम (विना काम) सा. ३.६.२
खबरू	:	बेखबरू (विना जाने) प. ८७.५
हद	:	बेहद (असीम) सा. २०.६.२

स- : इसका सहित अर्थ है और संज्ञा तथा विशेषण के पूर्व संयुक्त है—

नाथ	:	सनाथा (स्वामीयुक्त) र. ३.१
घन	:	सघन (सघन) सा. ४.१०.१
चल	:	सचल (सचल) प. ५०.७
कांम	:	सकांम (सकाम) सा. ३०.५.१
रस	:	सरस (सरस) चौं. ३३.१

(स- के बाद -र- का आगम भी हुआ है—सरजीव (सजीव) प. १८३.३)

सं- : इसके संयोग से अर्थ में विशिष्टता आई है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—

ताप	:	संताप (दुख) सा. ३१.२१.१
जम	:	संजम (संयम) प. ६६.५
जोग	:	संजोग (संयोग) सा. १४.२७.१

सन- : इसका ओर और अच्छा अर्थ है। यह संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—

मुख	:	सनमुख (सामने) सा. ६.२६.१ (ओर अर्थ)
मान	:	सनमान (आदर) र. १६.५ (अच्छा अर्थ)

सु- : इसका सुंदर अर्थ है और संज्ञा तथा क्रिया के पूर्व संयुक्त है—

जान	:	सुजान (अच्छा जानकार) सा. १५.४.१
बास	:	सुबास (सुगंध) सा. २७.५.२
रंग	:	सुरंग (सुंदर रंग) प. ७५.५

जस : सुजस (सुयस) प. ४५.२

उपर्युक्त उपसर्गों के अतिरिक्त क० ग्रं० में अरध-, ना- और विन- उपसर्ग और प्रयुक्त हुए हैं। इन उपसर्गों को कुछ लोग^१ उपसर्ग नहीं मानते—

अरध- : इसका अर्थ आधा है जिससे अपूर्णता का बोध होता है और यह संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—

सरीरी : अरध सरीरी (अर्द्ध शरीरवाली) प. १७८.६

ना- : इसका निषेध अर्थ है। केवल एक उदाहरण प्राप्त है—

पाक : नापाक (अपवित्र) प. १८३.६

विन- : इसका विना अर्थ है और संज्ञा के पूर्व संयुक्त है—

चिता : विन चिता (विना चिता के) सा. ३२.६.२

२.६.२ : प्रत्यय :

प्रस्तुत संदर्भ में प्रत्यय का तात्पर्य केवल व्युत्पादक प्रत्ययों से ही है, व्युत्पन्न प्रातिपदिकों में संयुक्त होने वाले विभक्ति-प्रत्ययों का उल्लेख व्याकरणिक रूपों के विभिन्न विवेचनों में किया जा चुका है। व्युत्पन्न धातुरूप कृदंत, क्रियार्थक संज्ञा और कर्तृवाचक संज्ञा (क्रियार्थक संज्ञा में लगने वाले) के रचनात्मक प्रत्ययों का विचार भी क्रिया (२.५) के अन्तर्गत किया जा चुका है। इनके अतिरिक्त, निम्नलिखित प्रत्ययों के योग से विभिन्न प्रातिपदिक व्युत्पन्न हुए हैं—

२.६.२.१ : संज्ञा प्रातिपदिक :

२.६.२.१.१ : संज्ञा प्रातिपदिक तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

-अई (ई) : इसके संयोग से भाववाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न हुआ है—

सत : संतई सा. ४.२.१

-आ : इससे स्थूलतावाचक, संबंधवाचक तथा स्वाधिक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं—

औडेर : औडैरा चीं. ११.२ (स्थूलतावाचक)

तप : तपा प. १६८.४ (संबंधवाचक)

सांस : सांसा प. ८५.५ (स्वाधिक)

धार : धारा र. १३.६ („)

-आइ^२ : इससे स्वाधिक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—

^१ दे० हिन्दी में प्रत्यय-विचार, १.१.३ पृ० ५३, डॉ० मु० ला० उप्रेति:

^२ क० ग्रं० में 'खुदाइ' और 'खुदाई' दोनों शब्द प्रयुक्त हैं जैसे—खुदाई प. १२.३, किन्तु 'खुदाई' का भी 'ईश्वर' अर्थ है। कहीं भी भाववाचक संज्ञा (ईश्वरत्व) का अर्थ प्राप्त नहीं होता।

- खुदा : खुदाइ सा. ४.१४.१
 बला : बलाइ सा. १५.७१.१
- आका^१ : इससे स्वार्थिक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुआ है और इसके योग से
 आ > अ विकार हुआ है—
- भाला : भलाका सा. १४.७.२
- आत : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—
- कुसल : कुसलात सा. २६.८.२
 संग : संगीत प. ७३.६
- आती : इससे संबंधवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—
- जग : जगाती प. १२६.६
 संग : संगीती प. ६६.५
 संघ : संघाती प. १०४.७
- आनीं : इससे स्त्रीलिंग संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—
- तुरक : तुरकानीं प. १६३.७
 भव : भवानीं प. १६३.३
- आर : इससे कर्तृवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं और ओ > उ
 कुंभ > कुम्ह विकार हुए हैं—
- कुंभ : कुम्हार सा. १२.१.२
 लोह : लुहार सा. १६.२.२
- आरा, -आरी : इनसे कर्तृवाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं तथा ऊ > उ और ई > इ विकार हुए हैं—
- पूजा : पुजारा प. १८७.८
 बनिज : बनिजारा प. १२६.६
 भीख : भिखारी प. ४२.७
 जुवा : जुवारी प. ६६.६
- आल : इससे संबंधवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुआ है—
- क्रिपा : क्रिपाल प. १६२.६
- आव : इससे स्वार्थिक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है—
- दरिया : दरियाव प. १.६

^१ -‘आका’ परिनिष्ठित हिन्दी में कर्तृवाचक और भाववाचक संज्ञा व्युत्पन्न करता है (दे० डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, हि०भा०इति०, १६५३ ई०, १८६-८७, पृ० २२६) ।

-औवनीं : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुआ है—

चेत : चेतावनीं सा. १५.३१.१

-इ : इससे स्त्रीलिंग संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—

कुकुर : कुकुरि प. १४०.५

कूकर : कूकरि सा. २१.१०.१

-इन, -इनां,

-इनि, -इनीं,

-इनीं : इनसे स्त्रीलिंग संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—

विरह : विरहिण सा. २.३१.१

चांद : चांदिनां सा. ६.८.२

बाघ : बाघिनि प. १६५.१

भगत : भगतिनि प. १६३.७

तुरक : तुरकिनीं प. १८२.४

नाग : नागिनीं प. ३५.३

चांद : चांदिनीं सा. १.३.२

-इयाँ, -इयां : इनसे स्वाथिक तथा कर्तृवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं और
आ > अ, ई > इ, ए > इ विकार हुए हैं—

जोगी : जोगिया प. १५१.३ (स्वाथिक)

खाट : खटिया प. १००.२ („)

नदी : नदिया सा. २.५४.१ („)

वेटी : बिटिया प. ११०.४ („)

पहरी : पहरिया प. १२०.४ (कर्तृवाचक)

करम : करमियां सा. २२.२.१ („)

सांई : सांइयां सा. ६.७.२ (स्वाथिक)

-इवां : इससे स्वाथिक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुआ है। यह केवल सूरिवां में संयुक्त मिलता है, अतएव उस शब्द की पूरी छंद संख्याएँ दी गई हैं—

सूर : सूरिवां सा. १.६.१, १.३०.१, १४.६.२, १४.१०.१, १४.१३.१

१ 'कुमुद' में -इनीं लगने से 'कमोद' विकार होकर कमोदिनीं सा. २.२६.१ रूप प्राप्त हुआ है।

२ 'भाई' का 'भइया' प. १२५.१ तथा 'भईआ' प. १३५.६ दोनों रूप प्राप्त हैं। इनमें क्रमशः -इया और -ईआ प्रत्यय स्वीकार किए जा सकते हैं।

ई : इससे भाववाचक, स्त्रीलिंगवाचक तथा वाला अर्थ द्योतक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—

अंधियार : अंधियारी सा. ३१.६.१ (भाववाचक)

साहिब : साहिबी प. ७३.४ („)

सिवपुर : सिवपुरी प. ४६.४ (स्त्रीलिंग)

कुकुड़ : कुकुड़ी प. १८३.७ („)

पात : पाती प. १५२.४ („)

जोग : जोगी प. ६२.४ (वाला अर्थ)

कुटुंब : कुटुंबी प. ६३.५ („)

-उवा, -उवां : इनके योग से स्वार्थिक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—

फाग : फगुवा प. १४४.६

तरऊ : तरउवा प. १२१.३

मन : मनुवां सा. २६.१०.१

-उल, -उला : इनसे संबंधवाचक तथा स्वार्थिक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं और ऊ > उ विकार हुआ है—

बावू : बाबुल प. ११०.५ (संबंधवाचक)

बग(बाग) : बागुल सा. १५.५८.२ (स्वार्थिक)

चरखा : चरखुला प. ११०.२ („)

बग : बगुला सा. १८.५.२ („)

-एरा : इससे भाववाचक तथा वाला अर्थ द्योतक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—

कुहा : कुहेरा प. ८५.१ (भाववाचक)

चित : चितेरा चौं. ११.२ (वाला अर्थ)

-एला, -एली : इनसे अन्य संज्ञा (पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग) प्राति० प्राप्त हुए हैं। जिन शब्दों के उदाहरण प्राप्त हैं, उनके मुक्तरूप (फ्री फार्म) प्राप्त नहीं हैं। केवल ऐतिहासिक दृष्टि से उनका संबंध-निर्धारण किया जा सकता है। अतएव इसी दृष्टि से संबंधित शब्दों का उल्लेख किया गया है—

दुहेला (दुःख) सा. २३.३.२

सुहेला (सखा) प. ६८.७

सुहेली (सखी) प. १३५.४

सहेली (सखी) प. १०६.४

- ओई : इससे संबंधवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुआ है—
बहन : बहनोई १४०.४
- (अ)क : इससे संबंधवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—
तिल : तिलक प. १८६.३
कुंभ : कुंभक प. ११५.८
दीप : दीपक सा. २४.१८.२
- कार : इससे भाववाचक तथा कर्तृवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—
हं : हंकार प. ३६.२ (भाववाचक)
भन : भनकार प. १४५.३ („)
आग्यां : आग्यांकार प. १७६.६ (कर्तृवाचक)
- कारी : इससे कर्तृवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं तथा चित्र > चित
एवं पीक > पिच विकार हुए हैं—
हं : हंकारी प. १७०.५
चित्र : चितकारी चौ. ११.१
पीक : पिचकारी प. १४४.३
- गर : इससे कर्तृवाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—
सौदा : सौदागर प. ४.१
सिकली : सिकलीगर सा. १.८.१
- गारी : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है और वद > वज
विकार हुआ है—
वद : वजगारी प. ४२.७
- गीरी^१ : इससे वाला अर्थ का द्योतन हुआ है—
दस्त : दस्तगीरी प. ८७.२
- टा : इससे स्वाधिक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है—
सुअ : सुअटा प. ६७.८
- ड़ा, -रा, -ड़ी, -री : इनसे स्वाधिक तथा संबंधवाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं
तथा आ > अ, ई > इ, ऊ > उ, ऊ > ओ विकार हुए हैं—
चूहा : चुहाड़ा ६५.१० (स्वाधिक)
रूख : रूखड़ा सा. २२.१४.१ („)

^१—‘गीरी’ के योग से भाववाचक संज्ञा का अर्थ प्रकट नहीं हुआ है, जैसा कि प्रायः यही अर्थ प्रकट होता है।

- (अ) वा : इससे स्वाथिक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं—
 घर : घरवा प. ६६.६
 मिरगा : मिरगावा प. १२४.६
 रहटा : रहटावा प. १३६.३
- वार : इससे उपनामसूचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है श्रीर ओ > उ विकार हुआ है—
 कोद : कुटवार (कोतवाल) प. १५५.११
- हार : इससे व्यवसायसूचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं, क्रियार्थक संज्ञा में संयुक्त होने पर कर्तृवाचकसंज्ञा के प्राप्त रूप का उल्लेख पहले (पृ. १८०) किया जा चुका है। इसके योग में आ > अ विकार हुआ है—
 कौतिग : कौतिगहार सा. २८.१.२
 पांनीं : पानिहार प. १५५.८
- हां : इससे स्वाथिक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है तथा स्वान > मुन विकार हुआ है—
 स्वान : मुनहां (कुत्ता) प. १६६.३
- २.६.२.१.२ : विशेषण तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :
- आई : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं—
 कठिन : कठिनाई सा. ३.५.१
 चतुर : चतुराई सा. २.२६.२
 बड़ा : बड़ाई सा. १५.७८.२
 भला : भलाई र. ७.५
- आपा : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है तथा ऊ > उ विकार हुआ है—
 बूढ़ : बुढ़ापा प. ६८.४
- ई : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं—
 उदास : उदासी प. २८.३
 गरीब : गरीबी सा. ६.११.२
- एरी : इससे भी भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं—
 • अंध : अंधेरी सा. ६.३६.२
- (अं) ता : इससे भी उपयुक्त प्राति० प्राप्त हुए हैं—
 सीतल : सीतलता सा. ४.२.५
 निहकाम : निहकामता सा. ४.२४.१

-(अ)प, -पन, -पनां : इनसे भी भाववाचक संज्ञा प्राति व्युत्पन्न हुए हैं—

सयान : सयानप चौं. १०.२

कड़ुवा : कड़ुवापन प. १७१.४

बड़ा : बड़ापनां सा. २२.१.१

२.६.२.१.३ : सर्वनाम तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

-आ : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है—

आप : आया (अपनत्व) सा. १.२८.२

-पौ : इससे भी उपयुक्त प्राति० प्राप्त हुआ है—

अपन : अपनपौ (अपनापन) र. ८.७

आपन : आपनपौ („) सा. २३.७.१

२.६.२.१.४ : धातु तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

-आई : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है—

समझ : समझाई (समझ) प. १०६.७

आवा : इससे भी उपयुक्त प्राति० प्राप्त हुआ है और ऊ > उ विकार हुआ है—

भूल : भुलावा सा. १५.५७.२

इग : इससे कर्तृवाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है—

जाच : जाचिग प. ११८.३

ई : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुए हैं—

ठिठक : ठिठकी प. १६२.६

हंस : हंसी प. ५८.६

एरा : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं—

बस : बसेरा प. ११.४

सुरभ : सुरभेरा प. ८६.८

प्रौटी : इससे भी उपयुक्त प्राति० प्राप्त हुआ है—

कस : कसौटी सा. १६.४.२

प्रौनां : इससे वस्तुवाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है और ए > इ विकार हुआ है—

खेल : खिलौनां प. १८६.३

प्रौरी : इससे भाववाचक संज्ञा प्राति० प्राप्त हुआ है—

ठग : ठगौरी प. ४६.५

२.६.२.२ : विशेषण प्रातिपदिक :

२.६.२.२.१ : संज्ञा तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

(विशेषण के अर्थ कोष्ठक में दिए गए हैं)

-आई

तिसा : तिसाई (प्यासयुक्त) सा. १२.७.२

-आऊ : इसके योग में आ > अ विकार हुआ है—

वाट : बटाऊ (वाट (राह) पर चलने वाला) सा. १४.३.२

-आल

रस : रसाल (रसीला) प. १४८.३

-आवनि, -आवनीं

भय : भयावनि (डराने वाली) र. १३.६

पीर : पिरावनीं (पिराने वाली) सा. २.३३.१

-इक

मुवास : मुवासिक (मुगंधित) प. १०१.६

निरमोल : निरमोलिक (अमूल्य) सा. ६.३६.१

-इत

दुख : दुखित (दुखी) प. १६७.४

सुख : सुखित (सुखी) प. १६७.४

-इया, -इयां

बरात : बरतिया (बराती) प. ८५.६

गुन : गुनियां (गुणवान) प. ७६.६

-इल

हठ : हठिल (हठी) प. १६.३

-ई

काम : कामीं (कामुक) प. १३.६

पाप : पापी (पापी) प. ७४.२

उपदेस : उपदेसी (उपदेशक) प. १८६.५

हुराम : हुरामीं (हुराम करने वाला) प. ६३.५

-उआ : इसके योग में आ > अ, ऊ > उ विकार हुए हैं—

कालू : कलुआ (काला) प. १४२.६

-ऊ

हित : हितू (हित करने वाला) सा. १.२.२

पारिख : पारिखू(पारखी) सा. १८.४.२

-औनां

नास : नसौनां (नष्ट होने वाला) र. ६.२

-(अ)नीं : (स्त्री०)

मोह : मोहनीं (मोहने वाली) सा. ३१.४.१

-बांन

मिहर : मिहरबांनां (कृपालु) प. ५६.६ (-आं तुक के कारण)

-मंत, -मंता

मैं : मैंमंत (मतवाला) सा. २६.२.१

मैं : मैंमंता („) सा. २६.१६.१

-(अ)ल, -ला : इसके योग से घाव > घाइ विकार हुआ है—

घाव : घाइल (घायल) सा. ५.६.२

राव : रावल (साधक) प. ५१.७

पंगु : पंगुला (पंगुल) प. १५.७.७

पूरव : पूरबला (पहले का) सा. ६.२२.१

-वंत, -वंती : (क्रमशः पुल्लिङ्ग तथा स्त्रीलिङ्ग के द्योतक)

ग्यान : ग्यानवंत (ज्ञानवान) चौ. ४२.१

तिरखा : तिरखावंत (प्यासयुक्त) सा. १२.३.२

गुन : गुनवंती (गुणवती) सा. १३.२.२

-हां : इसके योग में ओ > उ, आ > अ विकार हुए हैं—

सोना : सुनहां (सुनहला) प. १३८.३

२.६.२.२.२ : विशेषण तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

-आ

सूच : सूचा (पवित्र) प. ५८.७

चोख : चोखा (तेज) र. २०.३

रात : राता (लाल) सा. १५.५०.२

-आई : (अपूर्णांक तथा अनिश्चित संख्याबोधक)

सवा : सवाई (सवा संख्या का द्योतक) र. १.८

अधिक : अधिकाई (अधिक) प. १११.४

-ईन

मिसकीं : मिसकीं (दीन, असहाय) प. १७७.४ (अरबी-मिसकीं)

मसकीं : मसकीं (, ,) प. १८४.२

-उं, -उ, -ऊं, -ऊ, -औं : इनके योग से समुदायवाचक (संख्या) विवक्षित व्युत्पन्न हुए हैं। -उं के योग में दुइ > दोनि, -ऊं के योग में तीनि > तीन्युं, -ऊ के योग में दुइ > दो विकार हुए हैं—

तीनि : तीनिउं (तीनों) प. ११६.७

दुइ : दोनिउं (दोनों) प. १०.१२

चारि : चारिउ (चारों) सा. २१.४.२

पांच : पांचउ (पाँचों) प. ५.३

नउ : नऊं (नवों) प. ६६.२

तीनि : तीन्युं (तीनों) प. १०७.६

दुइ : दोऊ (दोनों) सा. १५.७२.२

चौबीस : चौबीसों (चौबीसों) प. १७७.७

पचीस : पचीसों (पचीसों) प. २.७

-ऊरी : इसके योग में आ > अ विकार हुआ है और आध के आ का एक जगह लोप भी हो गया है—

आध : अधूरी (आधी) सा. १.२६.१

(आ)ध : धूरी (, ,) प. ६६.८

-एरा, -एरी : इनसे परिमाणवाचक विशेष प्राति० प्राप्त हुए हैं—

बहुत : बहुतेरा (बहुत) र. १४.३

घन : घनेरी (स्त्री० बहुत) प. ४२.६

-एल, -एला, -एली : इनसे एक संख्या का बोध होता है और एक > अक विकार हुआ है—

एक : अकेल (अकेला) सा. १६.२६.१

एक : अकेला (, ,) प. १००.४ (पु०)

एक : अकेली (अकेली) प. १६०.६ (स्त्री०)

-(अ)क :

छः संख्या के समुदायवाचक रूप के लिए 'छौ' पाठ मिलता है (प. १३६.४) यद्यपि इसके स्थान पर 'छौं' 'छहौं' 'छऊं' आदि पाठ संभावित कहे जा सकते हैं। 'बीजक' में यह पाठ नहीं मिलता।

रंच : रंचक (थोड़ा) सा. ३.११.१
 -जा, -ठा, : इनके योग से क्रमवाचक विशेषण व्युत्पन्न हुए हैं। ये रूप
 -सर, -वां : प्रतिबंधित हैं। दुइ के साथ -जा और -सर संयुक्त हुए हैं,
 छ संख्या के साथ -ठा, दस के साथ -वां संयुक्त हुआ है।
 चौथा रूप नहीं प्राप्त होता अपितु चौथे (प. ३३.१०, वि० ६०)
 मिलता है, एक का क्रमवाचक रूप पहिला (सा. २२.६.२)
 है किन्तु यह मुक्तरूप नहीं मिलता। इसका संबंध ऐतिहासिक
 दृष्टि से बीम्स ने प्रथर^१ से जोड़ा है। -जा और -सर के योग में
 क्रमशः दुइ > दू और दुइ > दो विकार हुए हैं—

दुइ : दूजा (दूसरा) प. ७७.३

दुइ : दोसर (दूसरा) चौं. ८.१

छ : छठा (छठाँ) सा. ३.१५.१

दस : दसवां (दसवाँ) सा. २६.११.२

-ठी -ताई : इनसे समवेतवाचक विशेषण व्युत्पन्न हुए हैं। एक का इक रूप
 स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त मिलता है—

इक : इकठी (इकट्ठी) प. १६४.३

इक : इकताई (इकट्ठा, एक साथ) प. ५३.६

-हेरा, -वर, -सरी : इनसे प्रकार या परतवाचक विशेषण व्युत्पन्न हुए हैं। इनका योग
 केवल दुइ और तीनि संख्याओं के साथ हुआ है जिनमें दुइ > दु,
 दुइ > दो और तीनि > ते विकार हुए हैं। तीनि के साथ केवल
 -वर संयुक्त हुआ है —

दुइ : दुहेरा (दुहरा) प. ११.४

दुइ : दोवर (दुहरा) प. २५.२

दुइ : दुसरी (दुहरी, स्त्री०) १३१.७

तीनि : तेवर (तिहरा) प. २५.३

(दुइ का दूनां प. ६०.५ और स्त्री० दूनीं सा. १८.८.२ रूप भी प्राप्त हैं जिनसे
 आवृत्तिवाचक विशेषण बनते हैं; किन्तु, कुछ विद्वान इनमें प्रत्यय नहीं मानते। -गुनां
 को प्रत्यय न मानकर विशेषण और संज्ञा मानते हैं—दे० डॉ० मुरारीलाल उप्रैतिः,
 हि० प्र० वि० १.२.५, १.२.५.५, पृ० ७४, ७६)

२.६.२.२.३ : सर्वनाम तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

-ता : इससे परिमाणवाचक विशेषण व्युत्पन्न हुए हैं तथा जो > जे,

^१ दे० कम्परेटिव ग्रामर, भाग २, § २७ (उल्लेखों के आधार पर)

कौन > कि विकार हुए हैं—

जो : जेता (जितना) सा. ३२.१५.१

कौन : कित्ता (कितना) प. १८६.३

-(अ)स, -सा, -सौ : इनके योग से प्रकारवाचक विशेषण व्युत्पन्न हुए हैं तथा
जो > ज जो > जै, यह > अ, अँ ~ ऐ, कौन > क, कै विकार हुए हैं—

यह : अस (ऐसा) सा. १६.२१.१

जो : जस (जैसा) चौ. २३.१

कौन : कस (कैसा) सा. ७.१०.१

यह : ऐसा (ऐसा) सा. ५.४.१

यह : अँसा (,) सा. १६.६.२

जो : जँसा (जैसा) प. १३४.५

कौन : कैसा (कैसा) सा. ६.२.१

यह : अँसौ (अँसा) प. १५४.६

(स्त्रीलिंग में अँसी सा. १५.८५.१ और जँसी सा. ३१.७.१ रूप प्राप्त हुए हैं)

२.६.२.२.४. धातु तथा प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

-आऊ, -आउर : इनके योग में आ > अ और ऊ > उ विकार हुए हैं—

लाद : लदाऊ (जिस पर भार लादा जाय) प. १७६.४

जुभ : जुभाउर (जुभाने वाला) प. ५६.६

२.६.२.३. सर्वनाम प्रातिपदिक :

केवल सर्वनाम और प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न

-उन : इससे निजवाचक सर्वनाम प्राति० प्राप्त हुआ है—

आप : आपुन (स्वयं) सा. ३१.२४.२

-(अ)स : इसका उल्लेख प्रारम्भ (पृ० १६८) में किया गया है।

आप : आपस (अपने को) प. १६१.६

२.६.२.४ : क्रियाविशेषण प्रातिपदिक :

२.६.२.४.१ सर्वनाम और प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न :

-त : इसके योग से दिशावाचक क्रि०वि० व्युत्पन्न हुए हैं तथा जो > जि,
यह > इ, वह > उ, ऊ विकार हुए हैं—

जो : जित (जिधर) सा. ३.६.२

यह : इत (इधर) सा. १०.३.२

वह : उत (उधर) सा. २०.३.१

वह : ऊत (उघर) सा. १५.५६.२

-ब, -द~दि : इनके योग से कालवाचक क्रि०वि० व्युत्पन्न हुए हैं और यह>अ, कौन>क और जो>ज विकार हुए हैं—

यह : अब (इस समय) प. ७१.१

जो : जब (जिस समय) सा. १७.१.१

कौन : कब (किस समय) प. १५.१

जो : जद (जब) सा. ६.६.१

जो : जिदि (जब) सा. २.२८.१

-यौं~यूं~औं~ऊं : इनके योग से रीतिवाचक क्रियाविशेषण व्युत्पन्न हुए हैं तथा जो>जू, कौन>कु, यह>य विकार हुए हैं—

जो : ज्यौं (जिस प्रकार) प. ३४.३

कौन : क्यौं (क्यों) सा. २.४१.२

कौन : क्यूं (,,) प. ६८.६

यह : यौं (इस प्रकार) र. १२.४

यह : यूं (,,) प. १४१.४

(क्यों अर्थ में कत प. ३८.३, कहा प. ३.४, काइ सा. ३२.१२.१, कांइ सा. २५.३.१, काइं सा. २८.२.२, काहे प. २०.८, किन प. २१.१ शब्द कौन से संबंधित कहे जा सकते हैं) ।

-(अ)हं, -हां : इनके योग से स्थानवाचक क्रियाविशेषण व्युत्पन्न हुए हैं और जो>ज, यह>इ, वह>ऊ, कौन>क विकार हुए हैं—

यह : इहां (यहाँ) प. ६६.६

जो : जहं (जहाँ) प. १४५.४

जो : जहां (,,) प. ८७.८

वह : ऊहां (वहाँ) प. १३०.१२

कौन : कहं (कहाँ) सा. १०.६.१

कौन : कहां (,,) सा. ११.१३.२

(उहां का उहवां प. १२५.४ और तहां का तहियां प. ११३.५ दीर्घरूप भी मिलते हैं जिनमें क्रमशः -(अ)वां और -इयां प्रत्यय संयुक्त हैं तित (तहाँ) सा. ३.६.२, तब म. ३८.२, त्यों प. ६७.६, तहं प. ४.१, तहां सा. ६.२१.२ क्रियाविशेषण तौन सर्वनाम से संबंधित कहे जा सकते हैं; किन्तु तौन का प्रयोग क०ग्रं० में नहीं मिलता ।

२.६.२.४.२ : उपर्युक्त प्रत्ययों के अतिरिक्त -ए, -ऐ, -औ प्रत्ययों से विभिन्न

क्रियाविशेषण प्राति० व्युत्पन्न हुए हैं। इनका योग संज्ञा, विशेषण और क्रिया-विशेषण के साथ हुआ है।

-ए, -ऐ^१

संज्ञा आग : आगे सा. २०.२.१ (स्थानवाचक)

विशे० टेढ़ : टेढ़े प. ६६.१ (रीतिवाचक)

पहिले र. २.१ (कालवाचक)

पहिले प. ३.१०.१ (")

क्रि० वि० कद : कदे सा. २४.१६.१ (")

-औ

विशे० टेढ़ : टेढ़ी प. ७३.२ (रीतिवाचक)

विशेष : -ह, -हं प्रत्यय संज्ञा, क्रियार्थक संज्ञा और क्रियाविशेषण पदों (विभक्ति-प्रत्ययों के बाद) में संयुक्त हुए हैं। इन्हें निरर्थक रूप में संयुक्त किया गया है—

संज्ञा सिखरां : सिखरांहं (सिखरों पर) सा. २२.१०.१

क्रि० संज्ञा गयां : गयांहं (जाने से) सा. २.१६.२

कहियां : कहियांहं (कहने से) सा. २.१६.१

क्रि० वि० माल्हंतां : माल्हंतांहं (खिलवाड़ करते हुए) सा. १६.२७.१

औचित्तां : औचित्तांहं (अनचित्ते में) सा. १६.२७.२

(कोष्ठक में जो अर्थ दिए गए हैं वे -ह अथवा -हं के योग से नहीं प्राप्त हुए हैं, अपितु वे पूर्वपदों की विभक्तियों से प्राप्त हुए हैं)

संधि-प्रक्रिया (मार्फोफोनिमिक्स)

२.७ : रचनात्मक प्रत्यय तथा क्रियापद के विवेचन में कुछ विशिष्ट विकारों के संबंध में संकेत किया जा चुका है। यहाँ उनके अतिरिक्त, क० ग्रं० में रचनात्मक रूपसर्ग तथा प्रत्यय, संज्ञापद, विशेषणपद तथा क्रियापद के अन्तर्गत प्राप्त विभिन्न विकारों का सैद्धान्तिक तथा विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। आधार ग्रंथ में

^१ दे० डॉ० मुरारीलाल उप्रेति: हि० प्र० वि०, १.२.१०.१.३, १.२.१०.५. ३.२, पृ० २०४, २०६

ई > उ।

II के अन्तर्गत विभिन्न संयोगों की तीन स्थितियाँ मिलती हैं— (अ) मुक्त-
+ रचनात्मक उपसर्ग तथा प्रत्यय, (आ) मुक्त पदग्राम + विभक्तिमूलक प्रत्यय
(क) मुक्त पदग्राम + मुक्तपदग्राम। दो भिन्न पदग्रामों के एक ही अनुक्रम में आने
कार के विकार उत्पन्न हुए हैं— (क) प्रथम पदग्राम के अंतिम तथा द्वितीय
के आरंभिक ध्वनिग्राम-संबंधी विकार और (ख) द्वितीय पदग्राम के संयोग से
ग्राम की अंतिम ध्वनि के पूर्ववर्ती (उपधा) अथवा उससे भी पूर्व की ध्वनि में
ऊ > उछ।

२.७.१ : मुक्त पदग्राम + रचनात्मक उपसर्ग तथा प्रत्यय :

२.७.१.१ : रचनात्मक उपसर्ग + मुक्त पदग्राम :

अपवादका प्र + जांच > अजंच सा. ८.१५.१ (दीर्घ का ह्रस्व = आ > अ)
छंदपूर्ति द्वारा प्रतिबंधित
उ > ओ प्र + जाप > अजपा सा. ६.१०.१ (दीर्घ का ह्रस्व = आ > अ)
पदग्राम द्वारा प्रतिबंधित

ए > इ र + गंध > दुरगंध + इ > दुरगंधि प. ६६.२
अविकृत

ओ > उ र + आचार > दुराचार + ई > दुराचारी सा. १५.७३.२ (र + आ)
व + सुध > बिसूध + आ > बिसूधा र. १२.७ (ह्रस्व का दीर्घ = उ > ऊ)
छंदपूर्ति द्वारा प्रति०

२.७.१.२ : मुक्त पदग्राम + रचनात्मक प्रत्यय

२.७.१.२.१ : ध्वन्यात्मक रूप से प्रतिबंधित :

जा चुका > तपा प. १६८.४ सांस + आ > सांसा प. ८५.५
पा > बुढापा प. ६८.४ बाट + आऊ > बटाऊ सा. १४.३.२
त > कुसलात सा. २६.८.२ रस + आल > रसाल प. १४८.३
नीं > तुरकानीं प. १६३.८ बनिज + आरा > बनिजारा प. १२६.६
री > भिखारी प. ४२.७ चेत + आवनीं > चैतावनीं सा. १५.३१.१
संज्ञा : नि > वा > भुलावा सा. १५.५७.२ कुकुर + इ > कुकुरि प. १४०.५
पा > जाचिग प. ११८.३ सुबास + इक > सुबासिक प. १०१.६
भू > सुखित प. १६७.४ हठ + इल > हठिल प. १६.३
विशे : म > बिरहिन सा. २.३१.१ चांद + इनां > चांदिनां सा. ६.८.२
अने > ने > कामिनि प. ८०.७ तुरक + इनीं > तुरकिनीं प. १८२.४

द्वितीय प्रकार के विकारों में अपवाद भी मिलते हैं जिनका उल्लेख यथा-
अपवाद जाएगा।

चांद + इनौ > चांदिनौ सा. १.३.२ खाट + इया > खटिया प. १००.२
 सूर + इवां > सूरिवां सा. १.३०.१ साहिब + ई > साहिबी प. ७३.४
 फाग + उवा > फगुवा प. १४४.६ आब + ऊरी > अबूरी सा. १.२६.१
 हित + ऊ > हितू सा. १.१.२ बग + उला > बगुला सा. १८.५.२
 चित + एरा > चितेरा चौ. ११.२ बहन + ओई > बहनोई प. १४०.४
 कस + औटी > कसौटी सा. १६.४.२ खेल + औनां > खिलौनां प. १८६.३
 ठग + औरी > ठगौरी प. ४६.५ तप + (अ)नि > तपनि प. ६.१
 चोल + (अ)नां > चोलनां प. १४४.४

२.७.१.२.२ : ध्वन्यात्मक तथा पदशामिक रूप द्वारा प्रतिबंधित :

आकारान्त शब्द व्यंजनांत हो जाते हैं—

रसनां + ऊ > रसनूं प. ४१.४ मिरगा + (अ)वा > मिरगवा प. १२४.३
 रहटा + (अ)वा > रहटवा प. १३६.३ गदहा + रा > गदहरा सा. २५.६.२
 सोनां + हां > सुनहां प. १३८.३ चरखा + उला > चरखुला प. ११०.२
 कुहा + एरा > कुहेरा प. ८५.१

२.७.१.२.३ : दो पदशामों के संयोग में प्रथम के प्रथम ध्वनि में परिवर्तन :

इ > ए : (केवल एक उदा०) पंखी + रू > पंखेरू सा. ३२.५.१

ई > इ : -इया, -इयां, -हार से प्रतिबंधित

पाटी + इया > पटिया प. २६.४ जोगी + इया > जोगिया प. १५१.३
 नगरी + इया > नगरिया प. ६५.१ माटी + इया > मटिया प. १००.२
 साईं + इयां > सांइयां सा. ६.७.१ पांनीं + हार > पनिहार प. १५५.८

ऊ > उ : (केवल दो उदा०)

बाबू + उल > बाबुल प. ११०.५ कालू + उवा > कलुवा प. १४२.६

२.७.१.२.४ : प्रथम ध्वनि की पूर्ववर्ती (उपधा) अथवा उससे भी पूर्व की ध्वनि में परिवर्तन :

आ > अ : -आका, -इया, -उवा, -री, -आऊ, ऊरी -औनां से प्रतिबंधित

भाला + आका > भलाका सा. १४.७.१ राम + इया > रमइया प. ८२.१
 खाट + इया > खटिया प. १००.२ पाटी + इया > पटिया प. २६.४
 फाग + उवा > फगुवा प. १४४.५ पाग + री > पगरी प. ४४.५
 लाल + आऊ > ललाऊ प. १७६.४ बाट + आऊ > बटाऊ सा. १४.३.२
 आब + ऊरी > अबूरी सा. १.२६.१ नास + औनां > नसौनां र. ६.२

अपवादः सांई + इयां > सांइयां सा. ६.७.२ (सइयां होना चाहिए)

कांटा + (अ)वा > कांटवा सा. १५.१०.२ (कंटवा होना चाहिए)

ई>इ : -आई, -आरी, -आवनीं, -रा से प्रतिबंधित

चीकन+आई>चिकनाई प. ३४.१२ भीख+आरी>भिखारी प. ४२.७

पीक +आरी>पिचकारी प. १४४.३ पीर+आवनीं>पिरावनीं

सा. २.३३.१

जीय+रा>जियरा प. २.३२.२

अपवाद : जीय+रा>जीयरा प. १५२.७ (जियरा नहीं हुआ)

ऊ>उ : -आरी, -आपा, -आवा, -आउर, -ई, -ड़ा से प्रतिबंधित

पूजा+आरी>पुजारी प. १८७.८ वृढ़+आपा>बुढ़ापा प. ६८.४

भूल+आवा>भुलावा सा. १५.५७.२ जूझ+आउर>जुझाउर प. ५६.६

दूसर+ई>दुसरी प. १३१.७ चूहा+ड़ा>चुहाड़ा प. ६५.१०

अपवाद : रूख+ड़ा>रूखड़ा सा. २२.१४.१ (रूखड़ा नहीं हुआ)

उ>ओ : (केवल दो उदा०)

मुह+ड़ी>मोहड़ी प. ८३.६

दुइ+सर>दोसर प. १३१.७

ए>इ : (केवल दो उदा०)

बेटी+इया>बिटिया प. ११०.४

खेल+औनां>खिलौनां प. १८६.३

ओ>उ : (केवल दो उदा०)

लोह+आर>लुहार सा. १६.२.२

सोनां+हां>सुनहां प. १३८.३

२.७.२. : मुक्त पदग्राम+विभक्तिमूलक प्रत्यय :

२.७.२.१ : संज्ञा तथा विशेषणपद :

२.७.२.१.१ : मुक्त पदग्राम+लिंग-प्रत्यय :

रचनात्मक प्रत्यय के अन्तर्गत स्त्रीलिंग के प्रत्यय-संयोग का विचार किया जा चुका है, उनसे भिन्न स्थिति इस प्रकार है—

आकारान्त संज्ञा तथा विशेषण पु० प्रातिपदिक -ई प्रत्यय के संयोग के पूर्व व्यंजनांत हो जाते हैं—

संज्ञा : चिउटा +ई>चिउटी सा. १०.८.१ चेला +ई>चेली प. १६०.५

पनिहारा +ई>पनिहारी सा. ४.११.१ बकरा +ई>बकरी प. १८३.७

भंवरा +ई>भंवरी प. ७५.६ सखा +ई>सखी प. १०६.४

विशे० : मोटा +ई>मोटी सा. ३१.१६.१ काला +ई>काली सा. ४.३४.२

ओछा +ई>ओछी प. ४६.६ खरा +ई>खरी प. ६५.६

२.७.२.१.२ : मुक्त पदग्राम+वचन के प्रत्यय :

आकारान्त संज्ञा प्राति० बहुवचनबोधक -अन से पूर्व व्यंजनांत हो जाते हैं—

कुजड़ा + अन > कुजड़न सा. १८.१२.२ ग्वाला + अन > ग्वालन र. ३.४
मुरदा + अन > मुरदन प. १०५.१

ईकारांत प्राति० में -अन के संयोग के पूर्व पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है और -अन का अ य में परिवर्तित हो जाता है—

आंखी + अन > अंखियन सा. २.३६.१ (आ > अ)

ऊकारांत में -अन के संयोग के पूर्व प्रथम ध्वनि ह्रस्व हो जाती है और -अन के अ का लोप हो जाता है—

साधू + अन > साधुन सा. ३३.७.२ (ऊ > उ)

ईकारांत संज्ञा प्राति० में व० व० के -इयां (आं) संयुक्त होने के पूर्व प्रथम पद की अंतिम ध्वनि ई ह्रस्व हो जाती है—

कली + इयां > कलियां सा. १६.३४.१ कड़ी + इयां > कड़ियां सा. १६.३८.१
आंखड़ी + इयां > आंखड़ियां सा. १६.८.२ डावरी + इयां > डावरियां
सा. १६.१०.२

मोती + इयां > मोतियां सा. २२.१०.२ इंद्री + इयां > इंद्रियां सा. १४.६.२

अंखियां में पूर्ववर्ती आ का अ भी हो गया है सा. २.३२.१

ईकारांत संज्ञा प्राति० में -इन के संयोग के पूर्व दीर्घ ध्वनि ह्रस्व हो जाती है—

मोती + इन > मोतिन सा. २८.४.१ आंखी + इन > आंखिन प. १३७.२
लोई + इन > लोइन प. १७३.८

आकारांत संज्ञा तथा विशेषण प्राति० -एं, -ए, -ऐ, -ऐं, -ओं (व० व०) तथा संयोगात्म रूप ए० व० के -ऐ, -ऐं लगने से पूर्व व्यंजनांत हो जाते हैं—

संज्ञा : द्यौहड़ा + ए > द्यौहड़े सा. २३.७.२ वरा + ए > वरे प. ११४.१
जसवा + ऐ > जसवै र. ३.३ सदका + ऐ > सदकै सा. १.२०.१
चिड़िया + ऐं > चिड़िऐं सा. १५.५४.१ कलमां + ऐं > कलमै प. १८४.५

विशे० : अनचीन्हां + ए > अनचीन्हें र. ११.६ अंसा + ए > अंसै प. ४०.१

घना + ए > घने प. ६७.१० लंबा + ए > लंबे सा. २३.७.२

अंधरा + ऐ > अंधरै प. २३.८ चौड़ा + ऐ > चौड़ै सा. १६.२६.२

ताता + ऐं > तातै सा. १.३०.१ सयानां + ऐं > सयानै प. ८६.४

बड़ा + ओं > बड़ों सा. १५.६३.२

२.७.२.२ : क्रियापद + विभक्तिमूलक प्रत्यय :

अकर्मक धातु से सकर्मक धातु बनाने में विभक्तिमूलक प्रत्यय लगने से पूर्व धातु में ही परिवर्तन हो जाता है। ऐसी स्थिति में विभक्तिमूलक प्रत्यय को ० शून्य प्रत्यय की संज्ञा दे सकते हैं। धातु में परिवर्तन इस प्रकार होता है—

अ>आ, इ>ए, ऊ>ओ

अ>आ: तर + Ø > तार प. ८१.४ कट + Ø > काट सा. ४.२५.१
 बंध + Ø > बांध प. १७६.१० लद + Ø > लाद सा. २६.४.२
 कढ़ + Ø > काढ़ सा. २१.२३.१
 इ>ए : मिट + Ø > मेट सा. १६.१६.१ फिर + Ø > फेर सा. २५.६.२
 ऊ>ओ : दूट + Ø > तोड़ सा. ३१.१७.२

मूलधातु में प्रेरणार्थक प्रत्यय के संयोग से आ>अ, ऊ>उ, ए>इ और ओ>उ ध्वन्यात्मक परिवर्तन (एकाक्षरी धातु तथा एकाधिक अक्षरों वाली धातु के पूर्ववर्ती ध्वनियों में) हो जाते हैं—

आ>अ : बाज + आ > बजा सा. १.५.२ जाग + आ > जगा सा. २.४३.१
 ऊ>उ : मूड़ + आव > मुड़ाव सा. २५.१६.१ छू + व + आ > छुवा प. १६०.८
 बूझ + आव > बुझाव प. १६१.७
 ए>इ : देख + आ > दिखा सा. ४.२१.२ खेल + आ > खिला र. ३.३
 ओ>उ : छोड़ + आ > छुड़ा प. १७५.६

दे धातु में प्रेरणार्थक प्रत्यय के संयोग से ए>इल होता है ।

दे + आ > दिला प. ४२.६

कर, ले, दे धातुओं में भूतकालिक तथा वर्तमान आज्ञार्थ -इए, -इअै के संयोग से जो रूप बनता है उसका उल्लेख क्रिया (२.५) के प्रारंभ में ही किया जा चुका है । मर धातु के विकृतरूपों का उल्लेख भूतकालिक -आ प्रत्यय के साथ किया जा चुका है । कुछ व्यंजनांत तथा स्वरांत धातुओं में भूतकालिक -आ, -औ तथा वर्तमान आज्ञार्थ -इए, -इअै प्रत्ययों के पूर्व -य-, -व-, -ज- आदि के आगम का उल्लेख भी क्रिया के प्रारंभिक संकेतों में किया जा चुका है । इन धातुओं के संबंध में निश्चित नियम का निर्धारण नहीं किया जा सकता; क्योंकि, एक ही अन्त वाली कुछ धातुओं में इनका आगम होता है और कुछ में नहीं होता, इसके विस्तृत उदाहरण भूतकालिक क्रिया के विवेचन में द्रष्टव्य हैं । यहाँ केवल ओकारांत धातु का उदाहरण पर्याप्त होगा ।

रो + आ > रोआ प. ६०.६ (-य-, -व- का आगम नहीं हुआ)

बो + य + औ > बोयौ प. ६०.२ (-य- का आगम हुआ)

भविष्य निश्चयार्थ के ग रूप वाली क्रिया के साथ -व- का आगम हुआ है—

सो + व + ऐ-गा > सोवैगा सा. ३.१६.२

पा + व + अहि-गे > पावहिगे प. ५७.२

भविष्य निश्चयार्थ के -ऊं-गा प्रत्यय के संयोग में ईकारांत धातु के (ई) दीर्घ का ह्रस्व हो जाता है—

पी + ऊं-गा > पिऊंगा प. १६३.२

जी + ऊं-गा > जिऊंगा प. १६३.१

२.७.३ : मुक्त पदग्राम + मुक्त पदग्राम :

अमर + पुर > अमरापुर सा. ३.२१.२, २५.११.२

आठ + सठि > अठसठि प. १७१.४

आठ + सठ > अठसठ प. ३५.८

भूठ + भूठ > भूठैभूठ र. १४.६

ठांव + ठांव > ठांवै ठांउं सा. ६.३६.२

दीन + नाथ > दीनांनाथ प. ४३.७, सा. २५.७.२

पद + अरथ > पदार्थ प. ४५.६

पढ़ि + पढ़ि > पढ़े पढ़ि प. ८५.५

वड़ा + गांव > वड़गांव सा. ४.३७.२

वकि + वकि > वकतै वकि प. ११५.६

भरि + भरि > भरे भरि सा. ४.२०.२, ६.२६.१

मरि + मरि > मरे मरि सा. ३१.१२.१

मुहि + मुहि > मुहै मुहि सा. २१.६.२

सात + गांठी > सतगांठी सा. १२.४.१

सूत + सूत > सूतैसूत प. १५०.५

सूर + तन > सूरतन सा. १४.७.१

हाटि + हाटि > हाटै हाटि सा. १६.३.२

समास-रचना

२.८ : क० ग्रं० की भाषा में विस्तृत और दुर्बल सामासिक पदावली नहीं मिलती, क्योंकि उसकी भाषा सरल, अनलंकृत, चमत्कार-रहित और सजाने-सवारने की प्रवृत्ति से दूर, एक सामान्य तथा जनभाषा है। किन्तु, हिन्दी-समास-रचना की

प्रवृत्ति के अनुसार उसमें दो या दो से अधिक शब्दों के मेल से बने हुए समास के पर्याप्त उदाहरण प्राप्त किए जा सकते हैं ।

समास की स्वतंत्र शब्दों के मेल से बना एक शब्द—इसी परिभाषा के आधार पर क० ग्रं० के समासों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । इस परिभाषा के आधार पर उपसर्ग और प्रत्यययुक्त रूपों—निडर, निधड़क, ग्यानवंत, सिकलीगर इत्यादि शब्दों को समास के अन्तर्गत स्थान नहीं दिया गया है । इस प्रकार केवल मुक्त-पदग्राम + मुक्त पदग्राम द्वारा निर्मित समास ही अध्ययन के विषय बन सके हैं ।

समास का अध्ययन ध्वनि, रूप, अर्थ तथा शब्द-रचना आदि सभी दृष्टियों से संभव है, किन्तु यहाँ रूपात्मक दृष्टि से ही उसका अध्ययन किया गया है । क० ग्रं० की समास-रचना में तत्सम, तद्भव, विदेशी और देशज सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग हुआ है, किन्तु उनका अलग-अलग अध्ययन न करके रूप-रचना की दृष्टि से उनका सम्मिलित अध्ययन ही किया गया है ।

२.८.१ संज्ञावाची समास'

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और क्रियाविशेषण तथा अव्यय पदों के पारस्परिक सहयोग से बने हुए संज्ञापद-समास संज्ञावाचीसमास कहे जा सकते हैं । इसी प्रकार विशेषणवाची, सर्वनामवाची, क्रियावाची और क्रियाविशेषणवाची समास नामकरण भी किया जा सकता है । प्रत्येक उदाहरण की केवल एक छंद-संख्या का उल्लेख किया गया है—

संज्ञा + संज्ञा = संज्ञा

क० ग्रं० में इस श्रेणी के ३५० सामासिकपद मिलते हैं जो सामान्यतः प्रयुक्त होते देखे जाते हैं । इनमें दो से अधिक संज्ञाओं के संयोग से भी (संज्ञावाची) समास प्राप्त हुआ है । कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अंकुर बीज र. ७.८, अजामेल गज गनिका प. २०.४

अल्लह राम प. १७७.१, आसा तूस्ना सा. ३१.२७.२

इला पिंगला सुखमनि प. ११३.४, कनक कामिनी सा. ३०.८.२

करम भरम विधि निषेध प. २०.६, काम क्रोध मद मंछर प. ४०.७

गोरख भरथरी गोपीचंदा प. ४८.७, गिरि डूंगर सिखरांह सा. २२.११.१

जोग जग्गि तप प. ३३.४, डोल दमांमां गुडगुड़ी सा. १५.५.१

तस्टा टोकनी सा. २१.२५.१, दाया धरम ग्यान गुर सेवा प. ४०.८

'समास का वर्गीकरण डॉ० रमेशचन्द्र जैन के शोध-प्रबंध 'हिन्दी समास-रचना का अध्ययन' के आधार पर प्रस्तुत किया गया है ।

दादुर दामिनि पवनां र. १३.५, घू पहलाद विभीखन सेखा प. ४८.५
 भाव भगति बिसवास र. १.७ मनसा वाचा कर्मनां सा. ३.७.२
 माता पिता वनिता सुत संपति प. ७३.६, राजा रांनं छत्रपति सा. २४.५.२
 मानं महातम प्रेमरस गरवातन गुन नेहु सा. ३१. २३.१
 सनक सनंदन सिव मुकादि प. ४३.५, सतगुर साह संत सौदागर प. ४.१
 सिव विरचि नारद मुनि जोगी प. ४८.४, मुखदेउ ऊधौ अकूर प. १६८.५

क्रियाजात संज्ञा + क्रियाजात संज्ञा = संज्ञा

अमिलन मिलन प. १३०.१५, जरन मरन प. १३२.२
 जांमन मरन प. १४०.२, तरन तारन प. ४०.४
 बोल अबोल चौं. ३.२

संज्ञा + क्रियाजात संज्ञा = संज्ञा

इंद्रीजीती प. १६५.४, गरब प्रहारी र. ७.६
 जटाधर प. १०१.८, जिउधर प. ४१.३
 तत ग्याता प. १३८.७, नरक उधारन प. १४६.१०
 पेट भरन सा. ४.२७.२, विसहर प. ३४.१३
 बुडभुज प. ६४.४, ब्रतधारी प. १७६.११
 मनजीती प. ६०.१०, मन भावतु सा. १४.१.१
 मन मंजन प. १२३.५, सारिय घर प. १३१.१२
 सुत धार र. १०.६

क्रि० संज्ञा + संज्ञा = संज्ञा

पढन साल प. २६.३

संज्ञा + विशेषण = संज्ञा

अखिर एक चौं. ४१.१, कसनि बहतरि प. १२६.४
 कौड़ी कांनों प. १६३.६, चक्रखटु प. १३४.३
 चित चकमक सा. २६.१३.२, चित बंचल सा. २६.४.२
 जांमन मरन दोऊ प. १४०.२, नरनारी सब सा. ३०.५.१
 भवन चतुरदस प. ५१.५, भगति नारदी प. ८६.७
 मदन चोर प. ४३.३, मन अस्थिर सा. १६.२५.१
 मन मैवासी सा. २५.३.१, राम पियारा सा. ३.२०.१
 लोक त्रै चौं. १.१, लोग बटाऊ सा. १४.३.२
 हंस बटाऊ सा. १६.२२.२, है मै बाहन सघन घन सा. ४.१०.१

संज्ञा + विशेष० + संज्ञा = संज्ञा

पांन कपूर सुवासिक चंदन प. १०१.६

विशेष० + संज्ञा = संज्ञा

अकल निरंजन सकल सरीरा प. ४८.८, अविगत अपरंपार ब्रह्म र. २.५
 अखंड मंडल मंडित मंड प. १३०.७, अपरंपार पार परसोतम प. १०८.८
 अविरथ झूठा सकल संसारा र. १६.१, अलख पुरुख प. १४५.५
 अलख निरंजन र. १४.१, निरंजन देव प. ६३.६
 अष्ट गगन प. १०८.४, अठसिधि प. ३१.२, अमरपद र. ६.८
 अजपा सुमिरन जाप प. १४५.२, अधर चाल प. १४८.३, अधूरी सीख सा. १.२६.१
 एकै आखर सा. ३३.३.२, एक नाम सा. ३१.१५.२, एक राम प. १८१.८
 एक सबद सा. २.३१.२, एक बूंद प. ५१.२, एकमत सा. २.२६.१
 कांचा कुंभ सा. १५.५६.१, कुबुधि कमान प. २५.५, खट करमां र. ७.२
 खट आत्म र. १४.४, खट दरसन र. १४.४, खट रस र. १४.४
 खट चक्र प. १२१.५, चंचल मनुवां सा. २६.१०.१, चतुरभुज प. ७७.१
 चारि पदार्थ प. ४५.६, चार वेद छ सास्त्र र. १४.५, चौदह भुवन प. १०५.६
 तिरदेवा प. १५२.४, तीन लोक प. १४६.३, त्रिकुटी महल प. १४४.७
 त्रिगुण प. ५३.८, तिरगुन प. १६३.२, त्रिविध सा. ३१.२१.१
 त्रिभुवन चौं. २१.१, त्रीखंड प. १३०.७, दास कबीर सा. २१.८.२
 दीन दयाल प. १५.६, नवग्रह प. १४.३, पंच तत्त प. १६४.३
 परम तत्त प. १७५.४, परम पद प. ११६.८, परम पुरुख प. २६.६
 परम निधान प. ६७.४, परमसुख चौं. ३४.१, परम गियांन प. १२३.११
 परम जोति चौं. ६.१, परमगति प. १७४.५, परदेस सा. १५.४४.२
 पुरुख जनम प. ४६.३, परम सयानप चौं. १०.२, सकल बियाधि प. २.६
 सभै जग प. ८६.६, सात दीप सा. १६.६.१

सर्व० + सर्व = संज्ञा

मैं तैं प. १६५.६ (मैं तैं आपा दूरि न डारी)
 मैं मेरा प. ६५.७ (कहै कबीर छाड़ि मैं मेरा)
 मैं मेरी र. १७.३ (मैं मेरी करि बहुत बिगूता)
 मोर तोर र. १७.८ (मोर तोर महं जर जग सारा)

क्रिया (कृ०रूप) + क्रिया (कृ०रूप) = संज्ञा

देखा देखी प. १४६.५

सर्व + विशेष० = संज्ञा

आपापर प. १०.५

अव्यय + संज्ञा = संज्ञा

ध्रिग स्वारथ र. १७.८

अव्यय + अव्यय = संज्ञा

हा हा प. १६.२३.२ (हा हा करते ते मुए)

२.८.२ : विशेषणवाची समास :

संज्ञा + संज्ञा = विशेषण

खोर रूप सा. २७.१.१, ग्यांन रूप र.२.५, पारस रूपी सा. ६.४१.१

पावक रूपी सा. २६.१३.१, रतन जनम प. ६०.१, लौह रूप सा. ६.४१.१

सारंग पांति प. २१.४, हंस रूप सा. २७.१.२

संज्ञा + विशेष० = विशेषण

अस्तुति निदा दोड विवरजित प. ३२.३, आसामुखी सा. २३.८.२

करम वद्ध प. १५६.६, करम विवरजित र. १४.३, कांम अंध प. ६७.५

कांम क्रोध मद लोभ विवरजित प. ३२.२, कांसि कुडुवा सुत कलिन सा. २१.२२.२

गरव गहेली प. १३५.४, गुन विह्वल र. ४.७, घट व्यापक प. १०५.६

चित्र विचित्र चौ. ११.२, जगत पियारी प. १६२.१, प्रेम मगन प. १४.५

भगत बछल प. ४०.६, भार लदाऊ प. १७६.४, मन बंछित प. ४७.४

मन मुखी सा. २५.२२.१, मोह मस्त प. ४.६, सवद बिवेकी सा. २१.१४.२

संज्ञा + क्रियाजात संज्ञा अथवा कि०संज्ञा = विशेषण

आसा जीत सा. १२.८.१, कनफूका प. १६५.६, दुखभंजना प. ७१.२

संज्ञा + क्रिया (क०रूप) = विशेषण

अरथ करंता प. १६१.६, गह भरा सा. १४.२६.१, जोग करंता प. ६२.४

पात भरंता सा. १६.३६.१, पेट समाता सा. २३.६.१ वेद पढंता प. १६१.५

मूल विनंठा सा. २४.१.२, राज करंता प. ६२.३, लौन बिलंगा सा. ६.४०.२

सेवा करंता प. १६१.५

भूत०कृदंत + संज्ञा = विशेषण

अद्धता मूल सा. १५.८०.२

विशे० + विशे० = विशेषण

अजर अमर प. १५२.३, अगम अगाध सा. १४.१५.१, अगम अगोचर प. १३०.८

अगम द्रुगम प. १३०.३, अनंत अपार सा. ३.१३.२, अविहड़ सदा अभंग सा. ८.१६.१
 अविगत रता सा. १२.८.१, अरध सरीरी प. १७८.६, उदात उजागर प. १७६.७
 ऊजल निरमल सा. १२.३.१, कांमीं क्रीधी मसखरा सा. २१.२६.२
 कुचिल कुरूप प. ६४.५, गहिर गंभीर प. २४.३, ग्यानीं ध्यानीं बहु उपदेसी प. १८६.५
 चतुर बिबेकी प. १३४.७, ताता सीरा सा. १६.६.१, दुखित सुखित प. १६७.४
 धीर गंभीर प. ४.५, नादी वेदी सबदी मोनीं प. ८६.६
 निसप्रेही निरधार सा. २५.१७.२, मगन दिवांनीं प. १७.४, लाख करोरि सा. १५.२१.२
 लुंचित मुंडित मोनि प. १०१.८, सतगंठी सा. १२.४.१, सरब बिआपी प. ३६.६
 सर अपसर सा. ४.२७.२, सरस निरस चौं. ३३.१, सूधा सूभर प. १२२.७
 हरुगरू र. २.५, हठिल दिवांनीं प. १६.३

क्रिया संज्ञा + विशेष = विशेषण

भानन गढ़न सवारन संमथ प. ६६.२

क्रिया (कृदंत) + क्रिया (कृदंत) = विशेषण

रहा सहा प. १६४.४

२.८.३ : सर्वनामवाची समास :

सर्व० + सर्व० = सर्वनाम

मोहिं तोहिं प. १८.१, मोर तोर प. १०४.२, हम तुम प. १६.४

विशे० + विशेष० = सर्वनाम

एक आध प. ३२.१

२.८.४ : क्रियावाची समास :

क्रिया + क्रिया = क्रिया

जानैं बूझैं सा. ३३.८.२, तरपै बरसै र. १३.६, फलै फलै सा. २७.५.१

पूर्व० क्रि० + पूर्व० क्रि० = पूर्व० क्रिया

गानि बूझि र. १६.२, जरि बरि सा. ३०.१७.२, ठोंकि बजाइ सा. १५.३०.२

नेरखि देखि प. १२३.१०, फटक पछोरि सा. १७.७.१, सोचि बिचारि प. १३५.७

२.८.५ : क्रियाविशेषणवाची समास :

संज्ञा + संज्ञा = क्रियाविशेषणपद

ह निशि प. १२८.३, घट घट प. १५५.१७, घर घर प. ६७.७

री घरी प. ४१.२, छिन छिन चौं. १२.२, जनम जनम प. १८८.७

ग जुग प. १६०.८, ठांएं ठांइं सा. ४.४.१, डार डार प. ७५.३

गरी डारी सा. ६.६, दिन दिन सा. २६.१०.२, दिन ही दिन सा. १५.३.१

दिनं राति सा. ३.१६.२, नगरी नगरी प. १५५.११, निस घांस सा. २.४८.१
निसि जांस सा. २४.२४.१, निस दिन सा. २.४७.१, निस वासुरि सा. ६.२८.२
परवति परवति सा. २.२४.१, पाती पाती प. १८७.३, वन वन प. ७५.३
वारवार सा. १५.४८.२, वारंवार सा. १२.६.२, मन ही मन प. ६६.६
राति दिवस सा. ३.४.२, रैन दिन प. १४.२

विशे० + विशे० = क्रियाविशे० पद

टुक टुक सा. १३.११.१

विशे० + संज्ञा = क्रियाविशे० पद

आठ पहर सा. २.४०.२, इकतार सा. १५.७४.१, इक निमिख प. ४०.४
इक संगी र. १५.२, चहुं दिसि सा. ३.२३.१, चारि दिवस सा. १३.१४.२
दूजी वार सा. २६.२१.२, बहु बिधि प. ६३.१२

संज्ञा + विशे० = क्रियाविशे० पद

दिन दस सा. १५.३.१, दिनां चारि प. ७५.५, दिवस दोइ सा. १५.४५.२

सर्व० + संज्ञा = क्रियाविशे० पद

इहि बिधि प. १८३.२, किहि बिधि सा. ३१.२.२

सर्व० + सर्व० = क्रियाविशे० पद

आपहि आप प. १०.४

क्रियाविशे० + क्रियाविशे० = क्रियाविशे० पद

अरध उरध सा. १.३२.१, आजुहि काल्हि सा. १६.२४.२, आसि पासि प. १३१.१
जत तत च. १८६.२, जादि तदि सा. २.२८.१, जहं तहं प. १४५.४
जहां तहां प. ८७.८

सर्व० + क्रियाविशे० = क्रियाविशे० पद

किस लागै प. १६४.८

संज्ञा + क्रियाविशे० = क्रियाविशे० पद

पल भरि प. ६२.२

क्रियाविशे० + विशे० = क्रियाविशे० पद

भरपूरा प. १०२.६, भरपूरि प. ३०.४

क्रिया (कृ० रूप) + क्रिया (कृ० रूप) = क्रियाविशे० पद

आवत जात प. १०२.१, खिरत खपत चौ. ४०.१, गिरत परत प. ५८.८
हिलमिल कै सा. सा. ७.४.१

उपर्युक्त संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, क्रिया तथा क्रियाविशेषणवाची समासों के पदों की प्रधानता, विभक्ति तथा प्रत्ययों के लोप-अलोप, शब्दांश आगम आदि की दृष्टि से अनेक अन्य भेद भी किए जा सकते हैं—

२.८.६ : प्रथमपद-प्रधान समास : पद १ + पद २ = पद १

ग्यांन खड़ग सा. १४.३५.२ (संज्ञा १ + संज्ञा २ = संज्ञा १)

भरम जेवरी प. १२३.८ (संज्ञा १ + संज्ञा २ = संज्ञा १)

रांम पियारा सा. ३.२०.१ (संज्ञा + विशेष० = संज्ञा)

२.८.७ : द्वितीयपद-प्रधान समास : पद १ + पद २ = पद २

म्रिग छाला प. २४.४ (संज्ञा १ + संज्ञा २ = संज्ञा २)

अधूरी सीख सा. १.२६.१ (विशे० + संज्ञा = संज्ञा)

ध्रिग स्वारथ र. १७.८ (अव्यय + संज्ञा = संज्ञा)

मोह मस्त प. ४.६ (संज्ञा + विशे० = विशेषण)

सत गंठी सा. १२.४.१ (विशे० १ + विशे० २ = विशेषण २)

किस लागै प. १६४.८ (सर्व० + अव्यय = क्रियाविशेषण)

२.८.८ : अन्यपद-प्रधान समास : पद १ + पद २ = पद ३

आपापर प. १०.५ (सर्व० + विशे० = संज्ञा)

मैं मेरी र. १७.३ (सर्व० + सर्व० = संज्ञा)

हा हा सा. १६.२३.२ (अव्यय + अव्यय = संज्ञा)

देखा देखी प. १४६.५ (क्रिया(कृ०) + क्रिया (कृ०) = संज्ञा)

सारंगपानि प. २१.४ (संज्ञा + संज्ञा = विशेषण)

कन फूँका प. १६५.६ (संज्ञा + क्रि०संज्ञा = विशेषण)

दुख भंजनां प. ७१.२ (संज्ञा + क्रि०संज्ञा = विशेषण)

पेट समाता सा. २३.६.१ (संज्ञा + क्रिया (कृ०) = विशेषण)

अह निसि प. १२८.३ (संज्ञा + संज्ञा = क्रियाविशे०)

ऐँडौ टेढौ प. ७३.२ (विशे० + विशे० = क्रियाविशे०)

दूजी बार सा. २६.२१.२ (विशे० + संज्ञा = क्रियाविशे०)

दिन दस सा. १५.३.१ (संज्ञा + विशे० = क्रियाविशे०)

इहि विधि प. १८३.२ (सर्व० + संज्ञा = क्रियाविशे०)

हिलमिल कै सा. ७.४.२ (क्रिया + क्रिया = क्रियाविशे०)

२.७.९ : उभयपद-प्रधान समास : पद १ + पद २ = पद १-२

रहीमां रांमां प. १७७.१२ (संज्ञा १ + संज्ञा २ = संज्ञा १-२)

- चतुर विवेकी प. १३४.७ (विशे० १ + विशे० २ = विशेषण १-२)
 हंम तुम प. १६.४ (सर्व० १ + सर्व० २ = सर्वनाम १-२)
 तरपै वरसै र. १३.६ (क्रिया १ + क्रिया २ = क्रिया १-२)
 जदि तदि सा. २.२८.१ (क्रियाविशे० १ + क्रियाविशे० २ = क्रियाविशे० १-२)

२.८.१० : व्यधिकरण समास :

(जिसमें विभक्ति के लोप की प्रतीति होती हो)

- भरम जेंवरी प. १२३.८, रांम कसौटी सा. १६.४.२, करम बद्ध प. १५६.३
 कांम अथ प. ६७.५, सवद विवेकी सा. २१.१४.२

२.८.११ : समानाधिकरण समास :

(जिसमें विभक्ति-लोप की प्रतीति न हो)

- लोक वेद सा. १.१४.१, संधिक साधक प. ४४.५, चंद सुरुज प. १५०.३
 गंगा जमुना प. १२३.५, उदात उजागर प. १७६.७, एक मन सा. २.२६.१

२.८.१२ : पदांश-आगम समास :

- मन ही मन प. ६६.६ (-ही- पदांश का आगम)
 दिन ही दिन सा. १५.३.१ (-ही- पदांश का आगम)

२.८.१३ : पराश्रित पदीय समास :

(जिसमें पद परस्पर आश्रित होते हैं)

- बुड्भुज प. ६४.४, जिउधर प. ४१.३, जटाधर प. १०१.८
 सारिगधर प. १३१.१२,

२.८.१४ : अनन्याश्रित समास :

- प्रीति रीति सा. ११.७.१, जुरा मीच सा. १७.४.१, भगति भजन सा. ३.७.१

पुनरुक्तपद

- २.६ : क० श्रं० में संज्ञा + संज्ञा, विशेषण + विशेषण, सर्वनाम + सर्वनाम,
 क्रिया + क्रिया, पूर्वकालिक क्रिया + पूर्वकालिक क्रिया, वर्तमानकालिक कृदंत + वर्त-
 मानकालिक कृदंत, क्रियार्थक संज्ञा + क्रियार्थक संज्ञा तथा क्रियाविशेषण + क्रिया-

विशेषण के संयोग से पुनरुक्तपद प्राप्त हुए हैं। इनमें से कुछ अनुकरणात्मक पदों के संयोग से प्राप्त हुए हैं और दूसरे प्रकार के केवल पुनरुक्तपद ही हैं। एक ही पद दो और तीन बार तक एक साथ प्रयुक्त हुआ है। पर्यायवाची पदों की भी पुनरुक्ति हुई है—

२.६.१ : अनुकरणात्मक पदों या शब्दद्वैत द्वारा पुनरुक्ति :

आल जाल प. २६.४

जरजरा सा. १.१०.२, १५.२७.१

जीव सीव र. ६.२

ताला बेलि प. १५.५

ताला बेली सा. ४.१६.२

तनीं तागरी सा. ६५.१०

पखापखी सा. २०.७.१

बुदबुदा सा. १६.१७.१, १६.२१.१

समधी...लमधी प. ११०.७

२.६.२ : पुनरावृत्ति :

संज्ञा + संज्ञा

आगि आगि सा. ३०.११.२

गोरख गोरख प. १२८.६

जन जन सा. ११.४.२, १८.८.१

धनि धनि प. ५.६

पंडित पंडित सा. २१.११.२

पिउ पिउ सा. २.४८.२, १७.७.२

पियास पियास सा. ११.६.२

बिरहा बिरहा सा. २.१६.१

रांम रांम सा. २८.१.१

रांमहि रांम सा. २३.६.१

रांम रांम रांम प. १६८.१ (रांम रांम रांम रमि रहिए)

सबद सबद सा. १५.८८.१

सहज सहज सा. ३४.१.१, ३४.२.१ (सहज सहज सब कोइ कहै)

हक्क हक्क प. १८३.७ (क्रिया की दशा का व्योतक)

विशेषण + विशेषण

एक एक प. १८३.६

निरमल निरमल प. ३०.१

न्यारे न्यारे प. ६१.३ न्यारौ न्यारौ प. १७६.१

बड़ बड़ सा. १६.१४.२

बिलगि बिलगि प. ५३.२

भलो भलो सा. १५.३५.२

भांति भांति सा. ३२.२.१

लीर लीर सा. २४.१७.२

सगुरा सगुरा सा. २२.१०.२

हरए हरए सा. १५.२७.२

उपर्युक्त के अतिरिक्त अन्य पुनरावृत्तियों का उल्लेख विशेषण, सर्व०, क्रिया, क्रियाविशेष०, संधि और समास के प्रकरणों में किया जा चुका है।

२.६.३ : पर्यायवाची पदों की पुनरावृत्ति :

क० ग्रं० में दो प्रयोगों में एक ही वाक्य या वाक्यांश में एक ही अर्थ के लिए दो पर्यायवाचीपदों का प्रयोग प्राप्त होता है—

आलम दुनीं प. ६६.३ (आलम दुनीं सबै फिरि खोजी)

गिरि पहार प. २६.७ (प्रभु जल थल गिरि कीए पहार)



तीसरा अध्याय

कबीर-ग्रंथावली की भाषा

३.१ : कबीर की काव्य-भाषा के सम्बन्ध में बहुत दिनों से विद्वानों में विवाद चला आ रहा है। उनकी काव्य-भाषा को सधुक्कड़ी अर्थात् राजस्थानी, पंजाबी मिली खड़ीबोली, ब्रज और पूर्वी बोली^१, पंचमेल, खिचड़ी^२, बिहारी से प्रभावित^३, भोजपुरी^४ और ब्रज^५ एवं इनके अतिरिक्त विभिन्न विषयों को विभिन्न शैलियों अथवा बोलियों में लिखी गई, भाषा प्रमाणित करने का विद्वानों ने प्रयत्न किया है। कुछ लोग अपरिष्कृत^६ भी मानते हैं। मौखिक रूप से, कबीर की कव्य-भाषा के सम्बन्ध में ऊट-पटांग, दुरुह, बेमेल, बे-सिर-पैर आदि शब्द भी सुनने को मिलते हैं।

उपर्युक्त विचारों से प्रधानतः चार निष्कर्ष निकलते हैं—

(१) कबीर ने किसी एक भाषा का प्रयोग नहीं किया, अपितु जहाँ-जहाँ गए वहाँ की अथवा वहाँ के श्रोताओं की भाषा में रचना की।

(२) कबीर ने आ० भा० आ० भाषाओं के किसी एक प्राचीन रूप में अपना काव्य लिखा।

(३) कबीर ने जानबूझ कर विषय और विचार के अनुसार विभिन्न भाषाओं (कई भाषाओं का ज्ञान होने के कारण) में काव्य-रचना की।

^१ रामचंद्र शुक्ल-हि० सा० इति०, सं० २००७ वि०, पृ० ८०

^२ डॉ० श्यामसुन्दर दास-कबीर ग्रंथावली, सं० २००८, चतुर्थ सं०, पृ० ६७

^३ वही, पृ० ८०

^४ डॉ० उदय नारायण तिवारी-हिन्दी अनुशीलन, प्रयाग, वर्ष २, अंक २

^५ डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी-ओ० डे० बें० लें०, पृ० १६

^६ डॉ० शिव प्रसाद सिंह-सूर पूर्व ब्रजभाषा, पृ० १८४

^७ डॉ० रामकुमार वर्मा-हि० सा० आ० इति०, तृ० सं०, १९५४ ई०, पृ० २९७.

(४) पढ़े-लिखे न होने के कारण, घुमक्कड़ होने के कारण और भाषा के स्वरूप को ठीक से न समझने के कारण कबीर ने मनमानी और ऊट-पटांग भाषा में अपना उपदेश कह सुनाया ।

कबीर-साहित्य की भाषा के सम्बन्ध में उपर्युक्त अटकलवाजियों के चार प्रधान कारण हैं—

(१) कबीर-साहित्य-सम्बन्धी, कबीर के समय (सं० १४५५-१५७५) की कोई हस्तलिखित प्रति नहीं मिलती । १८वीं, १९वीं और २०वीं शती की प्रतियों में भाषा की अनेकरूपता मिलती है । इन पाठों के आधार पर कबीर-काव्य की भाषा का निर्णय करना कठिन था ।

(२) विभिन्न प्रतियों की भाषा में अनेक बोलियों और भाषाओं (खड़ी बोली ब्रज, राजस्थानी, अवधी, भोजपुरी, पंजाबी आदि) के विविध रूप मिलते हैं । उनके अद्भुत सम्मिश्रण के कारण भाषा का निर्णय करना कठिन था ।

(३) कबीर-साहित्य की भाषा को पूरबी, भोजपुरी, बिहारी से प्रभावित, आदि कहने का प्रमुख कारण बोली हमरी पूरबी अथवा हमरी बोली सो लखै, जो पूरब का होइ (क० ग्रं० सा. १८. १.१) आदि उल्लेख मिलना भी है । किन्तु, इतना उल्लेखनीय है कि अधिकांश विद्वान पूरबी बोली का हृदय देश में होने वाले आध्यात्मिक अनुभव की वाणी या आदिवाणी का अर्थ ग्रहण करते हैं—किसी देश या स्थान अथवा दिशा आदि की बोली का अर्थ स्वीकार नहीं करते । कुछ लोग स्पष्ट रूप से घोषणा करते हैं “कबीर बनारस के थे इसलिये उनकी भाषा पूर्वी या बनारसी रही होगी, यह तत्कालीन स्वीकृत भाषा-पद्धतियों के सही विश्लेषण से उत्पन्न तर्क नहीं कहा जा सकता ।”

(४) इन अनेकरूपताओं का वैज्ञानिक वर्गीकरण करके अर्थात् विभिन्न बोलियों एवं भाषाओं के विविध रूपों का व्याकरणिक प्रयोगावृत्तियों के सापेक्षिक आधिक्य के आधार पर, निर्णय करने का प्रयत्न भी नहीं किया गया । इस कारण विद्वानों ने कबीर की काव्य-भाषा में कई प्रकार के चक्षुओं से कई प्रकार के सीन देखे । जिसको जो अचछा लगा, जैसा लगा, वैसा ही बता दिया ।

वस्तुतः कबीर-साहित्य की भाषा का निर्णय एक वैज्ञानिक-पद्धति से करना आधिक संगत होगा । प्रस्तुत अध्ययन में इसी का प्रयास किया गया है । अतएव, कबीर ग्रन्थावली (२०० पद, २० रमैनी, १ चौतसी रमैनी तथा ७४४ साखियों) में प्राप्त

व्याकरणिक रूपों की प्रयोगावृत्तियों के सापेक्षिक आधिक्य के आधार पर कबीर के काव्य की मूलाधार बोली या भाषा का निर्णय किया गया है ।

३. २ : मूलाधार बोली :

इतना तो निश्चित रूप से स्वीकार करना पड़ेगा कि कबीर-ग्रन्थावली की रचना मध्यदेश अथवा हिन्दी-प्रदेश में बोली जाने वाली किसी एक अथवा कई बोलियों में ही हुई है । उसमें खड़ीबोली, ब्रज, राजस्थानी, कनौजी, बुन्देलखण्डी, अवधी, भोजपुरी, पंजाबी आदि के व्याकरणिक रूप प्रयुक्त हुए हैं । इनमें से कौन सी बोली मूलाधार है अथवा प्रधान है और किसका मिश्रण-मात्र हुआ है, इसका निर्णय व्याकरणिक रूपों की प्रयोगावृत्तियों के आधार पर ही सम्भव है और यही वैज्ञानिक भी है ।

यद्यपि क० ग्रं० में उपर्युक्त कई बोलियों के रूप प्रयुक्त हुए हैं फिर भी ब्रज, खड़ीबोली, राजस्थानी, अवधी और भोजपुरी के रूप ही विशेष रूप से मिलते हैं । सम्भव है, जो रूप इन बोलियों में मिलते हैं वे किन्हीं अन्य बोलियों और भाषाओं में भी मिलते हों, यह भी सम्भव है कि कुछ रूप इन बोलियों में मिलते ही न हों अथवा उन रूपों का, इन बोलियों का रूप होने का, ज्ञात प्रमाण न मिलता हो—जैसे-भविष्य निश्चयार्थ अन्यपुरुष ए० व० का -असी (जासी) प्रत्यय वाला रूप आधुनिक पंजाबी में मिलता है, आधुनिक हिन्दी में नहीं मिलता । सम्भव है, कबीर के समय यह काव्य-भाषा का रूप रहा हो । किन्तु, ऐसे रूपों के प्रयोग अत्यन्त सीमित हैं, अतएव क० ग्रं० की भाषा के रूपों का निर्णय करने के लिए उपर्युक्त ५ बोलियों को ही चुना गया है ।

प्रस्तुत अध्ययन में पद-रचना अथवा रूप-रचना-सम्बन्धी रूपों के आधार पर ही प्रयोगावृत्तियों का उल्लेख किया गया है ।

३. ३ : व्याकरणिक रूपों की सापेक्षिक प्रयोगावृत्ति :

विभिन्न बोलियों के रूपों के लिए डॉ० बाबूराम सक्सेना के 'एबोल्यूशन ऑफ अवधी', डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के 'ब्रजभाषा', डॉ० उदयनारायण तिवारी के 'भोजपुरी भाषा और साहित्य', एच० एस० कैलाश के 'ए ग्रामर ऑफ द हिन्दी लैंग्वेज', तथा डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया के 'ब्रजभाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक अध्ययन' ग्रंथों से सहायता ली गई है । राजस्थानी रूपों का उल्लेख कैलाश के 'ग्रामर' के अतिरिक्त डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, डॉ० उ० ना० तिवारी और डॉ० भाटिया के ग्रंथों में प्राप्त सूचनाओं के आधार पर किया गया है । खड़ीबोली-रूपों का उल्लेख इन ग्रंथों के अतिरिक्त डॉ० माताप्रसाद गुप्त के सुभाष के अनुसार भी यत्र-तत्र किया

क० ग्रं० के अनेक व्याकरणिकरूप या तो खड़ी, ब्रज, राजस्थानी, अवधी और भोजपुरी में समान रूप से प्रयुक्त मिलते हैं या किन्हीं चार में या किन्हीं तीन अथवा किन्हीं दो में और कुछ रूप केवल बोली विशेष में ही प्रयुक्त होते हैं। दो से अधिक बोलियों में प्रयुक्त रूपों को मिश्रित (केवल दो बोलियों में ही प्रयुक्त मिश्रित रूपों का उल्लेख यथास्थान किया गया है) तथा बोली विशेष में ही प्रयुक्त रूपों को अमिश्रित नामों से सूचित किया गया है। नीचे विभिन्न रूपों की प्रयोगावृत्तियों का सापेक्षिक अध्ययन विभिन्न सारणियों (टेबुल्स) द्वारा किया गया है—

गया है। संभव है, दो-एक रूप विवादास्पद होने अथवा समुचित आधारों के अभाव में किसी बोली में उल्लिखित न हो सके हों अथवा किसी बोली में (सुभावों के आधार पर) सामान्यतः उनमें प्रयुक्त न होने पर भी, उल्लिखित किए गए हों।

क० ग्रं० में प्राप्त जिन रूपों का उल्लेख उपर्युक्त ग्रंथों में नहीं हुआ है, उन्हें बोली विशेष की प्रकृति को देखते हुए तथा गुरुजनों के सुभाव के अनुसार उसी बोली के अन्तर्गत 'संभावित' रूप मानकर उल्लिखित किया गया है। ऐसे स्थलों पर संकेत कर दिया गया है।

प्रयोगावृत्ति (प्रथम प्रकार)

संज्ञा-वियोगात्मक रूप, सारणी नं० १

२३८

मूलरूप	खड़ीबोली	ब्रज	राजस्थानी	अवधी	भोजपुरी
आकारांत पु० तारा वर्ग	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०
व्यंजनांत स्त्री० बात वर्ग	-ए	-ए, -ऐ		-ए	
ईकारांत स्त्री० क्ली वर्ग	-इयां	-इयां			
आवृ०	२१ मिश्रित	२१ मि०, ४ अमि०		१३ मि०	
विकृतरूप					
आकारांत पु० स्त्री०	-ए	-ए, -ऐ	-ऐ		
आकारांत तथा अन्य वर्ग	-आं, -इयां, -अन, -अनि	-अन, -अनि, -इन -इयां, -अँ	-आं, -इयां	-अन, -अनि, -इन	-अन, -इन
आवृ०	कई आवृ० ११२ मि०	कई आवृ० ५५ मि० ७ अमि०	२ मि० (ब० राज०)	५१ मि०	३४ मि०

दि०— सू०रू०ए०व० तथा वि०रू० ए०व० (आकारांत को छोड़कर) में प्रायः सभी अंत वाली संज्ञाएँ अपरिवर्तित रहती हैं अथवा -०प्रत्यय युक्त रहती हैं। इनमें ओकारांत संज्ञाएँ (५) केवल ब्रज और राज० में, ओकारांत (२८) केवल ब्रज में प्रयुक्त होती हैं। अन्य अंतवाली संज्ञाएँ प्रायः समान रूप से सभी बोलियों में प्रयुक्त होती हैं। आकारांत संज्ञा अन्य बोलियों में प्रयुक्त होने पर भी खड़ीबोली में विशेष रूप से प्रयुक्त होती है। प्रातिपदिकों के दीर्घरूप विशेषतः पूर्वी हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। स्त्री० -इन ब्रज तथा पूर्वी हिन्दी और -इनों (१) केवल ब्रज में प्रयुक्त होता है। स्त्री के शेष प्रत्यय प्रायः समान रूप से सभी बोलियों में प्रयुक्त होते हैं। वि०रूप ब०व० -आं, -इयां, -अन, -अनि को डॉ० मा० प्र० गुप्त के सुझाव के अनुसार पुरानी खड़ीबोली का प्रत्यय माना गया है।

संज्ञा-संयोगात्मक रूप, सा० नं० २

२३९

	खड़ीबोली	ब्रज	राज०	अवधी	भोज०
	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०	ए०व० ब०व०
कर्त्ता		-ऐ	-आं		
कर्म-सम्प्र०	-(अ)हि, -हीं	-इ, -(अ)हि, हीं, -ऐ	-ऐ	-इ, -उ, -(अ)हि, -हीं	
करण-अपा०	-(अ)हि	-इ, -(अ)हि, -ऐ, -ऐ	-आं, -इयां	-इ, -(अ)हि, -हुं	
संबंध		-ऐ	-(अ)हि, -हं	-उ	
अधिकरण	-(अ)हि, -हीं	-इ, -ऐ, -ऐ, -ऐ, -(अ)हि, -हीं	-आं, -ऐ	-इ, -ऐ, -(अ)हि, -हीं	-इ, -ऐ
संवोधन		-औ		-(अ)हि	
आवृ०	६६ मि०	४०१ मि० ६६ (ब० राज०) १०३ अमि०	२५ अमि० ६६ (ब० राज०) ३१ अमि०	३३३ मि० ६६ अमि०	१ अमि० २८८ मि०

विशेषण-रूप

गुणवाचक ओकारांत (३) ब्रज और राज० तथा ओकारांत (३) केवल ब्रज में प्रयुक्त होते हैं। आकारांत विशेषरूप से खड़ीबोली में और सामान्यतः अन्य बोलियों में प्रयुक्त होते हैं। शेष अन्त वाले विशेष० प्रायः समान रूप से सभी बोलियों में प्रयुक्त होते हैं। केवल आकारांत के रूपान्तर प्राप्त होते हैं जिनमें सू०रू० ब०व० एं (२) तथा वि०रू० ब०व० -आं (१) केवल खड़ीबोली में और वि०रू० ए०व० -ऐ (१) केवल भोजपुरी में प्रयुक्त होते हैं। संयोगात्मक कर्म तथा अधिकरण -ऐं (४+२) केवल ब्रज में एवं वि०रू० ए०व० -ऐ (२) और कर्म, करण, अधिकरण -ऐ (७+७+८) केवल ब्रज और राजस्थानी में प्रयुक्त होते हैं, शेष रूप प्रायः समान रूप से सभी बोलियों में प्रयुक्त होते हैं। संज्ञा की भाँति इन विशेषण रूपों में भी ब्रजभाषा के रूपों की प्रधानता है।

	खड़ी	ब्रज	राज०	अवधी	भोज०
रीतिवाचक	अँसा(ऐसा), कैसा, जैसा, तैसा, अँसी, जैसी, तैसी, अँसे, कैसे	अँसौ, तँसौ, अँसी, तँसी, अँसे, कैसे, अँसै, जैसै, कैसै (संभा०)		अस, कस, जस, तस, अँसी, जैसी, तैसी	
परिमाणवाचक				केतिक, किता (संभा०), जेता, तेता	
संख्यावाचक		केती, केते, जेते, तेते, केतिक		केतक, (संभा०), केतिक, केती, केते, जेते, तेते	
आवृ०	२४ मि० ३५ अमि०	२४ मि०, १२ (ब्र०अ०) ३० अमि०		१७ मि०, १६ अमि० १२ (ब्र०अ०)	

संख्यावाचक

संख्यावाचक विशेष० में केवल क्रमवाचक और समुदायवाचक विशेष० बोली-रूपों की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हैं। शेष संख्याओं के रूप प्रायः सभी बोलियों में प्राप्त हो जाते हैं। क्रमवाचक में पहिलै, दूसै, चौथै, दसवै (१०) ब्रज के, दूसर, दूसी (३) अवधी के, छठा, दसवां (२) खड़ीबोली के तथा समुदायवाचक में दोड़, दोऊ, दोनों, पाँचौं, छौं, दसौं, चौबीसौं, तैलीसौं, सहस्रौं, लाखौं (३०) ब्रज के, तीनिउं, चारिउ, पांचउ, तैतीसउ (८) अवधी के एवं दुहं, दुहू, तिहं (७) ब्रज और अवधी दोनों के रूप कहे जा सकते हैं।

	खड़ी	ब्रज	राज०	अवधी	भोज०
कर्मसम्प्र०	को, कौ, कौं	कै, को, कौ, कौं, कउ		कउं, को	को
करण-अप०	से, सौं, सौं, ते	सूं, सें, से, सौं, सौं, तें, तें, तैं	सूं, सिउं, सेती	सनां, सवां, (सनां ?), सनि, सेती, से, सौं, ते, तें, तैं	से, सें
संबंध	का (ख०अ०राज०) की, कै	की, कै, कै, को, कौ, कौं	का, की, कै, को (मेवाड़ी)	क, कर, करि, का, की, के, केर, केरा, केरी, केरे, कै, को, केरे (संभा०)	के
अधिकरण	पर, पै, में, मैं, माहिं, महिं	पै, पै, माहिं, महं, माहीं, महिं, में, मैं, ऊपर, ऊपरि, पर, परि, (संभा०)	माहें, ऊपर, म्यानिं	मांफ, मांफि, मभार, मभारि, मभारी, मभ्रा, मभ्रांर, मंभि, मंभ, माहिं, महं, माहीं, महिं, में, मदे, ऊपर, ऊपरि, पर, परि (संभा०), पहिं (संभा०)	पर, में
आवृ०	१००१ मि०	१०२० मि०, ५६ अमि०	६२८ मि०, १४ अमि०	८७५ मि०, ५८ अमि०	१०२ मि०

टि०—अन्य कारक परसर्गीय शब्दावली प्रायः मिश्रित रूप में मिलती है।

राज०		अवधी		भोज०	
ए०व०	व०व०	ए०व०	व०व०	ए०व०	व०व०
		मैं, हउं	हम, हम		हम, हम
		मो	हम, हम	मो	हम, हम
		मोहि	हमहि		
		मोर, मोरा, मोरी, मोरै, (संभा०)	हमार, हमरा, हमरी, हमरै (संभा०)	मोर, मोरा, मोरी	हमार, हमरा, हमरी,
		१२५ मि०, १३ (अ०भो०), ६ अमि०	७१ मि०, ७ (अ०भो०), ४ अमि०	१४ मि०, १३ (अ०भो०)	६३ मि०, ७ (अ०भो०)
तू, तै (कर्तृ०)		तु, तू, तूं, तै	तुम, तुम्ह	तु, तू, तूं, तै	
			तुम, तुम्ह		
		तोहि, तोहि	तुमहि		
थारी		तोर, तोरा, तोरी	तुम्हारा, तुम्हार, तुम्हरै, तोहरि (संभा०)	तोर, तोरा, तोरी	
४१ मि०, १ अमि०		६४ मि०, ६ (अ० भो०)	२७ मि०, १५ अमि०	४८ मि०, ६ (अ०भो०)	
	ए	यह, यह, एह, एहु, एउ, एहि, इह, इहु, इहै, ई	ए, एहि	ई	
		या, इहि, इहि, इही, इही, एहि, यहि, इह	इन, इनि (संभा०), इन्ह		
	१६ मि०	२८ मि०, २ (अ०भो०), १०७ अमि०	२७ मि०, ४ अमि०	२ (अ०भो०)	

	खड़ी	ब्रज	राज०	अवधी	भोज०
रीतिवाचक	अँसा(ऐसा), कैसा, जँसा, तँसा, अँसी, जँसी, तँसी, अँसे, कैसे	अँसी, तँसी, अँसे, कैसे, जँसी, तँसी, अँसे, कैसे, जँसे, कैसे (संभा०)		अस, कस, जस, तस, अँसी, जँसी, तँसी	
परिमाणवाचक				केतिक, किता (संभा०), जेता, तेता	
संख्यावाचक		केती, केते, जेते, तेते, केतिक		केतक, (संभा०), केतिक, केती, केते, जेते, तेते	
आधु०	२४ मि० ३५ अमि०	२४ मि०, १२ (ब०अ०) ३० अमि०		१७ मि०, १६ अमि० १२ (ब०अ०)	

संख्यावाचक

संख्यावाचक विशेष० में केवल क्रमवाचक और समुदायवाचक विशेष० बोली-रूपों की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हैं। शेष संख्याओं के रूप प्रायः सभी बोलियों में प्राप्त हो जाते हैं। क्रमवाचक में पहिले, दुजे, चौथे, दसवे (१०) ब्रज के, दुसर, हुजी (३) अवधी के, छठा, दसवां (२) खड़ीबोली के तथा समुदायवाचक में दोउ, दोऊ, दोनौ, पांचौ, छौ, दसौ, चौबीसौ, तैतीसौ, सहस्रौ, लाखौ (३०) ब्रज के, तीनिउं, चारिउ, पांचउ, तैतीसउ (८) अवधी के एवं दुहं, दुहं, तिहं (७) ब्रज और अवधी दोनों के रूप कहे जा सकते हैं।

	खड़ी	ब्रज	राज०	अवधी	भोज०
कर्म-सम्प्र०	को, कौ, काँ	कै, को, कौ, कउ		कउं, को	को
करण-अपा०	से, सो, सौ, ते	सू, से, से, सौ, सौ, तें, ते, तैं	सू, सिउं, सेती	सनां, सर्वां, (सनां ?), सनि, सेती, से, सों, ते, तैं, तैं	से, से
संबंध	का (ख०अ०राज०) की, के	की, के, कै, को, कौ, काँ	का, की, कै, को (मेवाड़ी)	क, कर, करि, का, की, के, केर, केरा, केरी, केरे, कै, को, केरै (संभा०)	के
अधिकरण	पर, पै, में, में, माहि, महि	पै, पै, माहि, महं, माहीं, महि, में, में, ऊपर, ऊपरि, पर, परि, (संभा०)	माहं, ऊपर, म्यानै	मांफ, मांफि, मफार, मंफारि, मभारी, मंभा, मंभारं, मंभि, मंभै, माहि, महं, माहीं, महि, में, मदे, ऊपर, ऊपरि, पर, परि (संभा०), पहि (संभा०)	पर, में
आधु०	१००१ मि०	१०२० मि०, ५६ अमि०	६२८ मि०, १४ अमि०	८७५ मि०, ५८ अमि०	१०२ मि०

टि०—अन्य कारक परसर्गीय शब्दावली प्रायः मिश्रित रूप में मिलती है।

	खड़ी		अज	
	ए०व०	ब०व०	ए०व०	ब०व०
उ०पु० मू०रू०	मैं	हम, हंम	मैं, हौं	हम, हंम
वि०रू०	मुझ, मुज्झ	हम, हंम	मो	हम, हंम
संयो०		हमहिं	मोहिं	हमहिं
संबंध० विशेष०	मेरा, मेरी, मेरे	हमारा, हमारी, हमारे	मेरी, मेरे, मेरै (संभा०), मेरो, मेरौ	हमारे, हमारै, हमारी, हमरौ (संभा०)
आवृ०	६४ मि०, २९ अमि०	७६ मि०, ७ अमि०	१४१ मि०, ५६ अमि०	७६ मि०, ७ अमि०
म०पु०मू०रू०	तू	तुम	तू, तूं, तैं	तुम
वि०रू०	तुझ, तुज्झ, तुज्झ	तुम		तुम
संयो०	तुझै, तुझहिं,	तुमहिं	तोहि, तोहिं	तुमहिं
संबंध० विशेष०	तेरा, तेरी, तेरे	तुम्हारा, तुम्हारी	तेरी, तेरे, तेरै, तेरौ	तुम्हारी, तुम्हारै
आवृ०	२१ मि०, ३४ अमि०	३६ मि०, १ अमि०	७८ मि०, ४ अमि०	३६ मि०, २ अमि०
वि०व०नि०वा० मू०रू०	यह		यह	ए
वि०रू०	इस, इसु, इसहिं	इन	या	इन, इनि(संभा०)
आवृ०	१२ मि०, ८ अमि०	१० मि०	२८ मि०	२७ मि०

राज०		अवधी		भोज०	
ए०व०	व०व०	ए०व०	व०व०	ए०व०	व०व०
		मैं, हउं	हम, हंम		हम, हंम
		मो	हम, हंम	मो	हम, हंम
		मोहि	हमहि		
		मोर, मोरा, मोरी, मोरै, (संभा०)	हमार, हमरा, हमरी, हमरै (संभा०)	मोर, मोरा, मोरी	हमार, हमरा, हमरी,
		१२५ मि०, १३ (अ०भो०), ६ अमि०	७१ मि०, ७ (अ०भो०), ४ अमि०	१४ मि०, १३ (अ०भो०)	६८ मि०, ७ (अ०भो०)
तू, तैं (कर्तृ०)		तु, तू, तूं, तैं	तुम, तुम्ह	तु, तू, तूं, तैं	
			तुम, तुम्ह		
		तोहि, तोहि	तुमहि		
थारौ		तोर, तोरा, तोरी	तुम्हरा, तुम्हार, तुम्हरै, तोहरि (संभा०)	तोर, तोरा, तोरी	
४१ मि०, १ अमि०		६४ मि०, ६ (अ०भो०)	२७ मि०, १५ अमि०	४८ मि०, ६ (अ०भो०)	
	ए	यह, यहू, एह, एहु, एउ, एहि, इह, इहु, इहै, ई	ए, एहि	ई	
		या, इहि, इहि, इही, इहीं, एहि, यहि, यहू	इन, इनि (संभा०), इन्ह		
	१६ मि०	२८ मि०, २ (अ०भो०), १०७ अमि०	२७ मि०, ४ अमि०	२ (अ०भो०)	

	खड़ी		ब्रज	
	ए०व०	ब०व०	ए०व०	ब०व०
दू०व०नि०वा० मू०रू०	वह, सो		वह, वो, सु, सो, सोइ, सोई	ते, तेई, तेऊ, वै
वि०रू०	उस, उसही, तिस, तिसु, तिसै, तिसहि	उन, तिन	वा, ता, तासु, ताहि, ताही, तिहि, तिहि, तेहि, तेहि, तेई, वो	उन, उनि, उनहुं, तिन, तिनि, तिनहि, तिनहीं, तिनहुं
आवृ०	१५१ मि०, २१ अमि०	२६ मि०	३५५ मि०, ८ अमि०	८३ मि०, २ (ब्र० राज०)
सं०वा०मू०रू०	जो	जो	जु, जे, जो, जोई	जु, जे, जो, जोई
वि०रू०	जिस, जिमु, जिसहि	जिन	जा, जासु, जिहि, जिहि, जाहि, जेहि, जेहि	जिन, जिनि, जिनहि, जिनहुं
आवृ०	६६ मि०, ६ अमि०	६३ मि०	२२२ मि०	१५४ मि०
प्रश्नवा०मू०रू० ए०व०ब०व०	कौन, क्या		को, कौन, कहा, का, काहो, (संभा०)	
वि०रू०	किस, किसान, किसु, किसही	किन	कौन, कौनै, का, काहि	किन, किनि
आवृ०	३० मि०, ५१ अमि०	५ मि०	७१ मि०, २३ (ब्र० अ०), ११ अमि०	५ मि०, १ (ब्र०अ०)

सा० नं० ६

राज०		अवधी		भोज०	
ए०व०	ब०व०	ए०व०	ब०व०	ए०व०	ब०व०
ऊ, सो	वै	वह, ओ, ओइ, ओही, ओहु, बहि, वह, ऊ, सु, सो, सोइ, सोई	ते, तेऊ, तेई	ऊ, ओ	ते
		वा, ता, तास, तासु, ताहि, ताही, तिहि, तिहि, तेहि, तेहि, वहि, तेई	उन, उनि, उनहुं, उनहुं, तिन, तिनि, तिनिहि, तिनहीं, तिनहुं, तिन्ह, ओ		तिनि, ओ
१४७ मि०	२ (ब्र० राज०)	३५५ मि०, ३ (अ०भो०), २० अमि०	८१ मि०, २ अमि०	३(अ०भो०)	३८ मि०
जो		जु, जे, जो, जोई	जु, जे, जो, जोई	जे	जे
		जा, जासु, जिहि, जिहि, जाहि, जेहि, जेहि	जिन, जिनि, जिनिहि, जिनहुं, जिन्ह, जिन्हि		जिन्ह, जिन्हि
६६ मि०		२२२ मि०	१५४ मि०, ३(अ०भो०)	२५ मि०	२५ मि०, ३(अ०भो०)
		कवन, कवनां, को, का		कवन, कवनां कौन, का	
		कवन, का, काहि	किन, किनि	कौन	
		३६ मि०, २३(ब्र० अ०), १४(अ०भो०)	५ मि०, १ (ब्र०अ०)	४८ मि०, १४ (अ०भो०)	

खड़ी	ए० व०	ब० व०	ए० व०	ब्रज	ब० व०	ए० व०	राज०	ए० व०	ब० व०	अवधी	ए० व०	ब० व०	भोज०	ब० व०
निजवा० मू० रू०				आप, आपहि, आपि (संभा०) आपु, आपै, आपै, आपहि						आप, आपहि, आपि (संभा०) आपु, आपै, आपहि				
वि० रू०	आप, निज			आप, आप, निज						आप, आप, निज			निज	
संबंध० विशेष०	अपनां, अपनीं, आपनां, आपनीं			अपनीं, अपनै, अपनौ, आपनौ, आपनै						अपनीं, आपन, आपनीं			आपन, अपनां	
आदरवा०													रउरा	
आदृ०	३० मि०, ६ (ख० भो०), २ अमि०			२७ मि०, २७ (ब० अ०), २३ अमि०						३२ मि०, २७ (ब० अ०), ५ (अ० भो०), १ अमि०			१४ मि०, ५ (अ० भो०), ६ (ख० भो०), १ अमि०	
अनि० वा० मू० रू० प्राणिवा०	कोई			काइ, कोइ, कोई, कोऊ			कोइ			कोई				
वि० रू०	किस, किसी			काहू		किनहू, किनहू				काहू				
अप्राणिवा०				कछु, कछू						कछु, किछु, किछू, कुछु			किछु, किछू, कुछु	
आष्ट०	६० मि०, २ अमि०			६० मि०, ४० (अ० अ०), ८५ (अ० राज०), १७ अमि०		१० अमि०	८५ (अ० राज०)			६० मि०, ४० (अ० अ०), ७ (अ० भो०)			७ (अ० भो०)	

टि०— अनिश्चयवाचक शब्दावली में १५२ मि० (विशेषतः खड़ीबोली में प्रयुक्त) और, औरा, पर, पराए, सकल, सब, समूला, सारा आदि ।
 ६५ केवल ब्रज, अवधी और भोजपुरी में प्रयुक्त होते हैं ।

क्रिया

वर्तमानकालिक कृदंतों में -अत + आ, -अत + ई, -अत + ए (अता, अती, अते) तथा -अंत वाले और वर्तमान क्रिया-द्योतक रूप (७६) खड़ीबोली के हैं। -अता भोजपुरी में भी प्रयुक्त होता है। -अत (७७ + ३२) ब्रज, अवधी और भोजपुरी के हैं। भूतकालिक कृदंतों में -आ, -इया, -ई, -ए विशेषतः खड़ीबोली में, किन्तु -आ, -ई, -ए अवधी में भी प्रयुक्त होते हैं, कुल संख्या २०६ है। -इया की कुल आवृत्तियाँ १० हैं। -ई, -ए (१२३) ब्रजभाषा में भी प्रयुक्त होते हैं। -ए, -औ (१५) केवल ब्रजभाषा के रूप हैं। पूर्वकालिक क्रिया का -इ (३६०) खड़ी, ब्रज, अवधी, भोजपुरी में समान रूप से प्रयुक्त रूप है। -अइ (-इ) (१३६) विशेषतः ब्रज, अवधी और भोजपुरी में प्रयुक्त रूप है। -य, हूँ, कै, दै, लै आदि रूप (१०३) विशेषतः ब्रजभाषा में प्रयुक्त होते हैं। क्रियार्थक संज्ञा के -अन, -अन + इ, -अन + ई (६७) रूप खड़ी, ब्रज, अवधी और भोजपुरी में समान रूप से प्रयुक्त होते हैं। -अन + उ (५) ब्रज और अवधी दोनों का रूप हो सकता है। -अन + आ (४०) खड़ीबोली और भोजपुरी दोनों में प्रयुक्त होता है। -आं (१४) खड़ी और राज० में प्रयुक्त होता है। -एं-ए, -ऐ, -ऐं, -औ, -(अ) वो, -(अ) वौ (१५२) ब्रजभाषा में प्रयुक्त होते हैं। -अले, -इले, -ईले (८) केवल भोजपुरी में मिलते हैं। -(अ)व पूर्वी हिन्दी में ही प्रयुक्त होता है। कुल आवृत्तियाँ ३ हैं। -(अ) वे (४) वाले रूप खड़ी को छोड़कर शेष सभी बोलियों में प्रयुक्त होते हैं। कर्तृवाचक संज्ञा के -हार, -हारा, -हारि, -हारी, -हारे, -वार, -वारे रूप खड़ी, ब्रज तथा पूर्वी हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं जिनकी कुल आवृत्तियाँ ३५ हैं। -काजा, -हार (२) अवधी के रूप हैं तथा -हारै, -हारो, -हारी, (७) ब्रज के रूप हैं। इस प्रकार कृदंत, क्रियार्थक संज्ञा और कर्तृवाचक संज्ञा के रूपों में ब्रज के विशिष्ट रूपों की प्रधानता है। क्रिया के शेष रूपों का उल्लेख सारणी द्वारा आगे किया गया है।

	खड़ी		ब्रज	
	ए०व०	ब०व०	ए०व०	ब०व०
वर्त०नि०उ०पु०	-ऊं	-अहि	-ऊं, -औ	-अहि
म० पु०	-अहि, -अहु, -ऐ		-अहि, -ऐ, -औ	
अन्य पु०	-अहि, -इए, -इअ (संभा), -ए, -ऐ	-अंत, -अहि, -ऐ	-अइ, -अई, -अहि, -अही, -इए, -इअ (संभा०), -ए, -ऐ	-अहि, -अहीं (संभा०), -ऐ
आवृ०	११२० मि०	११६मि०, १० अमि०	११०२ मि०, १५४ (ब्र०अ०), ४८अमि०	११६ मि०, १२ (ब्र०अ०)

संभावितार्थ : -अहि, -अहि, -अइ, -अई, -इए, -इअ, -ए -ऐ आदि कई बोलियों में समानरूप से प्रयुक्त होते हैं, कुल आवृत्तियाँ २०७ हैं। -औ (२) ब्रज का रूप है।

भूत नि०उ०पु०	-आ, -इया, -ई	-ए	-औ (संभा०), -ई	-ए
म०पु०	-आ, -ई		-ई, -औ	-ए
अ०पु०	-आ (ख०अ०), -इया, -ई	-ए, -इया	-आन + औ, -इऔ, -ई, -ईन्ह + औ, -एउ, औ, औ	-ए
आवृ०	६५८ मि०, ११८ अमि०	१६२मि०, २अमि०	१४२ मि०, ११५ अमि०	१६७ मि०

नं० ८

राज०		अवधी		भोज०	
ए०व०	व०व०	ए०व०	व०व०	ए०व०	व०व०
-ऊं		-अउं	-अहिं		
-ऐ		-असि, -अहि, -अहु (संभा०), -ऐ			
-इए, -इअै, -ऐ		-अइ, -अई, -अहि, -अही, -ऐ	-अहिं, -अहीं		
१०७५ मि०		१०४८ मि०, १५४ (ब्र०अ०), ४४ अमि०	४८ मि०, १२ (ब्र०अ०)		

आज्ञार्थ : -म०पु०ए०व० के शून्य प्रत्ययांत, -अइ, -अई, -अहु, -इ, -उ, -ऐ (२६२) मिश्रित रूपों के अतिरिक्त म० पु० -असि, -अउ; उत्तम पु० -अउं (२७) अवधी के रूप हैं (-असि भोजपुरी में भी मिलता है)। आदरार्थ म० पु० -इए, -इअै, अन्य पु० -ऐ, उ०पु० -ऊं (१५७) खड़ी, ब्रज, राज० में प्रयुक्त होते हैं (-इए प्रधानतः खड़ीबोली में)। म०पु० -औ तथा उ०पु० -औ (१२०) ब्रजभाषा के रूप हैं।

		-एउं, -आ	-ए		-अल + ई
		-एहु	-ए		
		-आ (ख०अ०), -आन + (आ, ई), -इ, -ई, -ईह, -ईन + (आ, ई, उ), -उ, -एउ	-ए	-अल, -इले, -ऐला, -ला	
		६८८ मि०, ६७ अमि०	१६७ मि०	६ अमि०	१ अमि०

ए०व०	खड़ी	व०व०	ए०व०	ब्रज	व०व०	ए०व०	अवधी	व०व०	भोज०	व०व०
भविष्य नि० उ०पु०	अ०-गा, अ०-नी, ऊ०-गा	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे	-इहौ, -अ०-गी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-गे
म०पु०		-अहु-गे, -अ०-गे	-इहौ, -अ०-बौ	-अहु-गे, -अ०-गे, -अ०-बे	-अहु-गे, -अ०-गे, -अ०-बे	-अहु-गे, -अ०-गे, -अ०-बे	-अहु-गे, -अ०-गे, -अ०-बे	-अहु-गे, -अ०-गे, -अ०-बे	-अहु-गे, -अ०-गे, -अ०-बे	-अहु-गे, -अ०-गे, -अ०-बे
अ०पु०	-इहै, -अहि-गा, -ऐ-गा, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी	-इहै, -ऐ-गी, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी	-इहै, -अहि-गे, -ऐ-नी
आवृ०	३६ मि०, ३२ अमि०	३३ मि०	३६ मि०, १६ अमि०	३४ मि०	३४ मि०	२६ मि०, १ अमि०	५ मि०, २ (अ०भो०)	२६ मि०, १ अमि०	५ मि०, २ (अ०भो०)	१ मि०, २ (अ०भो०)

टि०—भविष्य निश्चयार्थ में राजस्थानी के रूप नहीं मिलते और -असी (१४) पंजाबी का रूप है अथवा उर्पयुक्त बोलियों का प्राचीन रूप भी कहा जा सकता है।

ए०व०	खड़ी	व०व०	ब्रज	व०व०	राज०	व०व०	अवधी	व०व०	भोज०	व०व०
वर्त०नि०उ०पु०	हैं	हैं	हैं	हैं	हैं	हैं	हैं	हैं	हैं	हैं
म०पु०										
अ०पु०	है, होइ, होई, रहै	है	है, होइ, होई, रहै	है	है	है	है, होइ, होई, रहै, बाटै, रहै	है, होइ, होई, रहै, बाटै, रहै	है, होइ, होई, रहै, बाटै, रहै	है, होइ, होई, रहै, बाटै, रहै
संभावनार्थ	होइ, होई, रहै	होइ, होई, रहै	होइ, होई, रहै	होइ, होई, रहै	होइ, होई, रहै	होइ, होई, रहै	होइ, होई, रहै, होवै	होइ, होई, रहै, होवै	होइ, होई, रहै, होवै	होइ, होई, रहै, होवै
क०ल०		रहते	होत	रहते	होत	रहते	होत	होत	होत	होत
आज्ञा०म०पु०			रहै	होइ, रहौ	रहै	रहै	रहै	रहै	रहै	रहै
आज्ञा०अ०पु०	रहै		रहै	रहै	रहै	रहै	रहै	रहै	रहै	रहै
आवृ०	२७१ मि०	८ मि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०	२७१ मि०, ६ मि०, १०७ मि०, ४ अमि०
भू०नि०उ०पु०	था	थे	था	थे	था	थे	था	थे	था	थे
अ०पु०	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही	था, थी, भया, हुआ, हुआ, हुआ, रही
संभा० अ०पु०	होता, होती, हुता	होते	होती	होते	होती	होते	होते	होते	होते	होते
आवृ०	२२ मि०, ८ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०	३२ मि०, ४ अमि०
भविष्य नि०	होइहै, होइगा, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी	होइहै, होइगी
आवृ०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०	३ मि०, ७ अमि०

टि०—संगुक्त क्रिया के रूपों की आवृत्तियाँ इनमें सम्मिलित नहीं हैं।

क्रियाविशेषण

२५२

क० ग्र० में प्राप्त क्रि०विशे० तथा अव्यय पद प्रायः समान रूप से सभी बोलियों में प्राप्त होते हैं, केवल जबै, तबै, इत, उत आदि ब्रजभाषा तथा इहाँ, उहवाँ, ऊहाँ, तहँ, कहँ, तहियाँ, नियरे आदि पूर्वी हिन्दी के रूप हैं। ऐसे रूपों की आवृत्तियाँ अत्यन्त सीमित हैं।

प्रयोगावृत्ति (द्वितीय प्रकार)

संज्ञा, सा० न० ११

	खड़ी	ब्रज	राज०	अवधी	भोज०
मि०	अमि०	मि०	अमि०	मि०	अमि०
मू०रू०ब०व०	२१	२१	४	१३	
वि०रू०ब०व०	११२	५५, २ (ब०राज०)	६६, २ (ब०राज०)	५१	३४
मू०रू०वि०रू० ए०व० (प्राति०)		५ (ब०राज०)	५ (ब०राज०)		
स्त्री०प्रत्यय		१			
संयोगात्मक	६६	४०१, ६६ (ब०राज०)	१२८	६६ (ब०राज०)	३३३
कुल आवृ०	२०२	५८३	१६८	१७२	३६७

विशेषण, सा० न० १२

२५३

	खड़ी	ब्रज	राज०	अवधी	भोज०
मि०	अमि०	मि०	अमि०	मि०	अमि०
गुण०मू०रू०ए०व०		३ (ब०राज०)	३	३ (ब०राज०)	
मू०रू०ब०व०	२				
वि०रू०ब०व०	१				
संयो०+वि०रू० ए०व०		२४ (ब०राज०)	६ २४ (ब०राज०)		१
सार्व०विशे०	२४	३५ १२ (ब०अ०)	३०	१७, १२ (ब०अ०)	१६
संख्यावा०विशे०		२	४०		११
कुल आवृ०	२४	४०	७६	२६	२७

परसर्ग

कुल आवृ०	१००१	१०२०	५६	६२८	१४	५८	१०२
----------	------	------	----	-----	----	----	-----

	खड़ी मि०	अमि०	मि०	ब्रज अमि०	मि०	राज० अमि०	मि०	अवधी अमि०	मि०	भोज० अमि०
उ०पु०	१७०	३६	२१७	६३				१६६, २० (अ०भो०)	१०	८२, २० (अ०भो०)
म०पु०	५७	३५	११४	६	४१		१	६१, ६ (अ०भो०)	१५	४८, ६ (अ०भो०)
नि०व०नि०वा०	२२	८	५५		१६			५५, २ (अ०भो०)	१११	२ (अ०भो०)
द्व०व०नि०वा०	१८०	२१	४३८, २ (ब०राज०)	८	१४७, २ (ब०राज०)			४३६, ३ (अ०भो०)	२२	३८, ३ (अ०भो०)
सं०व०वा०	१५६	६	३७६		६६			३७६, ३ (अ०भो०)		५०, ३ (अ०भो०)
प्र०स०वा०	३५	५१	७६, २४ (ब०अ०)	११				४४, १४ (अ०भो०), २४ (ब०अ०)		४८, १४ (अ०भो०)
नि०ज०वा०	३०, ६ (ख०भो०)	२	२७, २७ (ब०अ०)	२३				३२, ५ (अ०भो०), २७ (ब०अ०)	१	१४, ५ (अ०भो०), ६ (ख०भो०)
आ०द०र०वा०										१
अ०नि०वा०	६०	२	६०, ४० (ब०अ०), ८५ (ब०राज०)	२७	८५ (ब०राज०)			६०, ४० (ब०अ०), ७ (अ०भो०)		७ (अ०भो०)
कुल आ०वृ०	७४६	१६१	१, ५७१	१३८	३५७	१	१	१, ४७४	१५६	३४६

	खड़ी मि०	अमि०	मि०	ब्रज अमि०	मि०	राज० अमि०	मि०	अवधी अमि०	मि०	भोज० अमि०
वर्त०कु०	३५ (ख०भो०)	४१	१०६					१०६		१०६, ३५ (ख०भो०)
भुत०का०कु०	२०६	१०	१२३		१५			२०६		
पूर्व०का०क्रि०	३६०		४६६		१०३			४६६		४६६
क्रि०सं०	६७, ४० (ख०भो०), १४ (ख०राज०)		१०१, ५ (ब०अ०)	१५२	१४ (ख० राज०)			१०१, ४० (ख०भो०), ३ (अ०भो०)		१०१, ४० (ख०भो०), ३ (अ०भो०)
वर्त०वा०सं०	३५		३५		७			३५	२	
वर्त०नि०	१२३६	१०	१२२१, १६६ (ब०अ०)	४८	१०७५			१०६६, १६६ (ब०अ०)	४४	
वर्त०सं०भा०	२०७		२०७		२			२०७		२०७
वर्त०आ०जा०	४४६		४४६		१२०	१५७		१५ (अ०भो०)	२७	१५ (अ०भो०)
भुत०नि०	२३६, ५८४ (ख०अ०)	१२०	३०६	११५				२७१, ५८४ (ख०अ०)	६७	१०
भवि०नि०	६६	३२	७०	१६				३४, २ (अ०भो०)	१	१, २ (अ०भो०)
गृह्णा०क्रि०वर्त०	२७६		२८०		७	११३		१६५, ६ (अ०भो०)	२४	३२, ६ (अ०भो०)
भुत०काल	५४		३६	६१	७			३४	२२	५
भवि०काल	३		३	७				१		
कुल आ०वृ०	३, ६०७	३११	३, ६१०	५६२	१, ३५६			३, ८१६	२१७	१, ०५०

प्रयोगावृत्ति (तृतीय प्रकार)

२५६

सम्पूर्ण आवृत्तियाँ, सा० नं० १५

	खड़ी		ब्रज		राज०		अवधी		भोज०	
	मि०	अमि०	मि०	अमि०	मि०	अमि०	मि०	अमि०	मि०	अमि०
संज्ञा	२०२		५८३	१६८	१७२	३१	३६७	७०	३२२	
विशे०	२४	४०	६३	७६	२७		२६	२७		१
परसर्ग	१००१		१०२०	५६	६२८	१४	८७५	५८	१०२	
सर्व०	७४६	१६१	१५७१	१३८	३५७	१	१४७४	१५६	३४६	१
क्रिया	३६०७	३११	३६१०	५६२	१३५६		३८१६	२१७	१०५०	२३
कुल आवृ०	५,८८३	५१२	६,८४७	१,०३६	२,५४३	४६	६,५६१	५३१	१,८२३	२५

टि०—संज्ञा प्राति० के स्त्री० प्रत्यय, विशेष० प्राति०, संख्यावाची विशेष०, कृदंत, शून्यप्रत्ययांत रूपों, संयुक्त क्रिया तथा क्रियाविशेषण तथा अव्यय के वे रूप जो समान रूप से उपयुक्त पाँचों बोलियों में मिलते हैं, उनकी आवृत्तियों की गणना ऊपर की सारणी में नहीं की गई है।

३.४ : निष्कर्ष

क० ग्रं० के खड़ी, ब्रज, राजस्थानी, अवधी और भोजपुरी के व्याकरणिक रूपों की (सारणी द्वारा निर्णीत) प्रयोगावृत्तियों के सापेक्षिक आधिक्य के आधार पर स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि उसमें ब्रजभाषा के अमिश्रित (विशिष्ट) रूपों का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है। ब्रजभाषा के ये रूप किसी भी एक बोली के विशिष्ट रूपों की अपेक्षा अधिक प्रयुक्त हुए हैं और सभी बोलियों के अमिश्रित रूपों (खड़ी ५१२, राज० ४६, अवधी ५३१, भोज० २५) की सम्मिलित आवृत्तियों (१,११४) की लगभग समान (१,०३६) मात्रा में प्राप्त होते हैं। ब्रज के रूपों के साथ यदि राजस्थानी (अधिक समानता के कारण) के रूपों को भी मिला दिया जाए तो ब्रज के रूपों की संख्या कुछ और अधिक हो जाएगी।

ब्रजभाषा के अमिश्रित रूपों का प्रयोग संज्ञा, विशेषण, परसर्ग और क्रिया में सर्वाधिक हुआ है, केवल सर्वनाम में खड़ीबोली की १६१, अवधी की १५६ तथा ब्रज की १३८ आवृत्तियाँ प्राप्त हुई हैं जिनमें ब्रज की आवृत्तियाँ कुछ कम पड़ती हैं। किन्तु, इतना कम अन्तर विशेष महत्व नहीं रखता क्योंकि संपूर्ण कबीर-ग्रंथावली के अन्य सभी व्याकरणिक रूपों में प्रायः ब्रज के रूपों का ही प्रयोग अधिक मिलता है। इसे दृष्टि में रखते हुए सर्वनाम में (खड़बोली और अवधी की) कुछ आवृत्तियों के आधिक्य को विशेष महत्व नहीं देना चाहिए।

अमिश्रित रूपों के अतिरिक्त जिन दो, तीन, चार, पाँच और कई बोलियों में एक ही व्याकरणिक रूप का मिश्रण हुआ है उनमें भी ब्रजभाषा के रूपों की ही प्रधानता है। तात्पर्य यह कि जो रूप दो या दो से अधिक बोलियों में समान रूप से प्रयुक्त हुए हैं, उनमें अधिकांश रूप ब्रजभाषा में अवश्य प्रयुक्त हुए हैं, इसी कारण मिश्रित रूपों में भी ब्रज के रूपों के प्रयोग की प्रधानता है।

इस प्रकार क० ग्रं० में अमिश्रित और मिश्रित दोनों रूपों में ब्रज के रूपों का स्पष्ट रूप से सर्वाधिक प्रयोग देखकर यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि उसकी मूलाधार बोली ब्रज है।

ऐतिहासिक कालानुक्रम में विकसित तथा काव्य-रचना-परंपरा में उसके प्रयोगों को देखते हुए भी, ब्रजभाषा को मूलाधार बोली के रूप में स्वीकार करते हुए क० ग्रं० की रचना असंभव प्रतीत नहीं होती। डॉ० शिवप्रसाद सिंह ने सूरपूर्व ब्रज-भाषा में ब्रजभाषा के विकास का और काव्य-रचना में उसके प्रयोगाधिक्य का विस्तृत विवेचन किया है। उस अध्ययन को विस्तार के साथ प्रस्तुत करना पुनरावृत्ति मात्र होगी, यहाँ उनके अध्ययन के आधार पर अति संक्षेप में कुछ विशिष्ट तथा अपेक्षित तथ्यों की और संकेत कर देना अनावश्यक न होगा।

१२वीं से १४वीं शती (आधुनिक आर्य भाषाओं के संक्रांति-काल) में अवहट्ट और पिंगल साहित्यिक भाषाएँ थीं किन्तु (डॉ० सिंह के अनुसार) ब्रज का बोलचाल के रूप में प्रयुक्त एक क्षेत्रीय रूप भी रहा होगा। १४वीं शती के पूर्वार्द्ध तक ब्रज-भाषा का स्पष्ट और व्यवस्थित रूप निर्मित हो चुका था और तब से लेकर सूर के रचना-काल के पहले (क०ग्रं० के रचना-काल—छिताईवार्ता (१४६३ ई०) के बाद से १६वीं शती के पूर्वार्द्ध—तक) तक ब्रजभाषा में अनेक रचनाएँ प्राप्त होती हैं जिनमें प्रद्युम्नचरित (१३५४ ई०), जाखू मनियार की हरिचन्द पुराण (१३६६ ई०), विष्णु-दास की स्वर्गारोहण (१४३५ ई०) तथा अन्य ग्रंथ, दामो की लक्ष्मणसेन पद्मावती-कथा (१४५६ ई०), डूंगर की बावनी (१४८१ ई०), मानिक की बैतालपच्चीसी (१४८६ ई०), ठक्कुरसी की पंचेन्द्रियवेलि (१४६३ ई०), नारायणदास की छिताईवार्ता (१४६३ ई०), थैयनाथ की गीताभाषा (१५०० ई०) तथा अन्य कवियों की रचनाओं का पता चलता है^१।

संतों (१४वीं से १६वीं शती के बीच) के पहले शौरसेनी अपभ्रंश की एक सुनिश्चित काव्य-परंपरा विकसित होकर ब्रजभाषा के प्राचीन रूप पिंगल के नाम से प्रसिद्ध हो चुकी थी। इसी को तासी ने हिन्दुई नाम दिया था।

संतों की रचनाओं का जो लिखित रूप गुरुग्रंथसाहब (१६०४ ई०) में प्राप्त है उसमें ब्रज का प्राचीन रूप सुरक्षित है। ब्रजभाषा के सम्बन्ध में डॉ० शि० प्र० सिंह लिखते हैं “नामदेव की ब्रजभाषा सूर की ब्रजभाषा से स्पष्टतः पुरानी मालूम पड़ती है। नामदेव या किसी अन्य संत का पिंगल या ब्रजभाषा में रचना करना ज्यादा स्वाभाविक और कम आश्चर्यजनक है, क्योंकि ब्रजभाषा की एक सुनिश्चित और विकसित काव्य-परंपरा थी जो गुजरात से बंगाल के कवियों द्वारा समान रूप से गृहीत हुई। संतों के अतिरिक्त संगीतज्ञों और गायकों (खुसरो गोपाल, नायक, हरिदास, तानसेन, वैजूबावरा आदि) ने भी ब्रजभाषा को संगीत की दिव्यता प्रदान की। इस प्रकार १४वीं से १६वीं शती के ब्रजभाषा-साहित्य को जैन कवियों, प्राचीन कथा-वार्ता के लेखकों, प्रेमाख्यानक रचयिताओं, संतों तथा गायक कवियों ने अपनी साधना से नई भास्वरता प्रदान की। सूरदास इसी साधना के उत्तराधिकारी हुए^२”

^१ दे० पृ०, ८

विशेष — रचनाओं का रचना-काल वि० सं० और ईसवी सन् की उल्लेखन को बचाने के लिए ईसवी सन् में ही दिया गया है।

^२ वही पृ०, ६, १०

इस संदर्भ में इतना और निवेदन कर देना अनावश्यक नहीं होगा कि मध्यदेश के संतों के अतिरिक्त गुजरात के भालण, महाराष्ट्र के नामदेव, त्रिलोचन, पंजाब के गुरुनानक आदि की ब्रज-कविताएँ भी सूर के रचना-काल तक लिखी जा चुकी थीं।

कबीर एक उपदेशक संत थे, अतएव उन्होंने अपने काव्य का आधार उस भाषा या बोली को बनाया होगा जिसकी एक सुनिश्चित और विकसित परंपरा रही हो, जिसमें अनेक रचनाएँ की जा चुकी हों, जो साहित्यिकों के अतिरिक्त अन्य कलाकारों तथा हर पेशे के लोगों एवं जनसामान्य को प्रभावित कर सकती हो और जिसमें आत्मनिवेदन तथा उपदेश के लिए आवश्यक तत्व—मिठास—भी विद्यमान हो। ब्रजभाषा में ये सब गुण प्राप्त थे, अतएव कबीर ने उसे ही काव्य का आधार बनाया होगा।

श्री परशुराम चतुर्वेदी यह प्रमाणित करने के लिए कि कबीर ने ब्रजभाषा में नहीं लिखा, यह तर्क देते हैं कि जिस समय कबीर साहब का आविर्भाव हुआ था उस समय ब्रजभाषा का आधिपत्य नहीं जम सका था और साथ ही यह भी कहते हैं कि ब्रजभाषा इन दिनों पिगल कहलाकर प्रसिद्ध थी और उसका क्षेत्र पूर्वी राजस्थान से लेकर ब्रजमंडल तक था^१। चतुर्वेदीजी की दोनों बातें परस्पर विरोधी हैं। ब्रजभाषा का आधिपत्य भी नहीं जम सका था और पिगल कहला कर प्रसिद्धि भी पा चुकी थी, दोनों बातें संभव नहीं हो सकतीं। ब्रजभाषा के व्यापक प्रसार का इतिहास (जो पहले दिया गया है) भी उनके तर्क को असिद्ध करता है।

किन्तु, एक पर्यटक और उपदेशक कबीर जो किसी एक धार्मिक और दार्शनिक मतवाद के भीतर सीमित नहीं रह सके, किसी एक भाषा के घेरे में भी अपने को न रोक सके। यद्यपि मूलाधार बोली के रूप में उन्होंने ब्रज को ही स्वीकार किया फिर भी (साथ ही) मध्यदेश में विकसित हो रही अन्य बोलियों अथवा भाषाओं को भी सहायक रूप में अपने काव्य में स्थान दिया जिससे उस बोली विशेष से संबंधित लोग भी बिना किसी कटुता के उनके उपदेश को सुन सकें। पिगल या ब्रजभाषा के साथ-साथ दिल्ली-मेरठ की पश्चिमी हिन्दी, पंजाबी के प्रभाव के साथ, अरबी-फारसी शब्दों के सम्मिश्रण से जिस रेख्ता या हिन्दवी या खड़ीबोली का रूप धारण कर रही थी तथा जिसका आगे चलकर बहुत प्रचार हुआ और अधिकतर संतों ने जिसे अपने काव्य में स्थान दिया, कबीर ने भी उस बोली को सहायक रूप में अपने काव्य में स्थान दिया।

^१ कबीर-साहित्य की परख पृ०, २१७

क० ग्रं० के केवल आकारांत पदों को देखकर उसमें खड़ीबोली की प्रधानता स्वीकार करना असंगत होगा; क्योंकि एक तो, आकारांत पद ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि अन्य बोलियों में भी प्रयुक्त होते हैं, जैसे — ब्रज में घोड़ा और घोड़ो दोनों संज्ञापद प्रयुक्त होते हैं, अवधी में भी घोड़ा संज्ञापद तथा सुना, रहा, देखा आदि क्रियापद प्रयुक्त होते हैं। दूसरे, इन रूपों के अतिरिक्त बोलियों के विशिष्ट रूप भी क०ग्रं० में प्रयुक्त हुए हैं जिनमें ब्रज के रूपों की सर्वाधिक प्रधानता पहले बताई जा चुकी है। अतएव, अमिश्रित तथा मिश्रित दोनों रूपों की दृष्टि से ब्रजभाषा की ही प्रधानता और उसी को मूलधार बोली मानना संगत होगा।

खड़ी, ब्रज, अवधी आदि में जो मिश्रित रूप मिलते हैं वे पश्चिमी शौरसेनी से हिन्दी को प्राप्त हुए थे। दूसरे, १५वीं शती (खड़ी, ब्रज, अवधी आदि की प्रारंभिक अवस्था) में यद्यपि इन बोलियों का अलग-अलग निर्माण हो रहा था फिर भी एक दूसरे में बहुत निकट का संपर्क भी था, इसलिए भी बहुत से रूपों का मिश्रण हो गया। एक ही क्षेत्र में विकसित विभिन्न बोलियों में मिश्रण अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। क० ग्रं० में यह मिश्रण बहुत अधिक मिलता है। उसमें केवल एक रूप का ही प्रयोग कई बोलियों में नहीं हुआ है अपितु एक बोली के रूप के साथ दूसरी बोली के रूप का भी प्रयोग मिलता है। खड़ीबोली के सर्वनाम के साथ ब्रज की क्रिया और ब्रज के सर्वनाम के साथ खड़ीबोली की क्रिया के प्रयोग भी मिलते हैं। इससे स्पष्ट है कि कबीर के समय खड़ी और ब्रज की सीमाएँ बहुत मिली हुई थीं।

अब तक के विवेचन से स्पष्ट हो गया है कि कबीर-काव्य की मूलधार बोली आगरा-क्षेत्र की बोली है और सहायक रूप में दिल्ली-मेरठ की बोली भी प्रयुक्त हुई है। इसी प्रकार राजस्थानी और पंजाबी के प्रयोग भी देखे जा सकते हैं। किन्तु, इतने विवेचन के बाद भी कबीर-काव्य की भाषा का पूरा स्वरूप स्पष्ट नहीं होता। कबीर ने खड़ी, राजस्थानी, पंजाबी आदि की तरह अवधी को भी अपने काव्य में स्थान दिया। वे अपने जन्म-स्थान की बोली अथवा मातृभाषा के मोह को कैसे छोड़ सकते थे? दूसरे, उपदेश के लिए हिन्दी प्रदेश की अवधी तथा पूर्वी बोली का तिरस्कार भी कैसे किया जा सकता था? अतएव, उन्होंने बनारस और मगहर की बोली को भी काव्य में स्थान दिया। इसी बोली को पहले पूरबी (अमीर खुसरो) तथा उत्तरकोशली कहा गया और आज अवधी नाम से जानी जाती है। अवधी के मिश्रित अर्थात् अन्य बोलियों में भी प्रयुक्त तथा विशिष्ट दोनों रूपों का प्रयोग क० ग्रं० में प्राप्त होता है। अवधी कबीर की मातृभाषा थी, अतएव उसके शब्दों तथा व्याकरणिक रूपों का बहुतायत प्रयोग हो जाना असंभव नहीं था।

अवधी-क्षेत्र से मिला हुआ भोजपुरी का भी क्षेत्र है, अतः भोजपुरी-रूपों का भी यत्र-तत्र प्रयोग मिल जाता है, किन्तु उसके रूपों के प्रयोग अत्यल्प हैं।

अवधी यद्यपि मातृभाषा थी, फिर भी इसके माध्यम से अन्तर्प्रान्तीय अथवा विस्तृत क्षेत्र में उपदेश देना संभव नहीं था, इसलिए कबीर ने इसे अपने काव्य की मूलाधार बोली नहीं बनाया, अपितु गुजरात से बंगाल तक विस्तृत, एक दीर्घ परंपरा में विकसित, अनेक कवियों, धर्मविलम्बियों, संगीतज्ञों, गायकों, अनेक पदों के लोगों तथा अनेक संतों द्वारा अपनाई गई, मधुर, कोमल और कर्णप्रिय ब्रजभाषा को ही उन्होंने अपने काव्य की मूलाधार बोली स्वीकार किया।

कबीर-काव्य की भाषा न तो सधुक्कड़ी है, न पंचमेल, न खिचड़ी, न भोजपुरी, न पूरबी, न अपरिष्कृत, न ऊट-पटांग, न वेमेल, न वे-सिर-पैर और न दुरुह ही। उसकी मूलाधार भाषा एक है, उसका एक स्वरूप है और एक ही भाषा-शास्त्रीय प्रकृति है। वैज्ञानिक पद्धति से विचार और विवेचन किए बिना इस संबंध में अटकल-बाजी लगाना अवैज्ञानिक और असंगत होगा। कबीर की काव्य-भाषा के संबंध में डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी का पूर्व निर्धारित मत, “कबीर यद्यपि भोजपुरी इलाके के आदमी थे, किन्तु तत्कालीन हिन्दुस्तानी (हिन्दी) कवियों की तरह उन्होंने प्रायः ब्रज-भाषा का प्रयोग किया, कभी-कभी अवधी का भी। उनकी ब्रजभाषा में कभी-कभी पूर्वी (भोजपुरी) रूप भी झलक आता है, किन्तु जब वे अपनी बोली भोजपुरी में लिखते हैं तो ब्रजभाषा के तथा अन्य पश्चिमी भाषिकतत्व प्रायः दिखाई पड़ते हैं” (दे० ओ० डे० बें० लै० पृ०, ६६), बहुत कुछ संगत प्रतीत होता है।

स्पष्ट है कि क० ग्रं० की भाषा ब्रज है जिसमें पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी की बोलियों के रूपों का सहायक रूप में प्रयोग हुआ है। ‘बोली हमरी पूरबी’ का केवल आध्यात्मिक अर्थ है।

सहायक सामग्री

पाठ और टीका

१. (संपा०) डॉ० पारसनाथ तिवारी—कवीर-ग्रंथावली (हिन्दी परिषद्, प्रयाग विश्व-विद्यालय, प्रयाग, प्र० सं०, १९६१ ई०)
२. प्रो० पुष्पपालसिंह —कवीर ग्रंथावली सटीक (अशोक प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-६, प्र० सं०, १९६२ ई०)
३. (संपा०) डॉ० रामकुमार वर्मा—संत कवीर (साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद, १९५७ ई०)
४. (संपा०) डॉ० श्यामसुन्दरदास—कवीर-ग्रंथावली (ना० प्र० सं०, काशी, सं० २००८ वि०)
५. —मूलवीजक (श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बंबई-४)

व्याकरण, भाषाविज्ञान तथा समीक्षा-ग्रंथ—

६. डॉ० उदयनारायण तिवारी —हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास (लीडर प्रेस, प्रयाग, द्वि० सं०, २०१८ वि०)
भोजपुरी भाषा और साहित्य (विहार राष्ट्र-भाषा परिषद्, पटना-३, प्र० सं०, सं० २०११ वि०)
७. कामता प्रसाद गुप्त —हिन्दी व्याकरण (ना० प्र० सं०, काशी, पाँचवाँ सं०, सं० २०१४ वि०)
८. किशोरीदास बाजपेई —हिन्दी शब्दानुशासन (ना० प्र० सं०, काशी, प्र० सं०, सं० २०१४ वि०)
९. डॉ० कैलाशचन्द्र अग्रवाल —शेखावाटी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन (विश्व-विद्यालय हिन्दी प्रकाशन, लखनऊ, १९६५ ई०)
१०. डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया —ब्रजभाषा और खड़ीबोली का तुलनात्मक

अध्ययन (सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा,
१९६२ ई०)

११. जॉन बीम्स — एकम्परेटिव ग्रामर आव् द माडर्न आर्यन
लैंग्वेज आव् इण्डिया भाग २, लंदन, १८७५
ई० (उल्लेखों के आधार पर)
१२. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा — ब्रजभाषा (हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद,
प्र० सं०, २००० वि०)
हिंदी भाषा का इतिहास (हिन्दुस्तानी एकेडेमी,
इलाहाबाद, चतु० सं०, १९५३-५४ ई०)
१३. डॉ० नामवर सिंह — पृथ्वीराज रासो की भाषा (सरस्वती प्रेस,
बनारस, प्र० सं०, १९५६ ई०)
१४. परशुराम चतुर्वेदी — कबीर-साहित्य की परख, (इलाहाबाद, सं०
२०११ वि०)
१५. डॉ० प्रेमनारायण टंडन — सूर की भाषा (हिन्दी साहित्य भंडार, गया-
प्रसाद रोड, लखनऊ, नवम्बर १९५७ ई०)
१६. डॉ० प्रेमनारायण शुक्ल — संत-साहित्य (भाषा-परक अध्ययन) (ग्रंथम
प्रकाशन, रामबाग, कानपुर, प्र० सं०)
१७. डॉ० बाबूराम सक्सेना — इवोल्यूशन आव् अवधी (इण्डियन प्रेस लिमिटेड,
इलाहाबाद, १९३७ ई०)
संस्कृत-व्याकरण-प्रवेशिका, (रामनारायण लाल,
इलाहाबाद, १९५५ ई०)
दक्खिनी हिन्दी (हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहा-
बाद, १९५२ ई०)
१८. माताबदल जायसवाल — कबीर की भाषा (कैलाश ब्रदर्स, इलाहाबाद-३,
१९६५ ई०)
१९. गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया, मि० आव्
एजू० एण्ड साइ० रिसर्च, १९५८
ई० — ए बेसिक ग्रामर आव् माडर्न हिन्दी
२०. डॉ० मुरारीलाल उग्रति : — हिन्दी में प्रत्यय-विचार (विनोद पुस्तक मंदिर,
हास्पिटल रोड, आगरा, प्र० सं०, १९६४ ई०)

२१. डॉ० रमानाथ सहाय

—ए स्टडी आव् पाली वर्बर्कट्स (अप्रकाशित शोध-प्रबंध, क० मुं० हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा, जुलाई, १९६२ ई०)

२२. डॉ० रमेशचन्द्र जैन

—हिन्दी समास-रचना का अध्ययन (विनोद पुस्तक मंदिर, हास्पिटल रोड, आगरा, प्रथमावृत्ति, १९६४ ई०)

२३. पं० रामचन्द्र शुक्ल

—हि० सा० इति० (ना० प्र० सं०, काशी, सं० २००७ वि०)

२४. डॉ० रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल

—बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन (विश्व-विद्यालय हिन्दी प्रकाशन, लखनऊ, प्र० सं०, जुलाई, १९६३ ई०)

२५. डॉ० रामकुमार वर्मा

—हि० सा० आ० इति०, (तृ० सं०, १९५४ ई०)

२६. डॉ० रामकुमारी मिश्र

—बिहारी सतसई का भाषावैज्ञानिक अध्ययन, (डी० फिल्० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबंध, प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग, अगस्त १९६१ ई०) (संभवतः अब प्रकाशित)

२७. डॉ० श्रीराम शर्मा

—दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास (हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्र० सं०, १९६४ ई०)

२८. डॉ० शिवप्रसाद सिंह

—सूरपूर्व ब्रजभाषा (हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, प्रथम संस्करण, अक्टू० १९५८ ई०)

२९. डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी

—ए स्टडी आव् न्यू इण्डो-आर्यन स्पीच ट्रीटेड इन द उक्तिव्यक्तिप्रकरण (भारतीय विद्या-भवन, बंबई, प्रथम आवृत्ति, विक्रमाब्द २०१०, ख्रिस्ताब्द १९५३ ई०)

ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट आव् बेंगाली लैंग्वेज (कलकत्ता यूनिवर्सिटी, कलकत्ता, १९२६ ई०)

३०. एच० एस० केलागु

—ग्रामर आव् द हिन्दी लैंग्वेज (केगन पाल, ट्रेच प्रकाशन, ट्रवनर एण्ड कम्पनी लिमि०, ब्राडवे हाउस, ६८-७४ कार्टरलेन, ई० सी० ४, १९३८ ई०)

३१. एच०एस० गिल्ल एण्ड एच० —ए रिफरेन्स ग्रामर आव् पंजाबी (डिपार्टमेंट
ए० ग्लोसन आव् लिग्विस्टिक्स, द हार्टफोर्ड सेमिनरी फाउण्डेशन,
हार्टफोर्ड कनेक्टिकट, यू० एस० ए०, १९६३ ई०)
३२. डॉ० हरदेव बाहरी —हिन्दी सिमेन्टिक्स (भारत प्रेस पब्लिकेशन,
इलाहाबाद)

कोश-ग्रंथ (ग्रंथों के अनुसार)

३३. उर्दू-हिन्दी कोश —मुस्तफाखां, प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग,
उत्तर प्रदेश
३४. नेपाली डिक्शनरी —आर०एल० टर्नर, लंदन, को० एं०पा०ट्रें०ट्रु०
एं० को०, १९३१ ई०
३५. पाइअर सद् महार्णव —पं० हरगोविन्ददास, टी० सेठ, १सी, यूरोपियन
असीलूम लेन, कलकत्ता, १९२८ ई०
३६. वृहद् हिन्दी शब्द-कोश —ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी-१
३७. मोनियर विलियम्स डिक्स० —मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, १९५६ ई०

पत्रिकाएँ

नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका, सम्मेलन-पत्रिका, परिषद्-पत्रिका, भारतीय साहित्य,
हिन्दी-अनुशीलन, भाषा, भारती, कल्पना

लेख

कबीर-ग्रंथावली में अर्थ की दृष्टि से कुछ विचारणीय स्थल, डॉ० मा० प्र० गुप्त
भूषण के काव्य में प्रयुक्त ध्वनियों का विश्लेषण, राजमल बोरा
दोनों लेख—दे० ना० प्र० प०, काशी, वर्ष ६८, सं० २०२०, अंक १-२

सूचना—कबीर-साहित्य-संबंधी तथा भाषाशास्त्र के सैद्धान्तिक अध्ययन-संबंधी अप्रत्यक्ष
रूप से सहायक पुस्तकों की सूची नहीं दी गई है ।

संकेत-सूची

क० ग्रं०	==कबीर-ग्रंथावली
प.	==पद
सा.	==साखी
र.	==रमैनी
चौं.	==चौंतीसी रमैनी
दे०	==देखिए
पृ०	==पृष्ठ
उ० ना०	==उदय नारायण
का०प्र०	==कामता प्रसाद
मा०प्र०	==माता प्रसाद
मु०ला०	==मुरारी लाल
शि०प्र०	==शिव प्रसाद
सु०कु०	==सुनीति कुमार
क०मुं०हि०भा०	==कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी हिन्दी तथा भाषाविज्ञान
ना०प्र०स०	==नागरी प्रचारिणी सभा
ना०प्र०प०	==नागरी प्रचारिणी-पत्रिका
हि०सा०सं०	==हिन्दी साहित्य सम्मेलन
ओ०डे०बे०लै०	==ओरिजिन एण्ड डेवेलपमेण्ट आव् बेंगाली लैंग्वेज
हि०भा०इति०	==हिंदी भाषा का इतिहास
हि०भा०उ०वि०	==हिंदी भाषा का उद्गम और विकास
हि०सा०इति०	==हिंदी साहित्य का इतिहास
हि०सा०आ०इति०	==हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास
हि०प्र०वि०	==हिंदी में प्रत्यय-विचार
हि०व्या०	==हिंदी व्याकरण
प्रा०भा०आ०	==प्राचीन भारतीय आर्यभाषा, (प्रा०आ०भा०==प्राचीन आर्यभाषा)

म०भा०आ०	=मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा, (म०आ०भा०=मध्यकालीन आर्यभाषा)
आ०भा०आ०	=आधुनिक भारतीय आर्यभाषा, (आ०आ०भा०=आधुनिक-आर्यभाषा)
प्राति०	=प्रातिपदिक
मू०रू०	=मूलरूप
वि०रू०	=विकृतरूप
ए०व०	=एक वचन
ब०व०	=बहु वचन
पु०	=पुल्लिङ्ग
स्त्री०	=स्त्रीलिङ्ग
आवृ०	=आवृत्ति
उदा०	=उदाहरण
संयो०	=संयोगात्मक
वियो०	=वियोगात्मक
अव०बो०	=अवधारण बोधक
सम्प्र०	=सम्प्रदान
अपा०	=अपादान
संबो०	=संबोधन
विशे०	=विशेषण, विशेष
गुणवा०	=गुणवाचक विशेषण
सार्व०विशे०	=सार्वनामिक विशेषण
प०	=परसर्ग (प०स०=परसर्ग सहित, प०र०=परसर्ग रहित)
वा०	=वाचक
सर्व०	=सर्वनाम
उ०पु०	=उत्तम पुरुष, म०पु०=मध्यम पुरुष, अ०पु०=अन्य पुरुष
नि०व०नि०वा०	=निकटवर्ती निश्चयवाचक
दूर०व०नि०वा०	=दूरवर्ती निश्चयवाचक
अनि०वा०	=अनिश्चयवाचक
प्रे०रणा०	=प्रेरणार्थक धातु
क्रि०जा०	=क्रियाजात
कृ०	=कृदंत
कृ०रू०	=कृदन्तीय रूप

वर्त०कृ०	==वर्तमानकालिक कृदंत
भू०कृ०	==भूतकालिक कृदंत
पूर्व०क्रि०	==पूर्वकालिक क्रिया
संभा०	==संभावनार्थक, संभावनार्थ, संभावित
क्रि०सं०	==क्रियार्थक संज्ञा
कर्तृवा०सं०	==कर्तृवाचक संज्ञा
ना०धा०	==नामधातु
क्रि०विशे०	==क्रियाविशेषण
टि०	==टिप्पणी
वि०सं०	==विक्रम संवत्
ई०	==ईसवी सन्
भोज०	==भोजपुरी (भो०==भोजपुरी)
अव०	==अवधी (अ०==अवधी)
राज०	==राजस्थानी
ख०	==खड़ीबोली
ब्र०	==ब्रज
मि०	==मिश्रित
अमि०	==अमिश्रित

गु०, गुण०, दा०, दा०', दा०'', नि०, बी०, बीभ०, सा०, सासी०, सावे०
आदि प्रतियों का उल्लेख डॉ० पारसनाथ तिवारी द्वारा (क० अ० में) प्रयुक्त नामावली
से किया गया है ।

संकेत-चिह्न

()	कोष्ठक,
+	योग
-	पूर्वस्थिति का सूचक
- -	मध्यस्थिति का सूचक
-	अंत्यस्थिति का सूचक
,	हलन्त
/	अलगाव
~	मुक्त संपरिवर्ती (फ्रीवेरिएशन)
-०	शून्य प्रत्यय (शब्द-रूप)
-Ø	शून्यप्रत्यय (धातु-रूप)
=	सिद्धरूप
>	विकार (सिद्धरूप)
∞	पदग्रामिक विकल्प

शुद्धि-पत्र

पृ० सं०	पंक्ति सं०	अशुद्ध	शुद्ध
२७	७ (नीचे से)	कौनें	कौनें
२७	६ („)	कैसें	कैसें
३२	२ (ऊपर से)	प. ८३.०	प. ८३.१०
३६	१४ (नीचे से)	तीन्यं	तीन्यूं
४७	१ (ऊपर से)	प. २७.७	प. २०.७
५४	१३ („)	केहरी	केहरि
६३	८ („)	सा. २६.२.२	सा. २६.३.२
६४	१२ („)	सा. ६.२.२	सा. ६.४.२
६५	१२ („)	कलमें	कलमें
६६	१० („)	प. ६६.४	प. ७६.४
७१	२ („)	सा. २२.८.१	सा. २४.८.१
७१	१४ (नीचे से)	सा. ८.१.२.२	सा. ८.१.२.२
७४	३ (ऊपर से)	प. १२२.१२	प. १२३.१२
७४	१० („)	सा. १७.७.२	सा. १८.७.२
७४	१२ (नीचे से)	विनु बोलैं	विनु बोलैं
७४	६ („)	प. सा. ३०२०.१, प. १६.४, सा. ३०.२०.१ १८.१६.४	
८३	३ (ऊपर से)	प. ८.६	प. ६.६
८७	६ (नीचे से)	२२.४.३.१	२.२.४.३.१
९७	८ („)	प. २६.८	प. ३६.८
९९	३ (ऊपर से)	सा. १६.३१.१	सा. १६.३५.१
१०७	८ („)	औ	औ
११३	६ („)	प. ४.३.१	प. ४२.१
११५	६ (नीचे से)	आपुहि	आपुहि
११७	३ (फुटनोट के ऊपर)	सा. ६.२.२	सा. १.२.१
११९	१४ (ऊपर से)	किछू	किछू
१२२	६ (नीचे से)	सब कछू	सब कछू
१२३	२ („)	(एलोफार्म)	(एलोमार्फ)
१२८	६ (फुटनोट के ऊपर)	हंसत	हंसत
१३३	१४-२१ (ऊपर से, क्रमशः)	ऐं, Ø	-ऐं, -Ø
१३६	३ (ऊपर से)	रो+अइ	रो+अइ=रोइ
१५१	१० (नीचे से)	सा. १४.६२	सा. १४.६२

१५३	५ (ऊपर से)	प. ३३.१	प. २३.१
१५३	४ (नीचे से)	प. ६३.३	प. ६८.३
१५३	१३ (")	प. ४२.२	प. ४२.३
१५५	१० (ऊपर से)	प. १५०.७	प. ५०.७
१५६	४ (फुटनोट के ऊपर)	सा. १५.२६.२	सा. १४.२६.२
१६०	१४ (ऊपर से)	मूरिख सौं बोलै	मूरिख सौं बोलैं
१६०	१७ (")	अंम्रित लै लै नीव	अंम्रित लै लै नीव
१८४	५ (नीचे से)	नकटि	निकटि
१८५	६ (ऊपर से)	सा. ८.२६.१	सा. ६.२६.१
१८६	१४ (")	सा. २६.११.१	सा. १६.११.१
१६१	६ (")	सा. २७.६.२	सा. २८.६.२
१६१	१० (नीचे से)	जहं जहं जाइ सा.	जहं जहं जाइ, सा.
१६३	६ (")	भरपुरि	भरपूरि
१६४	७ (ऊपर से)	रांम चौ. २०.१	रांम, चौ. २०.१
२०३	२ (फुटनोट ऊपर से)	खुदाइ (दूसरा)	खुदाई
२०६	१ (ऊपर से)	ई	-ई
२१४	७ (फुटनोट के ऊपर)	प. २५.३	प. २५.२
२१८	१४-१५ (ऊपर से)	दुर+गंधि...	यह उदा० नहीं होना चाहिए
२२५	११ (")	क्रिजाजात	क्रियाजात
२२८	११ (")	क्रिया संज्ञा	क्रि० संज्ञा
२३०	८-१५ (ऊपर से क्रमशः)	प्रधान, प्रदान	प्रधान, प्रधान
२३०	२ (नीचे से)	२.७.६ :	२.८.६ :
२३२	१३ (")	धनि धनि...	पूरी पंक्ति नहीं होना चाहिए
२३४	२ (फुटनोट ऊपर से)	श्याससुन्दर	श्यामसुन्दर
२३८	अंतिम (नीचे से)	खड़ीबोली का प्रत्यय	खड़ी बोली का भी प्रत्यय
२३६	४ (नीचे से)	एं	-एं

